



ऐसे समय जब गैर एनडीए राज्य सरकारें केंद्र की योजनाओं में अरुचि दिखा रही हैं, उत्तर प्रदेश की योगी सरकार के तीसरे बजट में खासतौर से ग्रामीण क्षेत्रों से जुड़ी केंद्रीय योजनाओं को तवज्जो दी गई है।

# केंद्र के साथ-साथ



चुनाव से महज दो महीने पहले पेश किए गए उत्तर प्रदेश की योगी आदित्यनाथ सरकार के तीसरे बजट में राज्य के वित्त मंत्री राजेश अग्रवाल ने उम्मीदों के अनुरूप अनेक लोकप्रिय योजनाओं की घोषणाएं तो

की ही हैं, आधारभूत ढांचे के विकास पर भी जोर दिया है। देश के सबसे बड़े सुबे का बजट पिछले वर्ष की तुलना में 12 फीसदी बढ़कर 4.79 लाख करोड़ का हो गया है, जिनमें 21,212 करोड़ रुपये की नई योजनाएं शामिल हैं। ऐसे समय जब गैर एनडीए सरकारें केंद्र की योजनाओं में अरुचि दिखा रही हैं, योगी सरकार के बजट में खासतौर से ग्रामीण क्षेत्रों से जुड़ी केंद्रीय योजनाओं को तवज्जो दी गई है। मसलन, प्रधानमंत्री आवास योजना (ग्रामीण),

मनरेगा, स्वच्छ भारत मिशन (ग्रामीण) और आयुष्मान भारत जैसी केंद्रीय योजनाओं के लिए क्रमशः 6,240 करोड़ रुपये, 3,488 करोड़ रुपये, 6,000 करोड़ रुपये और 1,298 करोड़ रुपये के प्रावधान किए गए हैं। बजट में पूर्वांचल एक्सप्रेस, बुंदेलखंड एक्सप्रेस वे और गोरखपुर लिंक एक्सप्रेस वे के लिए करीब 32 सौ करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। बजट का एक आकर्षण बहचर्चित जेवर हवाई अड्डा भी है, जिसके लिए जमीन अधिग्रहण के वास्ते 800 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। निश्चित रूप से ये परियोजनाएं रोजगार सृजन में मददगार होंगी। अलबत्ता स्वरोजगार को बढ़ावा देने के लिए मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजना के तहत 100 करोड़ रुपये का प्रस्ताव नाकाफी लगता है। लगता है कि हाल के समय में उत्तर प्रदेश में लावारिस पशुओं को

लेकर जो समस्या सामने आई, उसे देखते हुए गौशालाओं के निर्माण का प्रस्ताव है। उत्तर प्रदेश में छात्र-छात्राओं को लैपटॉप बांटने के दिन लद गए, जिसे एक बड़ा बदलाव कहा जा सकता है। इसके बजाय योगी सरकार ने लड़िकयों के स्वास्थ्य और शिक्षा से जुड़ी कन्या सुमंगला योजना प्रस्तावित की है। विहिप ने भले ही राम मंदिर आंदोलन लोकसभा चुनाव तक टाल दिया हो, लेकिन वाराणसी, मथुरा और प्रयागराज के साथ ही अयोध्या जैसे धार्मिक स्थलों के विकास और सौंदर्यीकरण के लिए किए गए विशेष प्रावधानों के निहितार्थ समझे जा सकते हैं। चुनावी वर्ष में बजट में वित्तीय अनुशासन बनाए रखना एक बड़ी चुनौती है, जो कि इस बजट में भी दिखाई देती है, जिसका सार यह है कि इस वर्ष राज्य का राजकोषीय घाटा 46 हजार करोड़ के पार जा सकता है।

# सुधार, प्रतिनिधित्व और प्रतिरोध



निया भर में विधायिकाओं और राजनीतिक दलों में महिलाओं के लिए कोटा का प्रावधान शुरू करने से महिला सांसदों हिस्सेदारी औसतन दोगुनी

हो गई है। हालांकि कोटा अब भी विवादास्पद बना हुआ है। वास्तव में, हम चुनावी कोटा (आरक्षण) की क्षमता के बारे में बहुत कम जानते हैं और यह नहीं कह सकते कि इसके तहत समाज का प्रतिनिधित्व करने वाले समग्र रूप से बेहतर ही हैं।

आज के भारत पर ध्यान केंद्रित करते हुए मैंने यह जानने की कोशिश की कि कोटा लैंगिक रूप से समान आर्थिक सुधारों की कैसे शुरुआत करता है। मैंने पाया कि लैंगिक कोटा आर्थिक और सामाजिक समानता को स्थायी बनाने के लिए प्रोत्साहित कर सकता है, बशर्ते कि वे इन अधिकारों को आगे बढ़ाने के लिए महिलाओं को संसाधन प्रदान करें।

मेरा विशेष ध्यान विरासत की संपत्ति पर महिलाओं के अधिकारों को लेकर है। विरासत में भूमि दुनिया के ज्यादातर हिस्सों में आर्थिक स्थिरता की सबसे मजबूत गारंटी देती है। साक्ष्य बताते हैं कि जहां महिलाओं का भूमि पर अधिकार है, वहां उन्हें गृहस्थी में ज्यादा अधिकार प्राप्त होता है, उन्हें कम घरेलू हिंसा झेलनी पड़ती है, उनके बच्चे स्वस्थ होते हैं, और कृषि योग्य भूमि और अधिक प्रभावी ढंग से उनके पूरे परिवार के लिए ज्यादा अनाज के उत्पादन में सक्षम बनाता है। यानी जहां महिलाओं को विरासत में भूमि मिलती है, वहां सबको लाभ होता है। फिर भी महिलाओं को संपत्ति की खरीद और सुरक्षा के लिए विशेष बाधाओं का सामना करना पड़ता है। भारत में



महिलाओं के लिए कोटा वैश्विक राजनीति में उनके समावेश का क्रांतिकारी औजार बन गया है। भारत में कोटे का आर्थिक लाभ तो मिला है, पर यह महिलाओं को जमीन का हक हासिल करने में कब सक्षम बनाएगा?



तीन चौथाई महिलाएं कृषि से अपनी आय प्राप्त करती हैं, पर 13 फीसदी से भी कम भूमि पर उन्हें मालिकाना हक प्राप्त है।

मेरा मानना है कि कोटा महिलाओं के आर्थिक अधिकारों को लागू कर सकता है, हालांकि रूढिवादी सामाजिक मानदंडों का एक व्यापक तंत्र अक्सर (संभावित) लाभार्थियों के खिलाफ प्रतिक्रिया करता है। कम संपत्ति या संसाधनों के लिए संघर्ष हिंसा को बढ़ाता है। इसके तहत महिलाओं को विभिन्न मामलों में डराया-धमकाया जाता है, शैशवावस्था, बच्चों के जन्म के समय या वृद्धावस्था में उनकी देखभाल के प्रति अनिच्छा जताई जाती है, कन्या भ्रूण हत्या होती है, जिस कारण 2018 में भारत की आबादी से 6.3 करोड़ महिलाएं

मेरा एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह है कि राजनीतिक शक्ति का लाभ उठाने की महिलाओं की क्षमता उन्हें स्थायी सशक्तिकरण की ओर ले जाती है।

मैंने दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र भारत पर ध्यान केंद्रित किया, जहां कोटा के लिए स्पष्ट सांविधानिक जनादेश है और जो स्थानीय शासन का चेहरा बदल रहा है। पंचायत स्तर पर एक तिहाई सीटें महिला उम्मीदवारों के लिए आरक्षित हैं। पंचायत स्तर पर महिला आरक्षण के आंकड़ों का इस्तेमाल मैंने भारत में हिंदू महिलाओं को विरासती संपत्ति में समान अधिकार के ऐतिहासिक सुधार पर अमल की परीक्षा के लिए किया, इसने बेटों के साथ 40 करोड़ बेटियों को पिता की संपत्ति में अधिकार दिया। मैंने पाया कि विरासत सुधार के पूर्व, आरक्षण ने महिला विरासत की आवृत्ति और परिमाण में वृद्धि हुई। वैसी महिलाएं, जिनके पिता आरक्षण के बाद मरे, उन्हें विरासती जमीन मिलने की संभावना छह प्रतिशत बढ़ गई-महिला विरासत की आवृत्ति 10.3 फीसदी से बढ़कर 16.3 फीसदी हो गई।

1.34 अरब की आबादी वाले भारत में यह आंकड़ा महत्व रखता है, जहां ग्रामीण आबादी 92 फीसदी है और 67 फीसदी आबादी कृषि पर निर्भर परिवारों में रहती है, वहां इसका तात्पर्य है कि 2.36 करोड़ और महिलाओं को विरासत भूमि पर अधिकार मिलेगा। लेकिन विडंबना यह है कि आरक्षण सुधार के बाद बहुत कम महिलाओं को विरासत में जमीन मिली। पैतुक भूमि में समान अधिकार पाने योग्य महिलाओं में से मात्र आधे को विरासत में जमीन मिलने का अनुमान है।

सुधार के इन अप्रत्याशित परिणामों का क्या मतलब है? मेरा मानना है कि सार्वजनिक और निजी क्षेत्र में लैंगिक विभाजन देश के ज्यादातर ग्रामीण इलाकों में अब भी आम है। जैसे-जैसे महिलाओं की राजनीतिक संस्थानों में अधिक उपस्थित होती है और सार्वजनिक और निजी क्षेत्र में सौदेबाजी की शक्ति बढ़ती है, अपने बारे में सुनने और प्रतिक्रिया देने की उनकी आधिकारिक क्षमता असीम रूप से बढ जाती है। अभी तक महिलाओं का केवल एक छोटा-सा हिस्सा निजी, पैतुक संपत्ति के लिए अधिक से अधिक सार्वजनिक, राजनीतिक आवाज उठाने की क्षमता हासिल कर पाया है। मेरा अनुभव बताता है कि विवाह के समय महिलाओं के पास परिवार के संसाधनों के वितरण पर हक जताने का ज्यादा अवसर होता है। समान अधिकार प्राप्त करते समय जो महिला जितनी युवा होती है, वह विरासत की सेवा में राजनीतिक शक्ति का लाभ उठाने में उतनी ही सक्षम होती है।

इसके अलावा, मैंने राजनीतिक और सामाजिक चैनलों का परीक्षण किया, जिसके माध्यम से आरक्षण व्यवहार को प्रभावित करता है। मैंने पाया कि निर्वाचित महिला नेता राजनीतिक भागीदारी और महिलाओं की सामाजिक एकजुटता के माध्यम से आर्थिक अधिकारों के प्रभावी प्रवर्तन की मांग करने की महिलाओं की क्षमता बढ़ाती हैं।

केवल आर्थिक सुधारों के माध्यम से समानता की व्यवस्था कायम नहीं हो सकती। न ही यह स्थानीय नागरिकों के लिए व्यापक. अधिक समावेशी निर्णय को पूरी तरह से विकेंद्रीकृत करने के लिए पर्याप्त है। व्यापक स्तर पर समानता के लिए बड़े राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक समायोजन की आवश्यकता होती है।

> लेखिका न्यूयॉर्क युनिवर्सिटी, अबुधाबी में राजनीतिक विज्ञान की असिस्टेंट प्रोफेसर हैं।



### कला मानवीयता की आध्यात्मिक मदिरा है

बहुत कुछ छूट गया है, मैंने जो यातना भोगी है वह चंद शब्दों में समाप्त नहीं हो सकती। न ही मेरे प्रेम और कलाओं की तीव्रता को ही शब्दों में ढाला जा सकता है, फिर भी यह काम किया गया है। मेरे जीवन का हरेक प्रेम-प्रसंग एक उपन्यास की शक्ल ले सकता था, पर वे सभी-के-सभी एक खराब मोड़ पर खत्म हुए। मैं हमेशा उस प्रेम का इंतजार करती रही, जिसका अंत अच्छा हो और जो हमेशा बरकरार रहे- आशावादी सिनेमा की तरह! स्त्रियों के प्रति अन्याय ने मेरे मन पर गहरा



अपने मां-बाप की जिंदगी मेरे सामने थी। बस! मैंने तभी से मन में ठान लिया कि मैं विवाह के खिलाफ और स्त्रियों की दशा सुधारने के लिए संघर्ष करूंगी: कि कोई स्त्री जब चाहे बच्चे पैदा कर सके

असर डाला। मेरे

और इन बातों को लेकर कोई उंगली न उठा सके। एक बारह वर्ष की बच्ची का ऐसी बातों के बारे में सोचना अजीब लग सकता है, लेकिन मेरे हालात कुछ ऐसे थे कि मैं उम्र के आगे की बातें सोचने लगी थी। मैंने संकल्प लिया कि ऐसी अवमानना भरी स्थिति को कभी स्वीकार नहीं करूंगी और मैं अपने इस संकल्प पर कायम रही। भले ही इसके लिए मुझे खुद मां की नाराजगी और दुनिया भर के ताने झेलने पड़े।

कला मानवीयता की आध्यात्मिक मदिरा है, जो आत्मा के विकास के लिए बहुत जरूरी है। मैं समंदर के पास पैदा हुई और मैंने नोट किया कि मेरे जीवन की सभी घटनाएं समंदर किनारे ही हुई हैं। नृत्य के लिए अंगों के संचालन का पहला विचार समंदर की लहरों को देखकर ही जन्मा था। गहरे जज्बातों और तूफानी अनुभवों के क्षणों में भी मेरे मस्तिष्क ने बड़े विवेक से काम लिया है। मैंने कभी भी अपना संतुलन नहीं खोया। इंद्रियों का आनंद जितना ज्यादा गहरा और नशीला रहा, मेरे मस्तिष्क ने उतनी ही स्पष्टता से चीजों को देखा-समझा।

-सुप्रसिद्ध नृत्यांगना और नारीवादी लेखिका

हरियाली और रास्ता

जुगल, नौकरी

की सीख दी।

और वह आदमी

हताश जुगल की कहानी, जिसे एक

आदमी ने मृश्किलों से बाहर निकलने



मजिलें और भी हैं

>> ओम प्रकाश गुप्ता

# चिकित्सा मेरा पेशा है तो साहित्य मेरा जुनून

झांसी के चिरगांव में मैं एक मध्यवर्गीय परिवार में पैदा हुआ था। पढ़ाई की रुचि मुझे विज्ञान की ओर ले गई और मैंने डॉक्टरी की पढ़ाई करने के बारे में सोचा। यह जिस वक्त की बात है, तब डॉक्टरी के पेशे में पैसा कमाने के बारे में कोई सोच भी नहीं सकता था। बाद में मैं डॉक्टरी की पढ़ाई के लिए ग्वालियर चला गया। ग्वालियर के जीआर मेडिकल कॉलेज से स्नातक करने के बाद मैंने बाद में वहीं से मेडिसिन में एमडी की डिग्री ली। विलनिकल कार्डियोलॉजी मेरी रुचि का क्षेत्र है। चिकित्सक के तौर पर शुरुआती कुछ साल मैंने ग्वालियर में बिताए, फिर 1971 में मैं सेवाग्राम के महात्मा गांधी इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज में चला आया और तब से यहीं हूं। मैं जब यहां आया, तब यह चिकित्सा संस्थान नया-नया बना ही था। एक चिंकित्सक के तौर पर सेवाग्राम में बिताया गया मेरा परा जीवन बेहद घटनापूर्ण और मुझे बहुत प्रिय है। आखिर यह महात्मा गांधी और विनोबा भावे की कर्मभूमि रही है। जमनालाल बजाज की उपलब्धियों को भला कौन



मैं खुद को बेहद सौभाग्यशाली मानता हूं कि सेवाग्राम मेरी कर्मभूमि रही।

भूल सकता है! मैं खुद को बेहद सौभाग्यशाली मानता हुं कि सेवाग्राम मेरी कर्मभूमि रही। इसीलिए मैंने यह ठान लिया था कि मैं ऐसा जीवन जिऊंगा, जो सार्थक हो। चिकित्सक के तौर पर रोगियों की सेवा करते हुए और प्राध्यापक के रूप में छात्रों के बीच चिकित्सा विज्ञान की गुत्थियां सुलझाते हुए मैंने हमेशा अपने इस लक्ष्य को याद रखा। यहां रहते हुए मैंने विनोबा भावे, महात्मा गांधी की पुत्रवध् निर्मला गांधी और जमनालाल बजाज की पत्नी जानकी देवी बजाज आदि का इलाज किया। वर्ष २००२ में मैं यहां से रिटायर हुआ। लेकिन सेवानिवृत्ति के बाद भी मैं यहां अपनी सेवाएं दे रहा हूं और जब तक शरीर में शक्ति रहेगी, मैं लोगों की सेवा का यह कार्य करता रहूंगा। चिकित्सा के अलावा साहित्य में भी मेरी रुचि है। मेडिकल के क्षेत्र में आने से

पहले ही मैं साहित्य में थोड़ा-बहुत रुचि लेने लगा था। मैं राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी के गांव का हूं और उनका दूर का रिश्तेदार भी हूं। बचपन में तो उतना एहसास नहीं था, लेकिन बाद में मुझे इसका गर्व होता था कि मैं मैथिलीशरण गुप्त जी के गांव का हूं। चिरगांव में हमारे घर से करीब पचास मीटर की दूरी पर उनका घर था। बचपन में कभी-कभी मैं खेलते हुए उनके घर तक पहुंच जाता था। तब अगर वह गांव में हुए, तो बैठक में कुछ लिखते या लोगों से बात करते हुए दिखाई देते थे। बाद में मैं डॉक्टरी की पढ़ाई के लिए ग्वालियर चला गया और मैथिलीशरण जी दिल्ली में रहने लगे थे। फिर भी कुछेक अवसरों पर गांव में मुलाकात हो जाती थी, तो वह बुंदेलखंडी में पूछते थे कि क्या कर

सेवाग्राम में हर साल अगस्त में मैं मैथिलीशरण गुप्त जयंती मनाता हूं। उसमें कभी मैथिलीशरण जी की किसी रचना का नाट्यरूप का मंचन होता है, तो कभी किन्हीं का भाषण हो जाता है। गांधी की कर्मभूमि में मैथिलीशरण जी को याद करने का महत्व है, क्योंकि मैथिलीशरण जी भी अपने व्यक्तित्व में गांधीवादी ही थे। मेरा एक काव्य संग्रह प्रकाशित हो चुका है। इसके अलावा मांडुक्योपनिषद का मैंने हिंदी में पद्यानुवाद किया है। अध्यापन के अलावा रिसर्च और लेखन में मेरी रुचि है। हिंदी के अलावा मैं अंग्रेजी में भी कविताएं लिखता हूं तथा हिंदी के संवर्धन के किसी भी आयोजन से जुड़ना पसंद करता हूं, क्योंकि गांधी जी के आंदोलन में हिंदी को बढ़ावा देने का लक्ष्य भी शामिल था।

# बजट में महिलाओं का हिस्सा घटा

म तौर पर यह माना जा रहा है कि पीयूष गोयल द्वारा पेश किया गया बजट, जिसे अंतरिम बजट होना था, पर जो संपूर्ण बजट ही है, 'चुनावी

बजट' है। उसे दो महीने बादे होने वाले आम चुनाव को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है। ग्रामीण क्षेत्र में उबल रहे किसानों के गुस्से को शांत करने के लिए उन्हें 500 रुपये महीने दिए जा रहे हैं; भाजपा के परंपरागत समर्थक, शहरी मध्य वर्ग के लोगों के असंतोष को कम करने के लिए उन्हें आयकर में कुछ राहत दी गई है। लेकिन, आबादी का आधा हिस्सा, और सबसे गरीब, शोषित और असुरक्षित हिस्सा, जो महिलाओं का है, उसे तो इस बजट से निराशा ही हाथ लगी है। ऐसा लगता है कि या तो सरकार आश्वस्त है कि महिलाओं का वोट उन्हें हर हालत में मिल ही जाएगा या फिर सरकार को महिलाओं की और उनके वोटों की कोई परवाह ही नहीं है।

अगर हम किसानों को दी जा रही खैरात को ही देखें, तो निश्चित रूप से यह पुरुष किसान, जो जमीन के मालिक हैं, को ही मिलने वाली है। महिलाओं को किसानों के लिए बनाई गई तमाम योजनाओं का लाभ मिलता ही नहीं है, क्योंकि उनकी गिनती किसानों में नहीं होती। हालांकि कृषि संबंधित बहुत सारे काम वे करती हैं। ग्रामीण क्षेत्र की महिलाएं अधिकतर जमीन की मालिक नहीं होतीं। इस बजट में भूमिहीनों, बंटाईदारों और खेत मजदूरों को खैरात से भी लाभान्वित

नहीं किया गया है। बेरोजगारी की समस्या पिछले दो वर्षों में कितनी भयानक हो गई है, इसके बारे में लगातार आंकड़े आ रहे हैं। सरकार ने लगातार इन आंकड़ों को तोड़ने-

बजट में महिलाओं का हिस्सा (जेंडर बजट) पहले से घटा है। पिछले बजट में यह पूर्ण आवंटन का पांच फीसदी था और इस बजट में वह 4.7 फीसदी रह गया है। लगता है कि सरकार आश्वस्त है कि महिलाओं का वोट उन्हें हर हालत में मिल ही जाएगा।



सुभाषिनी सहगल अली

मरोड़ने और छिपाने की कोशिश की है, लेकिन समस्या की जानकारी व्याप्त है। महिलाएं बढती बेरोजगारी की सबसे बड़ी शिकार हैं। इस समस्या के समाधान के लिए एक शब्द भी इस बजट में नहीं कहा गया है। मनरेगा योजना के लिए आवंटित धन राशि में 1,000 करोड़ रुपये की कटौती की गई है, जो ग्रामीण गरीब और बेबस महिलाओं के मुंह पर चांटे के सामान है। बजट में की गई कटौती का मतलब है, बड़े पैमाने पर बहुत कष्टदायक पलायन, कुपोषण से मौतों की आशंका, महिलाओं, बच्चों और बच्चियों के देह-व्यापर में वृद्धि और गरीब परिवारों के लिए शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्रों में असहनीय बोझ। जो महिलाएं काम करती हैं, उनमें से 95 फीसदी असंगठित क्षेत्र में ही रोजगार

में लगी हैं, जहां उन्हें कोई सुरक्षा उपलब्ध नहीं है, न रोजगार की, न हिंसा से और न यौन उत्पीड़न से। बजट में 'प्रधानमंत्री श्रम योगी मानधन योजना' की घोषणा की गइ है। इसके तहते, असगाठत क्षेत्र के मजदूरा का 60 साल की उम्र के बाद, 3,000 रुपये मासिक पेंशन दी जाएगी, जिसे पाने के लिए उन्हें 100 रुपये महीने का प्रीमियम भरना पडेगा। योजना के लिए मालिकों को 500 करोड़ रुपये की सब्सिडी दी गई है। इससे योजना का चलना तो असंभव है। हां, गायों को राहत पहुंचाने के लिए 700 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं!

हमारा देश दुनिया की 'भूख तालिका' में 119 देशों में 103 नंबर पर है। करीब-करीब सबसे अधिक भूखे लोग हमारे देश में ही रहते हैं और निश्चित तौर पर इस गिनती में सबसे अधिक संख्या में महिलाएं होंगी, जो सबसे अधिक भूख और कुपोषण का शिकार हैं। इस शर्मनाक स्थिति को सुधारने के लिए बजट में किसी तरह का कोई प्रयास नहीं किया गया है। राशन की सुविधा उपलब्ध कराने, राशन की मात्रा बढ़ाने और किसी भी जरूरतमंद परिवार को राशन से वंचित न रखने की बात तो दूर, आवंटन भी नहीं बढ़ाया गया है।

कुल मिलाकर, बजट में महिलाओं का हिस्सा (जेंडर बजट) पहले से घटा है। पिछले बजट में यह पूर्ण आवंटन का पांच फीसदी था और इस बजट में वह 4.7 फीसदी रह गया है।

जुगल देशपांडे आईटी इंडस्ट्री में मशहूर नाम था। जुगल जो भी काम अपने हाथ में लेता, उसे सफलतापूर्वक पूरा करता था। वह पिछले पच्चीस साल से एक ही कंपनी में काम कर रहा था। एक दिन एक बड़ी कंपनी से उसे दोगुने वेतन पर काम का प्रस्ताव आया। उसने पुरानी कंपनी को अलविदा कहा और नई कंपनी में काम शुरू कर दिया। नई कंपनी में उसे काम भी कम करना पड़ता था। अब अपने परिवार के साथ वह ज्यादा समय बिता पाता था। इस बीच छह महीने बीत गए, लेकिन जुगल के हाथ से एक भी प्रोजेक्ट पूरा नहीं हो पाया। एक दिन कंपनी के अधिकारियों ने आपातकालीन बैठक बुलाई और बिना किसी नोटिस के जुगल को कंपनी से निकाल दिया। जुगल हैरान था। वह आईटी इंडस्ट्री का हीरो था, पर अब एकदम से बेरोजगार हो गया था। उसने कई कंपनियों में बात की, पर पिछले छह महीनों का रिकॉर्ड देखकर कोई भी कंपनी उसे लेने को तैयार नहीं हुई। इसका असर उसके रिश्तों पर भी पड़ने लगा। एक दिन एक आदमी जुगल के पास आया और बोला, मुझे एक प्रोजेक्ट तैयार करवाना है? क्या आप कर सकते हैं? जुगल तो तैयार ही था। वह आदमी बोला, पर इस वक्त आपको देने के लिए मेरे पास पैसे नहीं हैं। जैसे ही मुझे पैसे मिलेंगे, मैं आपको दे दूंगा। जुगल बोला, मैं इस वक्त कठिन दौर से गुजर रहा हूं, आप पर कैसे विश्वास करूं? वह आदमी बोला, हम सबकी जिंदगी में कभी न कभी तूफान आता है। कुछ लोग तैरना बंद कर देते हैं और कुछ तैरकर पार कर जाते हैं। मैं बस तैरने की कोशिश कर रहा हूं। जुगल ने उसका प्रोजेक्ट तैयार कर दिया। अगले

बुरे वक्त से वही आदमी निकल पाता है, जिसे अपने आप पर विश्वास हो।

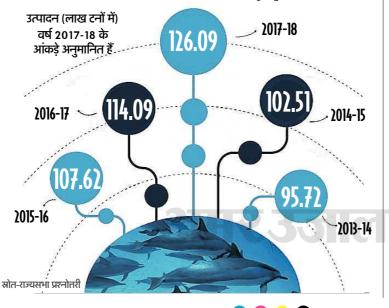
कुछ महीनों में उस आदमी का प्रोजेक्ट

हिट हो गया और उसने जुगल को अपना

पार्टनर बना लिया।

### देश में नीली क्रांति

हमारा देश दूसरा सबसे बड़ा मत्स्य उत्पादक देश है। यूपीए-एक के दौरान मत्स्य उत्पादन में 19 फीसदी, यूपीए-दो के दौरान 25.7 फीसदी और मौजूदा सरकार के प्रारंभिक चार साल के दौरान 31.7 की वृद्धि हुई। आंकड़े बताते हैं कि मौजूदा सरकार के कार्यकाल में मछली उत्पादन में काफी वृद्धि हुई है।



# और रस्सी का भ्रम

रेगिस्तानी मैदान से एक आदमी सौ ऊंटों के साथ गुजर रहा था। अंधेरा होता देखकर उस आदमी ने एक सराय में रुकने का फैसला किया। निन्यानबे ऊंटों को जमीन में खूंटियां गाड़कर उन्हें रस्सियों से बांध दिया, मगर एक ऊंट के लिए खुंटी और रस्सी कम पड़ गई। तब वहां बैठे एक फकीर ने उसे सलाह दी कि तुम खूंटी गाड़ने जैसी चोट करो और ऊंट को रस्सी से बांधने का



एहसास करवाओ। यह बात सुनकर वह हैरानी में पड़ गया, लेकिन उसके पास दूसरा कोई रास्ता नहीं था, इसलिए उसने वैसा ही किया। सुबह निन्यानबे ऊंटों की खूटियां उखाड़ी और रस्सियां खोली गईं। सभी ऊंट उठकर चल पड़े, पर वह ऊंट बैठा रहा। मालिक को आश्चर्य हुआ, अरे, यह तो बंधा नहीं है, फिर भी उठ नहीं रहा। फकीर ने फिर उसे समझाया, तुम्हारे लिए वहां खूंटी का बंधन नहीं है, पर ऊंट के

लिए है। खूंटी उखाड़ने और बेंधी रस्सी खोलने का उसे एहसास करवाओ। मालिक ने वैसा ही किया, तो ऊंट उठकर चल पड़ा। फकीर बोला, ऊंट की तरह मनुष्य भी ऐसी ही खूंटियों और रस्सियों से बंधे होते हैं, जिनका कोई अस्तित्व नहीं होता। मनुष्य अपने ही गलत दृष्टिकोण, मिथ्या सोच और विपरीत मान्यताओं की पकड से बंधा होता है। ऐसा व्यक्ति सच को झूठ और झूठ को सच मानता है। इसलिए जरूरी है कि मनुष्य का मन जब भी जागे, वह लक्ष्य का निर्धारण सबसे पहले करे।

-संकलित

### बिज़नेस स्टैंडर्ड वर्ष 11 अंक 304

### वृद्धि को महत्त्व

शक्तिकांत दास ने अपनी पहली मौद्रिक नीति समीक्षा में मौद्रिक नीति समिति (एमपीसी) के निर्णयों की जानकारी दी जो औसत आवास

भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) के गवर्नर सबसे अहम बात यह है कि यह कटौती आरबीआई के अब तक के नीतिगत रुख से अलग है। वह अब तक पूरे आकलन के बाद सख्ती की नीति अपना रहा था लेकिन अब ऋण लेने वाले आम आदमी से लेकर सरकार उसने इसे निरपेक्ष कर दिया है। दूसरे शब्दों तक सबको प्रसन्न करने वाले हैं। एमपीसी ने में कहा जाए तो आगामी 4 अप्रैल को एक 4-2 के बहमत से यह निर्णय लिया कि रीपो बार फिर दरों में कटौती की जा सकती है। दर में 25 आधार अंकों की कटौती की जाएगी। आम चुनावों को देखते हुए वह कटौती काफी

अहम साबित हो सकती है। आरबीआई के रुख में बदलाव और कटौती का यह निर्णय वर्ष के आने वाले वक्त के लिए मुद्रास्फीति के अनुमान में संशोधन के बाद आया है।

सालाना आधार पर आकलित की जाने वाली खुदरा महंगाई अक्टूबर 2018 के 3.4 फीसदी से कम होकर दिसंबर में 2.2 फीसदी रह गई। यह पिछले 18 महीनों की सबसे न्यूनतम दर है। यहां तक कि खाद्य और ईंधन वस्तुओं को निकाल दिया जाए तो शेष खुदरा महंगाई भी अक्टूबर के 6.2 फीसदी से कम होकर दिसंबर में 5.6 फीसदी रह गई। इससे भी अहम बात यह है कि मुद्रास्फीति का पूर्वानुमान भी कमजोर पड़ा है। आरबीआई के सर्वेक्षण के मुताबिक दिसंबर 2018 में आम परिवारों का मुद्रास्फीतिक अनुमान भी तीन महीने आगे के परिदृश्य से 80 आधार अंक कमजोर पड़ा। वहीं अगले 12 महीने के परिदृश्य में यह 130 आधार अंक कम हुआ। इसी प्रकार कच्चे माल की लागत के मामले में मुद्रास्फीति का उत्पादकों का आकलन तीसरी तिमाही में कम हुआ। यह जानकारी आरबीआई के औद्योगिक पूर्वानुमान सर्वेक्षण में विनिर्माण कंपनियों द्वारा दी गई है। इसके परिणामस्वरूप अगर 2019 में मॉनसून के सामान्य रहने की उम्मीद की जाए तो खुदरा महंगाई को 4 फीसदी (2 फीसदी ऊपर नीचे) रखने का लक्ष्य तय किया जाएगा। माना यही जा रहा है कि आगामी 12 महीनों के दौरान यह 2.8 फीसदी से 3.9 के दायरे में रहेगी।

आरबीआई के सीमित दायरे में रहने का लाभ यह हुआ कि आरबीआई को वृद्धि से जुड़े नीतिगत कदम उठाने का अवसर मिला है। हमारे देश में अभी भी वाणिज्यिक क्षेत्र का बैंक ऋण और वित्तीय प्रवाह व्यापक पैमाने पर नहीं है। इतना ही नहीं वैश्विक वृद्धि में आया ठहराव और व्यापारिक तनाव भी विपरीत परिस्थितियां उत्पन्न कर सकते हैं। ऐसे में भले ही आरबीआई आने वाले वर्ष के लिए वृद्धि का पूर्वानुमान नहीं बदले लेकिन उसने यह रेखांकित किया है निजी निवेश गतिविधियों को बढावा देने और निजी खपत में इजाफा करने की आवश्यकता है।

मौद्रिक नीति समीक्षा के अलावा आरबीआई गवर्नर ने ऐसे नियामकीय उपायों की भी घोषणा की जो वित्तीय बाजारों को व्यापक बनाने और उनकी गहराई बढाने में मददगार हो सकते हैं। खासतौर पर संकटग्रस्त गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के लिए उपाय घोषित किए गए। आरबीआई ने मूल निवेश कंपनियों के अलावा सभी एनबीएफसी को ऋण की आवक सुनिश्चित करने के लिए उन तक बैंकों का रेटिंग के आधार पर तय जोखिम सनिश्चित करने की बात कही है। कह सकते हैं कि ताजातरीन मौद्रिक नीति वक्तव्य आरबीआई के मुल्य स्थिरता के लक्ष्य और सरकार की उच्च आर्थिक वृद्धि की चिंताओं के बीच एक किस्म की सुसंगतता का संकेत देता है। यह देखना सुखद है क्योंकि हालिया अतीत में दोनों संस्थानों के रिश्ते बहुत सौहार्दपूर्ण नहीं रहे हैं। इस पूरी प्रक्रिया में केवल राजकोषीय फिसलन ही एक आशंका है। परंतु इस दिशा में भी किसी पेशकदमी के पहले आरबीआई प्रमाण चाहता है।



# भारत में रोजगार की वास्तविक तस्वीर

आविधक श्रम बल सर्वेक्षण के नतीजों की रोजगार और बेरोजगारी के पिछले सर्वेक्षणों से तुलना नहीं की जा सकती। इस संबंध में विस्तार से बता रहे हैं अमिताभ कांत

क अच्छे नीतिगत ढांचे के लिए उन मजबृत संस्थानों का सहयोग जरूरी होता है, जो नियमित रूप से अच्छे आंकर्डे संग्रहीत और हस्तांतरित करते हैं। मेरा अच्छे आंकड़ों में पूरा भरोसा है। ये सही समस्या की पहचान करने के लिए जरूरी हैं ताकि उसके लिए उचित समाधान खोजे जा सकें। इस समय भारत में रोजगार के हालात को लेकर बहस चल रही है। इस संदर्भ में हमें अच्छे आंकड़ों की उपलब्धता सुधारने के लिए प्रयास करने की जरूरत है ताकि कहे-सुने पर आधारित बहस को वस्तुनिष्ठ सबतों के जरिये खत्म किया जा सके। इस समय तीन परस्पर विरोधी मत हैं। पहला मत यह है कि आर्थिक वृद्धि बिना रोजगार में बढ़ोतरी के हो रही हैं, जिसका मतलब है कि भारत में रोजगार के अपर्याप्त मौके पैदा हो रहे हैं। दसरा मत पहले के विपरीत है और यह कहता है कि रोजगार कोई मुद्दा नहीं है। तीसरा मत पहले दोनों के बीच में है, जिससे मैं भी सहमत हूं। इसके मुताबिक पर्याप्त रोजगार का सृजन हो रहा है, लेकिन वास्तविक चुनौती अच्छे भुगतान वाले

गुणवत्तायुक्त रोजगार पैदा करना है। दुर्भाग्य से राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय (एनएसएसओ) द्वारा किए गए प्रायोगिक दो वर्षीय आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (पीएलएफएस) के पहले साल के आंकड़े पूरी तरह सत्यापन से पहले ही लीक हो गए। इसके बाद मीडिया रिपोर्ट अधूरे आंकडों के आधार पर ही निष्कर्ष पर पहुंच गईं, जिनसे वर्तमान हालत में कोई मदद नहीं मिली बल्कि भ्रम और बढा है।

राष्ट्रीय सांख्यिकी आयोग (एनएससी) का सदस्य होने के नाते तथ्यों को जनता के सामने लाना मेरा विशेषाधिकार है। यह रिपोर्ट न तो मुझे उपलब्ध कराई गई और न ही मंजूरी के लिए भेजी गई। यह रिपोर्ट मुझे तब उपलब्ध कराई गई, जब मैंने आंकडों के लीक होने के विवाद के बाद इसकी मांग की। इस रिपोर्ट को मेरी मंजरी नहीं मिली है। दरअसल रिपोर्ट को अंतिम रूप देने के लिए 5 दिसंबर को हुई बैठक में केवल कार्यकारी चेयरमैन पी सी मोहनन ने हिस्सा लिया था। यहां तक कि जेवी मीनाक्षी भी बैठक में मौजूद नहीं थीं। यह सर्वेक्षण पहली बार हो रहा था. इसलिए एक तय मानदंड के हिसाब से आधिकारिक आंकडे जारी करने की प्रक्रिया कडी जांच और पुष्टि से गुजरनी चाहिए। निश्चित रूप से इन आंकड़ों की समकक्ष विशेषज्ञों द्वारा समीक्षा की जानी चाहिए थी।

इस रिपोर्ट से यह धारणा बनी है कि पीएलएफएस सर्वेक्षण के नतीजे दर्शाते हैं कि भारत में बेरोजगारी पिछले रोजगार-बेरोजगारी सर्वेक्षण (ईयूएस) की तुलना में काफी बढ़ी है। पिछला ईयूएस 2011-12 में हुआ था। यह गलत है क्योंकि पिछले

सर्वेक्षणों और नए पीएलएफएस की आसानी से तलना नहीं की जा सकती। पीएलएफएस दो वर्षीय प्रायोगिक सर्वेक्षण है, जिसकी शुरुआत जुलाई 2017 में हुई थी। इसमें एक तिमाही शहरी सर्वेक्षण और एक सालाना ग्रामीण सर्वेक्षण भी शामिल है। इसका मकसद जल्दी-जल्दी श्रम बाजार के आंकड़े जारी करना है। इसलिए यह पिछले ईयूएस सर्वेक्षण से अलग था। ईयूएस सर्वेक्षण पांच साल में एक बार होता था। पीएलएफएस में इस्तेमाल की जाने वाली नमूनों की तकनीकों को अद्यतन बनाया गया है। वर्ष 2011 की जनगणना का इस्तेमाल कर एक अलग नमूने ढांचे का इस्तेमाल किया गया है और आंकड़े संग्रहीत करने की नई पद्धतियां अपनाई गई हैं।

में आपको बताता हं कि कैसे रोजगार में कमी का 2011-12 के सर्वेक्षण की तुलना पर आधारित निष्कर्ष गलत है। रोजगार के आंकडों के अलावा यह सर्वेक्षण देश की कुल आबादी के अनुमान जैसे बुनियादी जनांकिक आंकड़े भी पेश करता है।

पीएलएफएस का अनुमान है कि 2017-18 में भारत की कुल आबादी 2011-12 के ईयूएस सर्वेक्षण से कम होगी। अगर हम इन सभी तुलनाओं को बिना सही-गलत का ध्यान दिए बिना स्वीकार करते हैं तो हमें यह शीर्षक देना चाहिए कि 'छह वर्षों में भारत की आबादी घटी।' अगर व्यक्ति इस बारे में

विचार करता है कि दोनों सर्वेक्षणों की पद्धति और कवरेज समान थी और पिछले ईयुएस सर्वेक्षणों (2004-05, 2009-10 और 2011-12) के दौरान अनुमानित आबादी में देश की आधिकारिक जनसंख्या वृद्धि दर के समान बढ़ोतरी हुई है तो ऐसी कोई वजह नजर नहीं आती कि छह वर्षों में आबादी के अनुमान घटेंगे।

एक अन्य अजीब रुझान शहरीकरण की दर है। इसे देखकर लगता है कि यह 2011-12 से 2017-18 के दौरान लगभग थम गई है। यह उन विभिन्न विश्वसनीय स्रोतों के अनुमानों से ठीक विपरीत है, जो यह संकेत देते हैं कि भारत में तेजी से शहरीकरण बढ़ रहा है। भारत के तेज शहरीकरण की पुष्टि नासा की रात्रि लाइटों की उपग्रह तस्वीरों से भी होती है। क्या हम अनुभवाश्रित साक्ष्यों के बावजूद यह मानेंगे कि भारत में शहरीकरण

वर्तमान बहस में बहत से लोग यह तर्क देते हैं कि रोजगार सृजन कार्यबल की वृद्धि की तुलना में सुस्त है। हालांकि पीएलएफएस की 2011-12 के सर्वेक्षण से तुलना करने पर पता चलता है कि देश में नियोजित लोगों की कुल संख्या भी 2011-12 से हर साल 20 लाख कम हो रही है। यह अन्य उपलब्ध सामाजिक-आर्थिक आंकड़ों के बिल्कुल विपरीत है। उदाहरण के लिए इस अवधि में भारत के वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में 50 फीसदी बढ़ोतरी हुई है। आर्थिक वृद्धि हर क्षेत्र- बुनियादी ढांचे से लेकर आवास, परिवहन से लेकर स्वास्थ्य और पेशेवर सेवाओं से लेकर खुदरा तक के विस्तार की बदौलत आई है। यह समझ से बाहर है कि नियोजित कार्यबल की संख्या में कमी के साथ इतनी वृद्धि संभव है। इसका मतलब है कि पूरे भारत में वृद्धि उत्पादकता और पूंजी संग्रह की बदौलत हो रही है।

ब्रोकरेजों की स्वतंत्र रिपोर्टों में यह निष्कर्ष निकाला गया है कि भारत में अत्यधिक गरीबी में जीवनयापन करने वाले लोगों की संख्या घटकर 5 करोड़ से कम रह गई है, जो वर्ष 2011 में 26.8 करोड थी। यह बताना मुश्किल होगा कि यदि बेरोजगारी में तेजी से बढ़ोतरी हो रही है तो कैसे गरीबी में इतनी तेजी से कमी आ सकती है। अंत में, बेरोजगारी में भारी बढोतरी पीएलएफएस के अन्य नतीजों की विरोधाभासी नजर आती है। पीएलएफएस के अन्य नतीजों में सामने आया है कि विभिन्न रोजगारों में आमदनी और मेहनताना बढ़ रहा है। अगर श्रम बाजार के हालात इतने खराब हैं. जितने बेरोजगारी की दर बता रही है तो आर्थिक तर्क यही कहेगा कि मेहनताने में कमी या कम से कम स्थिरता जरूर आएगी। लेकिन मेहनताने में कोई कमी नहीं आई है। उदाहरण के लिए ग्रामीण महिलाओं की आमदनी या पारिश्रमिक जुलाई-सितंबर 2017 से लगातार हर तिमाही में बढा है। इसमें पिछली तिमाही में क्रमश: 13 फीसदी और 8 फीसदी वृद्धि दर्ज की गई है। पीएलएफएस में ग्रामीण महिलाओं की बेरोजगारी की दर सबसे अधिक बताई गई है।

(इस आलेख का दूसरा और अंतिम भाग शनिवार को प्रकाशित होगा। लेखक नीति आयोग के सीईओ हैं। ये उनके निजी विचार हैं।)

# अच्छा कारोबारी माहौल बनाने में अब भी जूझ रहा भारत

जब आप भारतीय कंपनियों के उन लोगों की फेहरिस्त बनाते हैं, जो 2017 के उत्तरार्द्ध से लेकर 2018 के आखिर तक सुर्खियों में रहे तो यह सामने आएगा कि ज्यादातर उदाहरण कप्रबंधन. उचित जांच-पड़ताल का अभाव, कारोबारी फैसलों और धोखाधड़ी के हैं। इनमें नीरव मोदी, विजय माल्या, नरेश गोयल, सुभाष चंद्रा, आईएलऐंडएफएस, चंदा कोछड़, रुइया परिवार, अनिल अंबानी, शिखा शर्मा, राणा कपूर आदि शामिल हैं।

सफलता हासिल करने वाले उद्यमियों में कुछ ही नाम शामिल हैं, जिनमें मुकेश अंबानी, ओयो के रितेश अग्रवाल और फ्लिपकार्ट के सचिन और बिन्नी बंसल (लेकिन केवल सफल बिक्री करने के लिए) आदि शामिल हैं। इसलिए क्या भारतीय

कारोबारी, प्रबंधक और बैंकर औसत दर्जे से नीचे के हैं? या वे उचित कारोबारी माहौल न होने से पीड़ित हैं, जिसमें लॉबिइंग नियमों पर भारी पड़ रही है और नीति-निर्माण में टिकाऊपन नहीं है ? आप पाएंगे कि वजह दोनों हैं। विजय माल्या, नरेश गोयल और सुभाष चंद्रा ने स्वीकार किया है उन्होंने गलत फैसले लिए। पहले दोनों व्यक्तियों के लिए नाकाम होने का मुख्य कारण लागत को नियंत्रित नहीं कर पाना रहा है, जो दनिया में किसी भी विमानन कंपनी के लिए सबसे जरूरी है। गोयल के मामले में यह कहना गलत होगा कि वह अब जिस स्थिति में हैं, उसकी वजह केवल तेल की कीमतों में बढोतरी है। उनकी लागत एवं इससे संबंधित अन्य चुनौती- कर्मचारी प्रबंधन के साथ जद्दोजहद कम से कम एक दशक से चल रही है। उन्हें ये चुनौतियां 2006 में डूबती एयर सहारा को खरीदने के फैसले की विरासत में मिली हैं।

टीवी पर चले 2008 के उस नाटक को याद कीजिए। जब उन्होंने करीब 1,900 कर्मचारियों को नौकरी से निकाल दिया था। फिर देर रात नाटकीय संवाददाता सम्मेलन के बाद बहाल किया गया। युवा प्रदर्शनकारी जेट एयरवेज की अपनी चमकीली पीली वर्दी और काले चश्मे पहनकर एकत्रित हुए। इसके बाद संवाददाता सम्मेलन में गोयल आए, जहां उन्होंने आंसू बहाए और अपनी दिवंगत मां की कसम खाते हुए कहा कि उनके दिल में



जिंदगीनामा

कनिका दत्ता

कर्मचारियों के लिए कोई दुर्भावना

माल्या ने भी एक अभिनेता

की छवि बनाई, लेकिन उनके नाटक में किंगफिशर एयरलाइंस की आपात लैंडिंग अप्रत्याशित थी। माल्या ने भी अधिग्रहण का एक गलत फैसला लिया। उन्होंने विदेशी मार्गीं पर उड़ानों के लिए सरकारी नियमों को मात देने के लिए एयर डेक्कन का अधिग्रहण किया। उनका यह फैसला भी उसी तरह गलत साबित हुआ, जिस तरह इकनॉमी क्लास के यात्रियों को बिजनेस क्लास की सुविधाएं मुहैया कराने की उनकी रणनीति। माल्या ने किंगफिशर एयरलाइंस को अपनी कारोबारी असफलता करार दिया था। मगर उनकी इस बात से बैंक सहमत नहीं हैं। बैंकों के 7,000 करोड़ रुपये से अधिक बकाया हैं। माल्या जब ऋण लेने की कोशिश कर रहे थे तब यह सवाल उठा कि कैसे विमानन को 'बुनियादी ढांचे के ऋण' का रूप दिया गया।

वर्ष 2012 में यह विमानन कंपनी बंद हो गई, जिससे हजारों कर्मचारी बेरोजगार हो गए। इसके बाद रिपोर्ट आईं कि ऋणदाता बहुत सी कारों, लक्जरी घरों और निजी जेट पर कब्जा कर रहे हैं। इससे भी बड़ी खबर यह आई कि अपना शराब का मुख्य कारोबार डियाजियो को बेचने के बाद वह ब्रिटेन भाग गए हैं। इसके बाद प्रत्यर्पण की सुनवाई शुरू हुई।

सुभाष चंद्रा के एस्सेल समूह के शेयरों में पिछले सप्ताह भारी गिरावट आई थी। चंद्रा ने खुलकर यह बताया कि वह इस हालत में क्यों पहुंचे। इन कारणों में बुनियादी ढांचे में 'गलत बोलियां, ' डी2एच के अधिग्रहण में एक अहम गलती, पारिवारिक कारोबार को बांटने के दौरान भारी लेना आईएलऐंडएफएस संकट आदि

और शामिल हैं। आईएलऐंडएफएस

संकट के बाद उनकी कर्ज लौटाने की क्षमता कम हो गई। उनके मुख्य मीडिया कारोबार के अलावा विविधीकरण भी ठीक नहीं था। लेकिन उन्होंने अपनी समस्याओं का आरोप 'विरोधी ताकतों' पर लगाया, जिन्होंने उनकी कंपनी के शेयर जानबूझकर गिराए हैं।

लागत को नियंत्रित रखना और बुद्धिमता से विविधीकरण करना प्रबंधन के बुनियादी सिद्धांत हैं। आईएलऐंडएफएस समेत बहुत से समूह इसलिए नाकाम हुए हैं क्योंकि उन्होंने बुनियादी ढांचा क्षेत्र की महंगी परियोजनाओं पर भारी खर्च कर दिया। यह क्षेत्र अप्रत्याशित सरकारी नीति के जाल में इतना जकडा हुआ है कि अब भारतीय बैंकिंग प्रणाली के ज्यादातर फंसे हुए कर्ज इसी क्षेत्र

लेकिन बुनियादी प्रबंधन के लिए उचित जांच-पड़ताल भी जरूरी है। ऐक्सिस बैंक की शिखा शर्मा और येस बैंक के राणा कपूर एक समय भारतीय बैंकिंग प्रणाली के मुख्य चेहरे थे। दोनों को केंद्रीय बैंक आरबीआई ने इन्हीं आधारों पर अपना पद छोडने को कह दिया। चंदा कोछड़ के खिलाफ जांच के दस्तावेज सार्वजनिक नहीं किए गए हैं। उनके मामले से यह तो पता चलता है कि उन्होंने हितों के टकराव के मुद्दे को पूरी गंभीरता से नहीं लिया।

सफल उद्यमियों में अग्रवाल के ओयो रूम्स की लगातार और भारी वृद्धि साफ तौर पर एक कारोबारी सफलता है। अब यह कमरों के लिहाज से भारत की सबसे बडी होटल कंपनी है। यह विदेश में भी पांव पसार रही है। मुकेश अंबानी की जियो आज भारत के दूरसंचार क्षेत्र में सबसे मजबूत ताकत है। यह दूसरे पायदान पर केवल इसलिए पहंच पाई है क्योंकि उसने भारत के प्रतिस्पर्धा और नियामकीय कानुनों की कमजोरियों का फायदा उठाया है। क्या वह नियम आधारित अन्य किसी देश में इतना दबदबा कायम करने में सफल होती ?

कुल मिलाकर तस्वीर धुंधली है। आर्थिक उदारीकरण को शुरू हुए करीब तीन दशक बीत चुके हैं। इसके बावजूद भारत एक अच्छा कारोबारी माहौल पैदा करने में जूझ रहा है। यह कारोबारियों के लिए उस काननी और नियामकीय माहौल के बारे में काफी कुछ बयां करता है, जिसमें वे काम कर रहे हैं।

श्रम कानूनों को सरल बनाना और

घातक होगा। सख्त श्रम कानून

### कानाफूसी

### दावा या हकीकत!

भारतीय राष्ट्रीय लोकदल (इनेलो) नेता अभय सिंह चौटाला ने उन रिपोर्ट को सिरे से नकार दिया जिनमें कहा गया कि बहुजन समाज पार्टी यानी बसपा के साथ उनका गठबंधन दबाव के दौर से गुजर रहा है। जींद उपचुनाव के नतीजों के बाद ऐसी अटकलें जोर पकड़ रही थीं। अटकलों पर विराम लगाते हुए उन्होंने कहा कि दोनों दल लोकसभा चुनाव साथ मिलकर लड़ेंगे। अभय, इनेलो के राष्ट्रीय अध्यक्ष और हरियाणा के पूर्व मुख्यमंत्री ओम प्रकाश चौटाला के छोटे बेटे हैं। जींद उपचुनाव में जननायक जनता पार्टी के दिग्विजय चौटाला दूसरे स्थान पर रहे जबिक इनेलो प्रत्याशी की जमानत तक जब्त हो गई। इन चुनावों में भारतीय जनता



### आपका पक्ष

### पीएम किसान योजना के पेच

केंद्र सरकार ने अंतरिम बजट में किसानों को 6,000 रुपये सालाना आय समर्थन की घोषणा की है। इस योजना का नाम पीएम किसान योजना रखा गया है। अंतरिम बजट में पीएम किसान योजना की घोषणा से किसानों की स्थिति में सुधार संभव है। वर्ष 2014 में केंद्र में भाजपा की सरकार गठन होने के बाद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने किसानों की आय दोगुनी करने की बात कही थी। इस पांच वर्षों में कितने किसानों की आय बढ़ी है इसका कोई आंकडा शायद ही हो। अंतरिम बजट में पीएम किसान योजना की घोषणा करना किसानों की आय दोगुनी करने की योजना की विफलता को दर्शाता है। अंतरिम बजट में किसानों को आय समर्थन की घोषणा तो की गई लेकिन इसके पेच अब सामने निकल कर आ रहे हैं। केंद्र सरकार द्वारा राज्यों को भेजे गए दिशानिर्देश में यह तथ्य सामने आए हैं। दिशानिर्देश



में मापदंड तय किए गए हैं। जिसके तहत सभी किसानों को इस योजना का लाभ नहीं मिल सकेगा। अगर किसान परिवार के सदस्य स्थानीय निकाय, केंद्र या राज्य सरकार के विभाग अथवा सार्वजनिक उपक्रमों में नौकरी करते हैं तो उन्हें पीएम किसान योजना का लाभ नहीं मिलेगा।

केंद्र सरकार ने अंतरिम बजट में किसानों के लिए पीएम किसान योजना की घोषणा की है

ं कर्मचारियों की पेंशन 10,000 रुपये से अधिक है, परिवार के सदस्य डॉक्टर, इंजीनियर, वकील, सीए, आर्किटेक्ट हैं तो अगर सेवानिवृत्त सरकारी ! भी इस योजना का लाभ नहीं मिल

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर

शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in

उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।

सकेगा। अगर किसान परिवार में 🗄 कि घटते रोजगार की स्थिति में भूतपूर्व सांसद, विधायक या जिला पंचायत के चेयरमैन हैं तो भी इसका लाभ नहीं मिलेगा। गौर करने वाली बात यह है कि अगर किसी किसान परिवार के सदस्य इन पदों पर हों लेकिन वे परिवार से अलग रह रहे हों तो ऐसी स्थिति में क्या वह परिवार योजना से वंचित हो जाएगा। सरकार को एकल परिवार देखना चाहिए तथा उस परिवार का वंश नहीं देखा जाना चाहिए। इससे जरूरतमंद किसानों को योजना का लाभ मिल सके।

किशोर कुमार, नोएडा

### रोजगार देने वालों को मिले प्रोत्साहन

सरकार श्रम कानुनों को सरल व लचीला बनाना चाहती है। परंतु कुछ अर्थशास्त्रियों का दबाव है से बचने के लिए उद्योग द्वारा ऑटोमैटिक मशीनों का उपयोग ज्यादा किया जा रहा है। पूंजी सघन (जिसमें श्रम के मुकाबले ज्यादा पूंजी लगे) उत्पादन पर सख्त श्रम कानून से रोजगार उत्पन्न नहीं किए जा सकते हैं। श्रम सघन उत्पादन को प्रोत्साहित करने से ही समस्या का निदान होगा। इसलिए जरूरी है कि जो उद्यमी रोजगार के ज्यादा अवसर उत्पन्न करते हैं, उन्हें प्रोत्साहित करने वाली नीतियां बनें। इस नीति से देश में श्रम सघन उत्पादन की लागत बढ़ेगी, जबकि प्रतिद्वंद्वी देशों में पूंजी सघन उत्पादन से लागत कम रहेगी। इस वास्तविक समस्या का निदान दूसरे देशों के पूंजी सघन उत्पादन पर आयात कर बढाकर अपने श्रम सघन उत्पादन पर निर्यात सब्सिडी देनी होगी। जिससे हमारा श्रम सघन उद्योग वैश्विक प्रतिस्पर्धा में टिक सकेगा।

वीरेंद्र शर्मा, चंडीगढ़



पतझड़ हुए बिना पेड़ों में फल नहीं लगते

# छिछला विमर्श

सार्वजनिक जीवन में सिक्रय कुछ लोग किस तरह राजनीतिक आक्रामकता और अभद्रता में अंतर करना भूल जाते हैं, यह तब फिर से प्रकट हुआ जब कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी पर निशाना साधने की धुन में भाषा की मर्यादा का उल्लंघन कर गए। चूंकि आम चुनाव करीब आते जा रहे हैं इसलिए राजनीतिक दलों के बीच तीखे आरोप-प्रत्यारोप का सिलसिला कायम होना समझ आता है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि एक-दूसरे के प्रति असम्मान व्यक्त किया जाए और अमर्यादित भाषा का इस्तेमाल किया जाए। यह स्पष्ट है कि राहुल गांधी को प्रधानमंत्री से तमाम शिकायतें हैं और वह उन्हें सत्ता से हटाना चाहते हैं, लेकिन उन्हें यह समझ आए तो बेहतर कि यह काम भाषा की मर्यादा लांघने से आसान नहीं होने वाला। आखिर वह प्रधानमंत्री के लिए डरपोक, डरता है, भाग जाएगा... जैसी भाषा का इस्तेमाल करके देश के लोगों को क्या संदेश देना चाहते हैं? उन्होंने केवल ऐसी शब्दावली का ही प्रयोग नहीं किया, बल्कि यह भी दिखाया कि प्रधानमंत्री किसी की चुनौती मिलने पर किस तरह मैदान छोड़कर चलते बनते हैं। इस पर मंच पर बैठे नेताओं ने तालियां बजाकर उनका उत्साह बढ़ाया। इससे यही पता चला कि राजनीतिक विमर्श का स्तर किस तरह गिरता चला जा रहा है। निःसंदेह राजनीतिक विमर्श में गंभीर गिरावट के लिए केवल राहल गांधी को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता, लेकिन क्या इससे इन्कार किया जा सकता है कि वह राजनीतिक माहौल में कटुता घोलने का काम करने में लगे हुए हैं। इसके पहले वह प्रधानमंत्री को चोर भी बता चुके हैं। क्या ऐसी भाषा उन्हें शोभा देती है?

राहुल गांधी ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को बहस के लिए जिस तरह चनौतों दी वैसी ही चनौती अन्य नेता भी दूसरे नेताओं को समय-समय पर देते रहते हैं, लेकिन उनकी दिलचस्पी इसमें कभी नहीं होती कि ऐसा हो। कोई नहीं जानता कि अपने देश में प्रमुख राजनीतिज्ञ सार्वजनिक तौर पर वैसी बहस करने के लिए तैयार क्यों नहीं जैसी कछ अन्य देशों और खासकर अमेरिका में होती है? अपने यहां बहस के नाम पर आरोप-प्रत्यारोप ही अधिक उछलते हैं। इस दौरान छल-छदम का सहारा तो लिया ही जाता है, आधे-अधुरे तथ्यों और कई बार तो झुठ के सहारे जनता को गुमराह करने और बरगलाने की कोशिश की जाती है। आखिर यह एक तथ्य है कि राफेल सौदे को विवादास्पद बताने के लिए झुठे और गढ़े हुए तथाकथित तथ्यों का सहारा लिया गया। जब बड़े नेता ऐसा करते हैं तो छोटे नेता एवं कार्यकर्ता और अधिक बेलगाम हो जाते हैं। वे सोशल मीडिया पर भद्दी और ओछी टिप्पणियां करने में एक-दूसरे से होड़ करते दिखते हैं। दुर्भाग्य से कुछ ऐसी ही होड़ अब टीवी चैनलों में भी दिखने लगी है। कुल मिलाकर संसद से लेकर सड़क तक राजनीतिक विमर्श के स्तर में गिरावट का सिलसिला कायम है। मुश्किल यह है कि लोकतंत्र की दुर्हाई देने और राजनीतिक शुचिता की बातें करने वाले नेता इसके लिए कुछ भी नहीं कर रहे कि राजनीतिक विमर्श मर्यादित तरीके से हो। अगर राजनीतिक विमर्श के स्तर को ठीक करने की परवाह नहीं की जाएगी तो भारतीय राजनीति और अधिक बदनाम ही होगी।

# और चुस्त हो पुलिस

बिहार पुलिस को राज्य के मुखिया के द्वारा संसाधनों के संदर्भ में दिए आश्वासन के बाद अब और चुस्ती से काम करने की जरूरत है। बिहार पुलिस के पहले कॉफी टेबल बुक और कैलेंडर के लोकार्पण समारोह के दौरान मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने स्पष्ट कहा कि राज्य सरकार संसाधनों की कमी नहीं होने देगी। हमलोग आपकी आकांक्षाओं को पूरा कर रहे हैं, अब आप सभी को लोगों की आकांक्षाओं के अनुरूप काम करने की जरूरत है। वाकई, मुख्यमंत्री द्वारा यह कहना बड़ी बात है। अब यह परी तरह चरितार्थ करने की जरूरत है कि बिहार पलिस सदैव लोगों के लिए तत्पर रहती है। हाल के दिनों में बढ़ती आपराधिक घटनाओं ने यह सोचने को मजबर किया है कि क्या कहीं न कहीं पलिस की चस्ती में कमी तो नहीं आई है। आए दिन यह बात भी सामने आ रही है कि जब तक आला अधिकारियों द्वारा कड़ा रुख नहीं अपनाया जाता तब तक छोटे अधिकारियों के कान पर जूं नहीं रेंगती। ग्राउंड लेवल पर पूरी तरह सतर्कता क्यों नहीं दिखती। इसी को लेकर मुख्यमंत्री ने अपनी चिंता भी जाहिर की है। उनका यह कहना सही है कि बिहार को बदनाम करने की मानसिकता वाले लोगों की कमी नहीं है। कुछ लोग नकारात्मक चीजों को ज्यादा ही प्रचारित करते हैं। यह सही है कि सब कुछ शांतिपूर्वक चलता रहता है, लेकिन अचानक कुछ ऐसी घटना हो जाती है जो असहज स्थिति पैदा कर देती है। बुधवार को मुजफ्फरपुर में लूट की इतनी बड़ी वारदात हो गई कि राज्य के बाहर कानून-व्यवस्था को लेकर एक बार फिर नकारात्मक संदेश चला गया। इसके पहले भी आरा में लूट की ऐसी ही घटना हुई थी। जनता में भी इससे सुशासन को लेकर भ्रम की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। अब पुलिस को कई आधुनिक संसाधन और सुविधाओं से लैस कर दिया गया है। सरकार ने इस मद में बजट में भी इजाफा कर दिया है। ऐसी स्थिति में सरकार व आम जनता, दोनों की पुलिस से अपेक्षा काफी बढ़ गई है। पुलिस को भी अपनी कार्यप्रणाली में बदलाव लाने की जरूरत है।

# संघीय ढांचे की आड़ में उसी पर हमला



आखिर किसी विपक्षी दल ने यह पूछना जरूरी क्यों नहीं समझा कि ममता बनर्जी भ्रष्टाचार की जांच में गड़बड़ करने के आरोपी को क्यों बचाना चाहती हैं?

या किसी घोटाले की जांच में जानबुझकर गडबडी करने वाले अधिकारी से पूछताछ करने से लोकतंत्र, संविधान और संघीय ढांचा खतरे में पड़ जाता है? पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी का तो यही मानना है, लेकिन सुप्रीम कोर्ट उनसे सहमत नहीं हुआ और कहा कि सीबीआइ कोलकाता के पुलिस आयुक्त से पूछताछ करेगी। इसके साथ ही राज्य के मुख्य सचिव, पुलिस महानिदेशक और कोलकाता पुलिस आयुक्त को सुप्रीम कोर्ट की अवमानना का नोटिस भी जारी कर दिया। इसके बावजूद ममता इसे अपनी नैतिक जीत बता रही हैं। कई विपक्षी दल भी ममता के साथ खड़े हैं। किसी ने भी यह पूछना जरूरी नहीं समझा कि ममता भ्रष्टाचार की जांच में गडबड करने के आरोपी को आखिर क्यों बचाना चाहती हैं? भारत की राजनीति एक बड़े बदलाव के दौर से गुजर रही है। जहां नेताओं का भ्रष्टाचार में लिप्त होना या भ्रष्टाचारियों का बचाव करना नया सामान्य (न्यू नॉर्मल ) हो गया है। अभी पांच साल पहले राहुल गांधी ने प्रेस कांफ्रेंस में अपनी ही सरकार के एक विधेयक की प्रतीकात्मक प्रति फाड़ दी थी। यह विधेयक भ्रष्ट और अपराधी नेताओं को तीन साल से ज्यादा की सजा होने पर चुनाव लड़ने से रोकने के सुप्रीम कोर्ट के फैसले को बदलने के लिए था। उसका तात्कालिक लाभ लालू प्रसाद यादव को मिलने वाला था। उन्हीं राहुल गांधी को अब लाल यादव से कोई परहेज नहीं है। उन्हें चिटफंड घोटाले की जांच में आरोपियों को

बचाने के लिए सुबूतों से छेड़छाड़ करने के आरोपी कोलकाता के पुलिस कमिश्नर राजीव कुमार को बचाने की ममता की कोशिश का समर्थन करने से भी गुरेज नहीं है। यह बात और है कि कांग्रेस की राज्य इकाई कह रही है कि राज्य में संवैधानिक ढांचा चरमरा गया है और वहां राष्ट्रपति शासन लगना चाहिए

कोलकाता में 19 जनवरी की रैली में जिन दलों के नेता शामिल हुए थे उन सबने ममता के समर्थन में बयान दिया। सबने संविधान, लोकतंत्र और संघीय ढांचे पर खतरे की दुहाई दी। इनमें से किसी ने कभी पश्चिम बंगाल में हो रही विरोधी दलों के कार्यकर्ताओं की हत्या, पंचायत चुनावों में विरोधी दलों के उम्मीदवारों के नामांकन तक न करने देने और विपक्षी नेताओं की सभाओं के लिए इजाजत न देने के मुद्दे पर कभी मुंह नहीं खोला। उन्हें एक घोटाले की जांच को आरोपियों के पक्ष में प्रभावित करने वाले पुलिस अधिकारी से सीबीआइ की पूछताछ पर भी एतराज है। जिस देश में पूर्व प्रधानमंत्री, तत्कालीन मुख्यमंत्री और पूर्व वायुसेना अध्यक्ष से पूछताछ हो सकती है वहां एक पुलिस अधिकारी से पूछताछ पर इतना बडा वितंडा क्यों? पूछताछ के लिए गई सीबीआइ की टीम को हिरासत में लेकर जबरन थाने ले जाया जाता है। सीबीआइ के संयुक्त निदेशक के कोलकाता स्थित घर को और सीबीआइ के दफ्तर को राज्य की पुलिस घेर लेती है, लेकिन विपक्षी दलों की नजर में यह सब संविधान और संघीय ढांचे को बचाने वाले कदम हैं। ममता बनर्जी का ऐसा करना तो समझ में आता है। यह



उनके स्वभाव और राजनीति दोनों का अभिन्न अंग है। उन्होंने ऐसा पहली बार नहीं किया है। दिसंबर 2016 में सेना के एक रूटीन अभ्यास पर उन्होंने कह दिया था कि केंद्र सरकार सेना भेजकर उनकी सरकार गिराना चाहती है। वह रात भर सचिवालय में बैठी रहीं। तब से अब में क्या बदल गया है? जाहिर है ममता तो नहीं बदली हैं। एक बड़ा बदलाव परिस्थित का है। लोकसभा चुनाव सामने हैं। ममता नहीं चाहतीं कि चिटफंड घोटाले की जांच चुनाव तक आगे बढ़े। राजीव कुमार फंसते हैं तो तृणमूल कांग्रेस के लिए बहुत बुरी खबर होगी, क्योंकि सीबीआइ ने सुप्रीम कोर्ट में कहा है कि राजीव कुमार ने अभियुक्तों के कॉल डाटा रिकार्ड ( सीडीआर) से कई नंबर मिटा दिए। सीबीआइ ने जब फोन कंपनियों से फिर से डाटा लिया तो इसका खुलासा हुआ। इसके अलावा लैपटॉप और दूसरी कई चीजें जो तलाशी में मिली थीं उन्हें सीबीआइ को नहीं सौंपा गया। सीबीआइ इसी सबका हिसाब राजीव कुमार से लेना चाहती है, जिससे वह लगातार

भाग रहे हैं। ममता उनका सुरक्षा कवच बन कर खड़ी हो गईं और पूरे मुद्दे को राजनीतिक रंग दे दिया। सुप्रीम कोर्ट ने मंगलवार को अपने फैसले से इस सुरक्षा कवच को तोड दिया है।

राजीव कुमार को बचाना तो ममता का एक मकसद था। दसरा मकसद राजनीतिक था। भाजपा विरोधी खेमे में प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवारों की होड़ मची है। तीन राज्यों में सरकार बनाने के बाद से कांग्रेस टॉप गियर में है। यह बात प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवारों ममता बनर्जी और मायावती को रास नहीं आ रही। ममता बनर्जी ने इस धरने से संदेश दिया कि राहल और मायवती जितने दलों को जोड सकते हैं उससे ज्यादा दलों को वह एक साथ ला सकती हैं। इसके लिए उन्होंने देश के संघीय ढांचे जैसे नाजुक मुद्दे को दांव पर लगा दिया। जरा इस स्थिति पर गौर कीजिए कि राज्यों में केंद्रीय एजेंसियों और बलों के लोगों को राज्य पुलिस घेर ले, सेवारत पुलिस अधिकारी नेताओं के साथ धरने पर बैठें और अखिल भारतीय सेवा के

के निर्देश को राज्य सरकार मानने से इन्कार कर दे। क्या इससे संघीय ढांचा मजबूत होगा? यह किस तरह की व्यवस्था बनाने की कोशिश हो रही है। ज्यादा चिंता इस बात से होती है कि कांग्रेस जैसी राष्ट्रीय पार्टी जो सबसे ज्यादा समय तक सत्ता में रही है और जिसके सत्ता में वापसी की संभावना हमेशा बनी रहेगी वह ऐसी राजनीति का समर्थन करती है। कल्पना कीजिए कि संप्रग के समय जब गुजरात के मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी से दो दिन नौ-नौ घंटे पूछताछ हुई उस समय गुजरात की पुलिस पूछताछ करने वालों को हिरासत में ले लेती तो क्या होता ?

आमतौर पर भाजपा के खिलाफ विपक्षी दलों के किसी भी कार्यक्रम में शामिल होने वाले वाम दल ममता के इस धरने से अलग रहे मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी (सीपीएम) के महासचिव सीताराम येचुरी ने जो कहा वह सच के काफी नजदीक है। उनके मुताबिक इस मुहे को राजनीतिक रंग देने से ममता और भाजपा दोनों को राजनीतिक लाभ हो रहा है। हालांकि उन्होंने यह भी आरोप लगाया कि इसमें दोनों की मिलीभगत है। यह तो सही है कि इस लडाई से पश्चिम बंगाल में कांग्रेस और वामदल हाशिये पर खिसकते जा रहे हैं। राज्य में अब तृणमूल और भाजपा की सीधी लड़ाई है। ममता बनर्जी इस राजनीतिक विमर्श को बंगाल तक सीमित नहीं रखना चाहती हैं। वह इसे राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य देना चाहती हैं कि भाजपा से लड़ना उन्हें ही आता है। वही भाजपा को शिकस्त दे सकती हैं, लेकिन किसी एक मुद्दे का तात्कालिक लाभ लेने के लिए या कहें कि बहती गंगा में हाथ धोने के लिए तैयार होने का मतलब कतई नहीं है कि वे सब लोग ममता बनर्जी को राष्ट्रीय स्तर पर मोदी का प्रतिद्वंद्वी मानने को तैयार हो जाएंगे। यह लड़ाई अभी शुरू हुई है।

(लेखक राजनीतिक विश्लेषक एवं वरिष्ठ

response@jagran.com

# विस्तार चाहता शिक्षा अधिकार कानून

एक खबर के अनुसार भारत सरकार कक्षा 12 तक शिक्षा के अधिकार अधिनियम (आरटीई एक्ट) को लागू करने पर विचार कर रही है। इस पर शीघ्र निर्णय लेने के पक्ष में कई कारण हैं। पहला तो यही है कि कक्षा आठ तक की शिक्षा के सार्वजनीकरण का जो महत्व 1950 में था वह अब उतना सार्थक नहीं। संयुक्त राष्ट्र द्वारा स्वीकृत सतत विकास लक्ष्य-चार के अंतर्गत सभी बच्चों को 2030 तक निःशुल्क, समकक्ष और अनिवार्य प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा उपलब्ध कराने पर सभी देश सहमत हैं।शिक्षा में अग्रणी अनेक राष्ट्र अब सभी बच्चों को कक्षा 12 की शिक्षा देने के लक्ष्य तक पहुंच चुके हैं या पहुंचने की तैयारी कर रहे हैं। इसके अलावा भारत में एक अन्य समस्या भी उभरी है, जिसका सीधा संबंध आरटीई एक्ट से है। इसके शैक्षणिक ही नहीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक संदर्भ भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। एक अप्रैल, 2010 को बड़े तामझाम के साथ लागू किए गए शिक्षा के अधिकार अधिनियम के अनुच्छेद 12(10) (सी) में 25 प्रतिशत सीटें पिछड़े और वंचित वर्ग के बच्चों के लिए आरक्षित रखे गए हैं। यह नियम केवल सरकारी स्कूलों पर ही नहीं, बल्कि निजी स्कूलों पर भी लागू किया गया। अल्पसंख्यक स्कूलों को इससे छूट मिली। निजी स्कूलों ने इससे निजात पाने के लिए सभी प्रकार के उपाय किए। वे न्यायालय भी गए। अभी भी उनमें से अनेक अपने-अपने ढंग से इसे कमजोर करने में लगे हुए हैं। बहरहाल आरटीई एक्ट के 25 प्रतिशत वाले प्रावधान के अनुसार वर्ष 2010 में कक्षा एक में भर्ती हुए बच्चे अब कक्षा आठ उत्तीर्ण कर रहे होंगे। यह स्वाभाविक ही है कि वे बच्चे कक्षा नौ में भी उसी स्कुल में पढ़ना चाहेंगे, मगर क्या यह संभव हो पाएगा? बीते दिनों दिल्ली के एक बड़े स्कुल की एक खबर प्रकाशित हुई थी, जिसके तहत उस स्कूल ने ऐसे बच्चों से स्पष्ट कह दिया है कि वे कक्षा नौ से पूरी फीस दें या अपना अलग प्रबंध कर लें। तकनीकी रूप में अधिनियम इस संबंध में कुछ नहीं कहता है कि इन बच्चों का कक्षा आठ के बाद क्या होगा? उनकी शिक्षा की जिम्मेदारी कौन लेगा ? क्या वे सरकारी स्कूलों में जाने को बाध्य होंगे और क्या उन्हें वहां प्रवेश मिल जाएगा ? स्कूल से हटाए/निकाले जाने के बाद इन बच्चों पर जो मानसिक और सांस्कृतिक तनाव आएगा, उसकी जिम्मेदारी किसकी होगी ? क्या सरकार, समाज और शिक्षा व्यवस्था इन बच्चों को मंझधार में छोड़ सकती हैं। यदि इसका समाधान शीघ्र ही नहीं निकाला गया तो 25 प्रतिशत की व्यवस्था का कोई अर्थ नहीं रह जाएगा।

कमजोर वर्ग के बच्चे और उनके माता-पिता निजी स्कूलों की फीस देने में सक्षम नहीं होंगे और इस प्रकार या तो वे स्कूल छोड़ देंगे या फिर सरकारी स्कूलों में जाकर अत्यंत क्षीण मनोबल के साथ पढ़ेंगे। सभी जानते हैं कि सरकारी और निजी स्कूलों में बंटी स्कूल शिक्षा समाज में एक नए प्रकार का वर्गभेद पैदा कर चुकी है। यह वर्ष-प्रतिवर्ष बढ़ता ही जा रहा है। वर्तमान व्यवस्था में इसे कम किए जाने की कोई संभावना दिखाई नहीं देती। वर्तमान स्थिति में वंचित वर्ग के बच्चों को आरटीई एक्ट के प्रावधान और सुविधाएं हर हालत में कक्षा 12 तक मिलने ही चाहिए। यही नहीं, इन्हें यह आश्वासन भी अभी से मिलना चाहिए कि इनमें से जो उच्च शिक्षा के लिए



शिक्षा अधिकार कानून लागू करते वक्त ही यह क्यों नहीं सोचा गया कि कक्षा आर के बाद कमजोर वर्ग के बच्चों

जगमोहन सिंह राजपुत | का क्या होगा ?



योग्य पाए जाएंगे उन्हें भी सरकार निराश नहीं करेगी और उनकी शिक्षा निर्बाध जारी रहेगी। इस समय आरटीई एक्ट में आवश्यक परिवर्तन करने के लिए अध्यादेश लाकर वंचित वर्ग के इन बच्चों को इस संबंध में आश्वस्त किया

पिछले एक दशक से स्वयंसेवी संस्था 'प्रथम' की वार्षिक रिपोर्ट पर शिक्षा के क्षेत्र में चर्चा होती रही है। इसकी रिपोर्ट की एक साख बन गई है, जो सराहनीय है। यह मीडिया द्वारा सामान्य व्यक्ति तक पहुंचती है और शिक्षा की वर्तमान स्थिति की गंभीरता पर हर स्तर पर लोगों को

आगाह कर देती है। यदि सरकारी स्कूलों में कक्षा आठ के 56 प्रतिशत बच्चे सामान्य गुणा-भाग तक नहीं कर पाते तो उनके लिए शिक्षा का अधिकार अधिनियम या संविधान-प्रदत्त अनिवार्य और निःशुल्क शिक्षा का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता। देश की युवा शक्ति और बौद्धिक क्षमता के इतने क्षय की क्या कोई भी देश अनदेखी कर सकता है? इससे भी अधिक चिंताजनक यह है कि 2008 में कक्षा आठ के 84.8 प्रतिशत छात्र कक्षा दो की पुस्तक पढ़ सकते थे, पर अब दस वर्ष बाद यह प्रतिशत 72.8 है। सरकारी स्कूलों की गुणवत्ता लगातार नीचे ही जा रही है। ऐसे अनेक तथ्य प्रतिवर्ष किसी न किसी सर्वेक्षण और अध्ययन में उभरते रहते हैं। हालांकि सरकारी स्कूलों के स्तर में सुधार की घोषणाएं लगातार होती रहती हैं, मगर लोगों को जमीन पर कोई परिवर्तन नजर नहीं आ रहा। अनेक राज्य सरकारों ने सरकारी स्कूलों में अपनी असफलता को छिपाने के लिए 'स्कूल मर्जर' के नाम पर हजारों स्कूल बंद कर दिए, क्योंकि इन स्कूलों में नामांकन लगातार कम हो रहे थे। इस 'स्कूल मर्जर' का प्रभाव प्राथमिक शिक्षा विशेषकर बालिका शिक्षा पर सकारात्मक तो नहीं ही पड़ेगा। आज तक देश में किसी भी सरकार ने बच्चों के स्कूल तक आने-जाने की निःशुल्क व्यवस्था की आवश्यकता नहीं समझी। सभी को एक-दो किमी की परिधि के अंदर कक्षा आठ तक स्कूल उपलब्ध कराने की बात लगातार कही जाती थी, पर अब इसकी चर्चा भी बंद हो गई है। शिक्षा के क्षेत्र में कई परिवर्तन ऐसे हैं जिन पर पूर्वाग्रह से हटकर सार्थक चर्चा नहीं हो पाती। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि देश अधिकांश समय चुनावी राजनीति की उठा-पटक में ही व्यस्त रहता है। जब 25 प्रतिशत स्थान स्कूलों में कमजोर वर्ग के बच्चों के लिए आरक्षित किए गए थे तभी यह क्यों नहीं सोचा गया कि उनका कक्षा आठ के बाद क्या होगा ? उन्हें स्कुल निकाल देंगे तब वे किसी भी सभ्य समाज में कैसे स्वीकृत हो सकेंगे? क्या वे बच्चे उच्च शिक्षा में जाने के अधिकारी नहीं होंगे ? उच्च शिक्षा में गुणवत्ता बढ़ाने के प्रयास अधूरे ही रहेंगे यदि कक्षा आठ के पहले की शिक्षा की गुणवत्ता लगातार गिरती ही जाएगी। यह सामान्य समझ है, जो दुर्भाग्य से नीति निर्धारकों के विश्लेषण में स्थान नहीं पाती। समस्या जमीन से जुडाव की कमी की ही है। यदि यह कमी दूर कर ली जाए तो स्कूली शिक्षा पूरी करने वाले भी आवश्यक कौशल पा सकेंगे, आत्मविश्वास से परिपूर्ण हो जाएंगे।

> (लेखक एनसीईआरटी के पूर्व निदेशक हैं) response@jagran.com



भक्ति

भिक्त में बड़ी शिक्त होती है। मनुष्य अपनी भिक्त से ईश्वर का प्रेम, आशीर्वाद और सान्निध्य प्राप्त कर सकता है। भक्ति ऐसी अमूल्य निधि है, जिसमें भक्त और भगवान एक-दूसरे के करीब आ जाते हैं। भक्ति के भवसागर में गोते लगाकर भक्त को असीम सुख की अनुभूति होती है भिक्त के बिना ईश्वर को प्राप्त नहीं किया जा सकता भिक्त भी ऐसी होनी चाहिए, जिसमें निरंतरता हो और वह पर्ण रूप से अर्पित हो, तभी भक्त भगवान को प्राप्त कर सकता है। ऐसा नहीं होना चाहिए कि हमने दो-चार दिन भगवान की भक्ति की और फिर भक्ति करनी छोड़ दी भक्त को जब तक ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती, तब तक भिक्त करनी चाहिए और ईश्वर का साक्षात्कार होने के बाद भी उसे भक्ति करते रहनी चाहिए।

बाकायदा मनुष्य को अपने जीवन के प्रत्येक क्षण ईश्वर की भक्ति करनी चाहिए। ईश्वर की भक्ति से ही उसे मुक्ति प्राप्त होती है। संत कबीरदास कहते हैं कि चौरासी लाख योनियों में भटकने के बाद तुझे यह जीवन मिला है। इसलिए इसे युं गंवाने के बजाय यदि तु अपना चित्त प्रभु में लगा दे तो तेरा मानव-जीवन सार्थक हो जाएगा। जब तक भक्त के अंतर्मन एवं विचार में सच्ची श्रद्धा जागृत नहीं होगी, तब तक वह प्रभु को प्राप्त नहीं कर सकता भिक्त मीराबाई, दयाबाई, शबरी और सुदामा की तरह होनी चाहिए, जिन्होंने अपना सब कुछ ईश्वर को अर्पित कर दिया। भिक्त ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण भाव है। इसमे किसी चीज की कामना या मांग नहीं होती, बल्कि पूर्ण समर्पण भिक्त के केंद्र में सिर्फ प्रेम होता है। यानी भिक्त तर्क पर नहीं, श्रद्धा एवं विश्वास की नींव पर टिकी होती है

कहा गया है कि मनुष्य जैसा विचार करता है, वैसा ही बन जाता है, लेकिन सत्य यह भी है कि मनुष्य की जैसी श्रद्धा होती है, उसी के अनुरूप उसका निर्माण होता है। भक्त की भक्ति में आस्था और विश्वास परमतत्व हैं और इनके अभाव में भिक्त कर्ताई संभव नहीं। सच्ची भिक्त से हमारे मन में यह विश्वास जगता है कि ईश्वर की शरण मे जाने पर हम सदा शांत, संतुष्ट और सदाचारी बने रहेंगे सच्ची भक्ति लिखने-पढ़ने या जानने का नहीं, अहसास और अनुभव करने का विषय है। एक सच्चा भक्त भक्ति से मुक्ति प्राप्त करके अपना जीवन सफल करता है।

आचार्य रामशरण शास्त्री

# विवादों में नागरिकता संशोधन विधेयक

अपने चुनावी वादे को पूरा करने की कड़ी में केंद्र में सत्तारूढ़ भारतीय जनता पार्टी दशकों पुराने भारतीय नागरिकता कानून में बदलाव का प्रयास कर रही है। विश्व भर में अपने तरह के इस इकलौते एवं अनुठे नागरिकता संशोधन विधेयक 2016 ने कई तरह के विवाद पैदा कर दिए हैं। प्रस्तावित विधेयक में आधार वर्ष को 2014 कर दिया गया है, नागरिकता बाबत न्यूनतम रिहायशी अवधि बारह साल से घटा कर छह साल कर दी गई है और अफगानिस्तान, बांग्लादेश एवं पाकिस्तान के गैर मुस्लिमों यानी हिंदू, सिख, बौद्ध, ईसाई, जैन एवं पारसियों को भारतीय नागरिकता देने का प्रावधान किया गया है। इस प्रस्तावित विधेयक में अवैध प्रवासियों की सर्वमान्य परिभाषा को भी बदलने का प्रयास किया गया है। विधेयक में मुख्य रूप से तीन देशों का नाम है, पर यदि इनके अलावा अन्य किसी देश का नागरिक अपना मूल धर्म बदल कर अपने आपको इन देशों का कह दे तो क्या होगा इस पर चुप्पी साध ली गई है।

भारत का मूल नागरिकता कानून 1955 में बना था और असम में अवैध रूप से बसे

भारत जैसे देश में जहां आबादी निरंतर बढ रही है वहां नागरिकता संबंधी नियमों को बहुत लचीला कर देना उचित नहीं है

बांग्लादेशियों को निकालने के लिए उसमें केंद्र की तत्कालीन राजीव गांधी सरकार ने 1985 में संशोधन कर आधार वर्ष 1971 कर दिया था। इसके तहत 24 मार्च, 1971 के बाद आए सभी धर्मों के विदेशियों को राज्य से निर्वासित करने का प्रावधान था। भारत जैसे देश में जहां निरंतर बढ़ रही आबादी अपने आप में एक विकराल समस्या बनती जा रही है। नागरिकता संबंधी नियमों को बहुत लचीला कर देना न केवल गलत है, बल्कि देश की संप्रभुता एवं सुरक्षा के लिए भी अत्यंत हानिकारक है।

चीन, अमेरिका, कनाडा, फ्रांस, स्पेन आदि अधिकांश देशों में नागरिकता संबंधी कानून न केवल व्यावसायिक हैं, बल्कि जरूरत से ज्यादा सख्त हैं और उनमें तमाम तरह की बंदिशें एवं चरण हैं। सामान्य तौर पर वहां नागरिकता लेने की प्रक्रिया एवं नियम-कानून बेहद जटिल

हैं, पर धनी वर्ग के लिए ये काफी आसान हैं। वस्तुतः अधिकांश देशों में नागरिकता वहां की सरकारों के लिए कमाई का एक बहुत अच्छा जरिया है। उदाहरण के लिए फ्रांस में पूर्ण स्थाई नागरिकता हासिल करने के लिए कम से कम 76 करोड़ रुपये का निवेश और लगातार पांच साल का प्रवास भी अनिवार्य है। धनराशि एवं समय अवधि के अंतर से इस तरह के प्रावधान विश्व के लगभग सभी छोटे-बड़े देशों में लागू हैं। यहां तक कि भारत के एक मामूली से शहर के बराबर के कई देश भी कुछ निश्चित धनराशि एवं कुछ साल की प्रवास अवधि की शर्त पर नागरिकता प्रदान करते हैं, पर अवैध प्रवासियों के लिए उनके दरवाजे बंद हैं। अमेरिका जैसा शक्तिशाली समृद्ध देश भी अपनी वीजा नीति से हर साल करोड़ों डॉलर की कमाई करता है। यूरोपीय यूनियन के 23 देश भारी भरकम निवेश के बदले अपनी नागरिकता बेचते हैं। और तो और इराक, जॉर्डन, म्यांमार, सीरिया एवं तुर्की आदि तमाम देशों के लाखों शरणार्थियों या अवैध प्रवासियों बाबत भी वैश्विक स्तर पर किसी भी प्रभावित देश ने अपनी नागरिकता संबंधी नीति में इस तरह का परिवर्तन नहीं किया है!

( लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

### मुसलमानों में जातिवाद

रिजवान अंसारी का लेख 'मुस्लिम भी जकड़े हैं जातिवाद से' मुस्लिम समाज की सच्चाई बयां करता है। यह कम ही लोगों को पता है कि मुसलमानों में भी सवर्ण हैं जो अशराफ कहलाते हैं, इनमें सैयद, शेख, मुगल, पठान, मलिक और मिर्जा जातियां शामिल हैं। फिर पिछड़े या पसमांदा मुस्लिम हैं, जो अजलाफ कहे जाते हैं। इनमें पिराली, ठकराई, दरजी, जुलाहे, रंगरेज, भटियारे, कलाल, मल्लाह, धोबी, हज्जाम, नट आदि शामिल हैं। सबसे बड़ा सामाजिक समृह यही है। तीसरी श्रेणी में 'शुद्र' हैं, जिन्हें अरजाल कहा जाता है। सवर्ण मुस्लिम इनके साथ अछूतों जैसा व्यवहार करते हैं। तीनों श्रेणियों में आपस में निकाह नहीं होते, कब्रिस्तान भी अक्सर अलग-अलग होते हैं, मस्जिदें भी ज्यादातर पृथक-पृथक हैं। मौलाना अशरफ अली थानवी की पुस्तक 'बहिश्ती जेवर' को भारतीय मुस्लिम बड़े आदर से पढ़ते हैं, निकाह में अक्सर यह किताब दहेज में दी जाती है। इसमें साफ-साफ लिखा है कि 'अरजाल' से कैसा अपमानजनक बर्ताव करना चाहिए, उनको किस हद तक सजा दी जा सकती है। माना जाता है कि सर सैयद जैसे समाज सुधारक नेता भी इस मुस्लिम वर्ण-व्यवस्था के कायल थे। इसीलिए अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में ज्यादातर अमीर मुस्लिम ही पढ़ते रहे हैं। दुख की बात यह है कि मुस्लिमों के कथित रहनुमा इस समाज को इस समस्या से निकालने का प्रयास तो दूर इसकी चर्चा तक नहीं करते हैं। यही वजह है कि इस समाज की कई समस्याओं से देश के लोग अभी तक अनजान हैं। लेखक का धन्यवाद कि उन्होंने मुस्लिम समाज की इस कटु सच्चाई से देश को अवगत कराया है।

अजय मित्तल, मेरठ

### मेलबाक्स

### सिक्किम में अच्छी योजना

सिक्किम सरकार द्वारा वन फैमिली वन जॉब योजना शुरू की गई है। इस योजना के तहत राज्य के उस प्रत्येक परिवार के एक सदस्य को नौकरी दी जाएगी जिस परिवार का कोई सदस्य सरकारी नौकरी में नहीं है। भारत सरकार सहित प्रत्येक राज्य सरकार को यह योजना राष्ट्रहित में लागू करनी चाहिए। रोजगार के एक तीर से बेरोजगारी, भुखमरी, निरक्षरता को पूर्ण रूप से समाप्त किया जा सकता है। व्यक्ति/परिवार के पास आय का स्थाई साधन होगा तो वह रोटी-कपड़ा-मकान और स्वास्थ्य की उचित व्यवस्था कर लेगा। यदि व्यवस्था में हर जाति, समाज का शत प्रतिशत प्रतिनिधित्व होगा तो भविष्य में आरक्षण/अनुदान का कोई औचित्य नहीं रह जाएगा।

shriwalsad1861@gmail.com

### डीयू में शिक्षा

डीयू में शिक्षक अपनी मांगों को पूरा करने के लिए कभी भी हड़ताल पर बैठ जाते हैं। अभी लंबित पदोन्नित के कारण हुई हड़ताल से विद्यार्थियों की पढ़ाई बाधित हो रही है, जो चिंता का विषय है। डीयू में बच्चे दूर-दूर से पढ़ने आते हैं। इतना ही नहीं, डीयू के कॉलेजों में शिक्षकों की कमी भी है जिसके कारण बच्चों की कई कक्षाएं नहीं हो पा रही हैं। डीयू में दिसंबर में यह नियम पारित हुआ कि प्रत्येक बच्चे की हाजरी 67 प्रतिशत होनी चाहिए अन्यथा वह परीक्षा में नहीं बैठ पाएगा, परंतु यदि कक्षाएं ही नहीं लगेंगी तो इसमें छात्र क्या करें ?

हेमा जोशी, डॉ. भीमराव आंबेडकर कॉलेज, दिल्ली विवि

### कितने भरोसेमंद हैं शैक्षिक एप

प्रौद्योगिकी के विकास के कारण आज शिक्षा के क्षेत्र में भी बदलाव आया है। पढ़ाई को आसान बनाने के उद्देश्य से बाजार में नए-नए शैक्षिक एप आते जा रहे हैं। बच्चे किताबों से पढ़ने के बजाय इन एप से ही पढ़ना मुनासिफ समझते हैं। इसका एक कारण यह भी है कि ये एप आसानी से उपलब्ध होते हैं और बच्चों को किताबों के बोझ से छुटकारा मिल जाता है। परंतु ये शैक्षिक कितने विश्वसनीय हैं, इसका अनुमान लगा पाना मुश्किल है। क्योंकि इन एप पर पढ़ा रहे शिक्षकों की शैक्षणिक योग्यता पर पूर्ण रूप से विश्वास नहीं किया जा सकता है। इन एप के द्वारा पढ़ने के दौरान यदि किसी विषय पर कोई प्रश्न मन में उठता है तो उसका प्रत्यक्ष रूप से उत्तर मिल पाना भी कठिन होता है। किताबों में विषयों की जानकारी विस्तार से मौजूद होती है, इसलिए किताबों को विश्वसनीय शिक्षक भी माना जाता है। ये एप मोबाइल पर उपलब्ध होते हैं। इन उपकरणों से हानिकारक किरणें निकलती हैं। जिसके परिणाम स्वरूप तनाव और आंखों की समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं।

सौरभ पाठक, ग्रेटर नोएडा

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें : दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण, डी–210–211, सेक्टर–63, नोएडा ई-मेल: mailbox@jagran.com

# आखिर सहमति

बार्ड ने आखिरकार सर्वोच्च न्यायालय के आदेश का पालन करने पर सहमति जताई है। बोर्ड की तरफ से पेश हुए वकील ने संविधान में वर्णित सभी व्यक्तियों के धर्म पालन के समान अधिकार का उल्लेख करते हुए स्वीकार किया कि किसी वर्ग विशेष के साथ उसकी शारीरिक अवस्था की वजह से पक्षपात नहीं किया जाना चाहिए। इस तरह आयु विशेष की महिलाओं के सबरीमला मंदिर में प्रवेश संबंधी प्रतिबंध हटने की स्थिति बनी है। अभी तक सबरीमला मंदिर में एक खास आयुवर्ग की महिलाओं के प्रवेश का निषेध था। इस पर जब यंग इंडियन लायर्स एसोसिएशन ने जनहित याचिका दायर की, तो त्रावणकोर देवस्वओम बोर्ड और अनेक संगठनों ने उसका यह कहते हुए विरोध किया था कि सबरीमला मंदिर में भगवान अयप्पा का विशेष स्वरूप है और इसे संविधान के तहत संरक्षण प्राप्त है, इसलिए महिलाओं के प्रवेश की अनुमित मंदिर की गरिमा को चोट पहुंचाएगी। मगर सर्वोच्च न्यायालय ने तमाम सुनवाइयों के बाद मंदिर में महिलाओं के प्रवेश की अनुमित दे दी थी। उसके बाद भी देवस्वओम बोर्ड और उसके तर्कों से सहमत तमाम संगठन और राजनीतिक दल विरोध करते रहे। मंदिर के आसपास कड़ा पहरा लगा दिया गया, ताकि कोई महिला प्रवेश न करने पाए।

सर्वोच्च न्यायालय के आदेश के बावजूद जब सबरीमला मंदिर में महिलाओं के प्रवेश पर प्रतिबंध लगा रहा, तो विरोध प्रदर्शन तेज हो गए। इस बीच कुछ महिलाएं मंदिर में प्रवेश कर गईं, तो मंदिर संचालन बोर्ड ने मंदिर को पवित्र करने का अनुष्ठान कराया। उन महिलाओं की सुरक्षा खतरे में पड़ गई। राज्य सरकार और मंदिर की विशेष स्थिति के पक्ष में खड़े लोगों के बीच तनातनी का माहौल बना रहा। इस पर सर्वोच्च न्यायालय ने एक बार फिर सुनवाई की और मंदिर संचालन बोर्ड का पक्ष जानना चाहा। उसमें बोर्ड की तरफ से पेश हुए वकील ने मान लिया कि महिलाओं को मंदिर में प्रवेश मिलना चाहिए। यह विवेकपूर्ण कदम है। एक लोकतांत्रिक समाज में इस तरह का भेदभाव किसी भी रूप में उचित नहीं कहा जा सकता। इसके पहले शनि शिंगणापुर मंदिर में भी महिलाओं का प्रवेश प्रतिबंधित था, पर कुछ महिला संगठनों ने इसे कानूनी चुनौती दी, तो वहां भी महिलाओं का प्रवेश सुनिश्चित हो सका। यह ठीक है कि धर्म और आस्था के मामले में बहुत सारे तर्कों का कोई मतलब नहीं होता, पर जैसे-जैसे सामाजिक स्थितियां बदलती हैं, लोगों के सोचने-समझने के स्तर का विकास होता है तो परंपरा से चली आ रही कई मान्यताएं और धारणाएं भी बदलती हैं। वैसे में आस्था से जुड़े सवालों को भी पुनर्व्याख्यायित करने की जरूरत पड़ती है। इस लिहाज से सबरीमला मंदिर मामले में बोर्ड का कदम सराहनीय है।

महिलाओं की पवित्रता-अपवित्रता से जुड़ी अनेक प्राचीन मान्यताएं अब तर्क की कसौटी पर बेमानी साबित हो चुकी हैं। वैज्ञानिक तथ्यों के आलोक में बहुत सारी रूढ़ियां ध्वस्त हो चुकी हैं। इसलिए सबरीमला संचालन बोर्ड का उनकी पवित्रता-अपवित्रता को लेकर दुष्टिकोण संकीर्ण ही साबित हो रहा था। फिर जब हमारा संविधान सभी नागरिकों को, चाहे वे महिला हों या पुरुष, धर्म और आस्था के मामले में भी समान अधिकार देता है, तो कुछ मंदिरों में विशेष स्थिति का तर्क देते हुए उन्हें इससे वंचित रखना एक तरह से संवैधानिक मर्यादा के भी खिलाफ है। अच्छी बात है कि सबरीमला संचालन बोर्ड ने महिलाओं के लिए प्रवेश द्वार खोलने पर सहमति व्यक्त की है।

# राहत भरा कदम

कि जर्व बैंक की मौद्रिक नीति समिति ने नीतिगत दरों में कमी कर इस बात का संकेत दिया है कि महंगाई अब काबू में है, मुश्किलों का दौर खत्म हो रहा है और अर्थव्यवस्था के लिए आने वाले दिन अच्छे होंगे। मौद्रिक नीति समिति की तीन दिन तक चली बैठक के आखिरी दिन इस बात के संकेत आने लगे थे कि इस बार महंगाई काबू में रहने के कारण केंद्रीय बैंक लचीला रुख अपनाएगा और नीतिगत दरों में कमी करेगा। केंद्रीय बैंक ने अब रेपो और रिवर्स रेपो दर में एक चौथाई फीसद की कमी कर दी है। रिजर्व बैंक के इस फैसले का लंबे समय से इंतजार था। कर्ज सस्ता या महंगा होने का गणित इसी पर टिका होता है और इसका सीधा और पहला असर उन उपभोक्ताओं पर पड़ता है जिन्होंने घर, गाड़ी, शिक्षा जैसी जरूरतों के लिए अपने बैंक से कर्ज लिया है या जो लोग इस इंतजार में रहते हैं कि कब कर्ज सस्ता हो और वे घर और गाड़ी खरीदने की योजना बनाएं।

रिजर्व बैंक की नीतिगत दरों के अनुरूप ही व्यावसायिक बैंक अपने कर्ज और सावधि जमाओं की ब्याज दरें तय करते हैं। इसलिए अब यह तय है कि व्यावसायिक बैंक भी कर्ज की दरें घटाएंगे, इससे कर्ज सस्ता होगा और बैंकों से कर्ज लेने वाले उपभोक्ताओं की मांग तेजी से बढ़ेगी। इसका सीधा और तात्कालिक असर वाहन बाजार और रियल एस्टेट बाजार पर पड़ेगा। लंबे समय से रियल एस्टेट बाजार में मंदी छाई हुई है और घर खरीदने वाले सस्ते कर्ज के इंतजार में थे। अगर रियल एस्टेट और वाहन बाजार उठता है तो इससे जुड़े अर्थव्यवस्था के दूसरे क्षेत्रों में भी तेजी का रास्ता बनेगा। हालांकि सावधि जमाओं पर ब्याज में कटौती निराश कर सकती है। मौद्रिक नीति समिति की यह बैठक पहली बार नए गवर्नर की अगुआई में हुई है। छह में से चार सदस्य नीतिगत दरों को कम करने के पक्ष में थे। दो सदस्यों का कहना था कि इसे स्थिर बनाए रखने की जरूरत है। इससे यह संकेत मिलता है कि नए गवर्नर ने तटस्थ रुख अपनाना बेहतर समझा है। यह इस बात का भी संकेत माना जा सकता है कि आने वाले वक्त में रेपो दर और कम की जा सकती है। अभी तक केंद्रीय बैंक महंगाई के जोखिम के मद्देनजर सख्त रुख अपनाए हुए था। लेकिन डेढ़ साल में पहली बार ऐसा हुआ है जब पिछले साल दिसंबर में मुद्रास्फीति सबसे कम (2.2 फीसद) रही और नीतिगत दरें कम करने का रास्ता साफ हुआ।

रिजर्व बैंक का अनुमान है कि अब महंगाई परेशान नहीं करेगी और इस वित्त वर्ष की आखिरी तिमाही में महंगाई दर 2.8 फीसद रहेगी। अगर ऐसा रहा तो रिजर्व बैंक नीतिगत दरों को नीचे ला सकता है। लेकिन बाद के महीनों में महंगाई दर बढ़ने का जोखिम बरकार है। इसीलिए मौद्रिक समिति ने साफ तौर पर कहा है कि सब्जियों और तेल की कीमत, स्वास्थ्य और शिक्षा महंगी होने, वित्तीय बाजारों में उतार-चढ़ाव और मानूसन को लेकर सतर्क रहने की भी जरूरत है। रिजर्व बैंक को अभी उम्मीद है कि अंतरिम बजट में कर रियायतों और किसानों के लिए जो घोषणाएं हुई हैं उनसे बाजार में मांग बढ़ेगी और अर्थव्यवस्था पर इसका अच्छा असर दिखेगा। पिछले साल केंद्रीय बैंक ने जून और अगस्त में रेपो दर बढ़ाई थी। बैंक को यह सख्त कदम इसलिए उठाना पड़ा था कि महंगाई का ग्राफ तेजी से ऊपर जाने का खतरा बना हुआ था। ऐसे में लंबे समय बाद नीतिगत दरों में कटौती उपभोक्ताओं को राहत देने वाली होगी।

# कल्पमधा

विचित्र बात है कि सुख की इच्छा मेरे दुख का एक अंश है। -खलील जिब्रान

# मुसीबत में भारतीय छात्र

अभिषेक कुमार सिंह

करीब आठ साल पहले कैलिफोर्निया की ट्राई-वैली यूनिवर्सिटी का घोटाला सामने आया था। जनवरी 2011 में जब अमेरिका की सिटिजनशिप एंड इमिग्रेशन सविर्सेज ने जांच की थी तो यह विश्वविद्यालय वीजा फ्रॉड में शामिल पाया गया था। बाद में उसे बंद करा दिया गया नतीजतन, इससे वहां पढ़ रहे एक हजार से ज्यादा भारतीय छात्रों का भविष्य अंधकारमय हो गया था। इसी के फौरन बाद जुलाई 2011 में जब यूनिवर्सिटी ऑफ नॉर्दर्न वर्जीनिया की जांच की गई, तो वहां भी ऐसा ही वीजा घोटाला सामने आया।

**3** मेरिका में 'पे एंड स्टे' गिरोह का भंडाफोड़ होने से वहां भारतीय छात्रों के फंसने की घटना ने ऐसी समस्या की तरफ ध्यान खींचा है जो एक ओर पढ़ाई व नौकरी के लिए यूरोप-अमेरिका जाने की भारतीय ललक सामने रखती है, तो दूसरी तरफ बाहर जा रहे लोगों की छानबीन और उन्हें मानव तस्करी से बचाने के उपायों की खामियों को उजागर करती है। तीस जनवरी को अमेरिका से खबर आई कि वहां एक फर्जी विश्वविद्यालय की आड में अवैध रूप से लोगों को अमेरिका में ठहराने का धंधा चलाया जा रहा है। इस विश्वविद्यालय को चलाने के आरोप में आठ भारतीयों और भारतीय मूल के अमेरिकी लोगों को गिरफ्तार किया गया। उसके बाद अमेरिका के आव्रजन एवं सीमा शुल्क प्रवर्तन विभाग ने विश्वविद्यालय से एक सौ तींस छात्रों को भी गिरफ्तार कर लिया, जिनमें एक सौ उनतीस भारतीय हैं। ये छात्र इस विश्वविद्यालय में पढने के

लिए पंजीकृत थे, लेकिन पढ़ाई करने के बजाय देश भर में काम कर रहे थे। हालांकि भारत ने इस मामले में तुरंत प्रतिक्रिया देते हुए अपनी ओर से राजनियक विरोध दर्ज करा दिया। विदेश मंत्री ने यह वादा भी किया कि इन भारतीय छात्रों को कानूनी मदद दिलाई जाएगी, ताकि इन पर कोई कड़ी कार्रवाई न हो। बाद में यह भी पता चला कि यह फर्जी विश्वविद्यालय असल में एक स्टिंग ऑपरेशन के तहत अमेरिका ने खुद बनाया था। अमेरिका के मिशिगन राज्य में यूनिवर्सिटी ऑफ फार्मिंग्टन नाम से इस विश्वविद्यालय को अमेरिकी सुरक्षा बलों के एजेंट ही चला रहे थे, ताकि पैसे के बदले अवैध प्रवास की चाहत रखने वालों को पकडा जा सके। हालांकि भारतीय अधिकारियों ने कहा कि जिन भारतीय छात्रों ने इस विश्वविद्यालय में दाखिला लिया, मुमिकन है कि वे ठगी के शिकार हो गए हों। अमेरिकी प्रशासन का कहना है कि जिन छात्रों ने इस विश्वविद्यालय में

दाखिला लिया था, वे जानते थे कि यह एक अवैध विश्वविद्यालय है और ऐसे लोगों का मकसद अमेरिका में अवैध रूप से रुकना और काम करना था। दावा है कि विश्वविद्यालय का इस्तेमाल पैसे के बदले अवैध रूप से अमेरिका में रहने देने की स्कीम के तौर पर किया गया। अवैध प्रवास की इच्छा से पहुंचे लोगों की धरपकड़ के स्टिंग ऑपरेशन जैसे अभियान अमेरिका में पहले भी चलाए जाते रहे हैं।

अमेरिका और यूरोपीय देश बीते करीब एक दशक से वीजा नियमों में धांधली का हवाला देकर उनमें तब्दीली की चेतावनी भी देते रहे हैं। छह साल पहले (2013 में) एक अमेरिकी सीनेटर ने वीजा धांधलियों का

हवाला देते हुए अमेरिका में काम कर रही भारत की तीन आइटी कंपनियों का नाम लेकर आरोप लगाया था कि ये छोटी अवधि के लिए अमेरिका में काम करने को इच्छुक विदेशी पेशेवरों को दिए जाने वाले एच-1-बी वीजा का दुरुपयोग कर रही हैं। आरोप था कि ये कंपनियां ऐसे कमर्चारियों को यह वीजा दिला रही हैं जो कम वेतन लेकर अमेरिका में काम करने को राजी हो जाते हैं। इसका असर माइक्रोसॉफ्ट जैसी बडी अमेरिकी कंपनियों पर पडता है जो ऐसा वीजा ज्यादा संख्या में नहीं दे पाने के कारण अपने कर्मचारियों पर ज्यादा पैसे खर्च करने को बाध्य होती हैं। तब उस सीनेटर ने इसे एक तरह का वीजा फर्जीवाडा करार दिया था। हालांकि उस वक्त भी डरबिन के बयान और रवैये पर किसी को

आश्चर्य नहीं हुआ क्योंकि उस दौरान खुद अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा अपने पहले चुनावी कैंपेन के वक्त से ऐसी ही संरक्षणवादी बयानबाजी करते रहे हैं। उन्होंने यह कह कर अपने नागरिकों को भयभीत किया भी था कि क्या होगा अगर ज्यादातर नौकरियां भारतीय कंपनियों के पास चली जाएंगी और उन्हें तब बंगलुरु जाकर काम करना पड़ेगा। यदि इस मसले के दूसरे पहलू यानी आव्रजन में धांधली को देखें, तो यह खुद अमेरिका की अपनी समस्या भी है। क्योंकि ऐसे ज्यादातर वीजा घोटाले खुद अमेरिकी कर रहे हैं। करीब आठ साल पहले कैलिफोर्निया की ट्राई-वैली युनिवर्सिटी का घोटाला सामने आया था। जनवरी 2011 में जब अमेरिका की सिटिजनशिप एंड इमिग्रेशन सिवर्सेज ने जांच की थी तो यह विश्वविद्यालय वीजा फ्रॉड में शामिल पाया गया था। बाद में उसे बंद करा दिया गया जिससे इससे वहां पढ रहे एक हजार से ज्यादा भारतीय



छात्रों का भविष्य अंधकारमय हो गया था। इसी के फौरन बाद जुलाई 2011 में जब यूनिवर्सिटी ऑफ नॉर्दने वर्जीनिया की जांच की गई, तो वहां भी ऐसा ही वीजा घोटाला सामने आया। इसके अगले साल अगस्त 2012 में कैलिफोर्निया के सनीवेल स्थित हरग्वेन यूनिवर्सिटी में वीजा घोटाला सामने आया था। इससे वहां पढ रहे वाले 400 भारतीय छात्रों के भविष्य का संकट पैदा हुआ था, क्योंकि अमेरिका इमिग्रेशन एंड कस्टम्स इनफोसर्मेंट विश्वविद्यालय की मान्यता वापस लेने के लिए नोटिस जारी किया था। इसलिए अमेरिकी सीनटरों को यह समझाना होगा कि भारतीयों को कठघरे में खड़ा करने के साथ-साथ साफ-सफाई की एक जरूरत खद उनके अपने घर में भी है।

हालांकि कई दशकों से कनाडा, अमेरिका से लेकर सऊदी अरब आदि दूसरे देशों से श्रमिकों को धोखे से लाकर जबर्दस्ती काम करवाने का कारोबार चल रहा है। भारत और आसपास के देशों से अपना सब कुछ बेच कर या गिरवी रख कर गए लोगों के पासपोर्ट उन्हें लाने वाले दलाल या कंपनियां अपने कब्जे में कर लेती हैं और उनके शोषण का अंतहीन सिलसिला चलता रहता है। वैसे तो भारत सरकार का प्रवासी मंत्रालय ऐसे प्रवासियों के लिए फिक्रमंद तो दिखता है जो रोजगार के लिए युरोप-अमेरिका, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया जैसे विकसित देशों में जाते हैं। मोटे तौर पर इन आइटी पेशेवरों और इंजीनियरों की नौकरी व अन्य हित सुरक्षित माने जाते हैं, लेकिन वैश्विक मंदी ने उनके रोजगारों पर भी असर डाला है। फिर भी अमेरिका और यूरोप का ऐसा रवैया थोड़ा हैरान ही करता है क्योंकि वहां भारतीय आइटी कंपनियों ने ज्यादातर मामलों

> में किसी अमेरिकी या यूरोपीय कानून की अवहेलना नहीं की है। इन कंपनियों ने न सिर्फ आइटी से संबंधित नौकरियों में ब्रिटेन-अमेरिका में बेहद प्रतिस्पधी माहौल बनाया है बल्कि यूरोपीय-अमेरिकी समुदाय में नई चुनौतियों के बरक्स खड़ा होने का साहस और जुझारुपन पैदा किया है।

> विदेशों में खास तौर पर रोजगार के लिए गए करीब एक करोड़ दस लाख से अधिक प्रवासी भारतीयों के लिए संकट यह है कि उन्हें स्थानीय श्रम कानूनों में होने वाले फेरबदल के साथ-साथ सिकुड़ते रोजगार विकल्पों की समस्या से भी जूझना है जिन पर अब स्थानीय लोग दावा करने लगे हैं। ऐसे में सवाल यह है कि कुशल और अकुशल श्रमिक के रूप में बाहर गए

अनिवासी भारतीयों के हित में हमारी सरकार को क्या-क्या उपाय करने चाहिए जिससे उनसे मिलने वाली विदेशी मुद्रा निर्बोध ढंग से देश में आती रहे और बाहरी मुल्कों में उन प्रवासियों के हित भी सुरक्षित रहें। सरकार कबूतरबाजी के चोर दरवाजे बंद करके इसकी शुरुआत कर सकती है। इसके बाद उसे गौर करना चाहिए कि जिन देशों में भारतीय कामगार व आइटी पेशेवर जा रहे हैं, क्या उनके आव्रजन में वहां के वीजा और श्रम कानूनों से कोई खिलवाड़ तो नहीं किया जा रहा है। साथ ही, यदि उन देशों के वीजा और श्रम कानुनों में कोई बड़ी तब्दीली नजर आए तो ऐसे लोगों को वहां जाने से रोक लेना चाहिए। ऐसा करके ही हम अपने युवाओं के रोजगार और भविष्य को सुरक्षित बना सकते हैं।

# परिवेश का पाठ

मुजतबा मन्नान

हा ल ही में प्राथमिक शिक्षा से जुड़े एक सर्वेक्षण के दौरान राजस्थान के बांसवाड़ा जिले के आदिवासी इलाके में स्थित एक स्कूल में कक्षा तीन के बच्चों से बातचीत करने का मौका मिला। दरअसल सर्वेक्षण के लिए कक्षा तीन के बच्चों की परीक्षा लेनी थी और उससे पहले बच्चों को परीक्षा से संबंधित निर्देश समझाने थे। निर्देश समझाते हुए मैंने महसूस किया कि बच्चे मेरी बात को ठीक से समझ नहीं पा रहे हैं।

स्थिति को देखते हुए विद्यालय में मौजूद एक शिक्षक से मैंने इस बारे में बात की। परीक्षा के निर्देशों में लिखा था कि निर्देश और प्रश्न उस भाषा में समझाने हैं जिसमें बच्चे सहज हों और आसानी से समझ जाएं। लेकिन मैंने जब शिक्षक से बच्चों के संदर्भ में बातचीत की तो उन्होंने अपने विचार रखते हए कहा- 'बच्चों को हिंदी कम समझ आती है।' मैं शिक्षक से मदद मांगता, उससे पहले शिक्षक ने कहा- 'देखिए सर, ये अनपढ़ आदिवासियों के बच्चे हैं, इनको पढ़ना-लिखना नहीं आता है, ठीक से हिंदी भी नहीं बोल पाते हैं '.. इत्यादि।

परिस्थिति को देखते हुए एक अन्य शिक्षक की मदद से बच्चों की परीक्षा ली। शिक्षक ने बच्चों को उनकी परिवेशीय भाषा में ही निर्देश दिए, प्रश्नों को समझाया और बच्चों द्वारा रखी गई जिज्ञासाओं पर अपने विचार रखे। परीक्षा के बाद जब शिक्षक के साथ मिल कर बच्चों द्वारा हल किए गए प्रश्न पत्रों की जांच की गई तो उम्मीद से बेहतर परिणाम पाया। अधिकतर बच्चों ने प्रश्नों का उत्तर देते समय अपनी

परिवेशीय भाषा के शब्दों का चयन किया और सही उत्तर लिखा। यह विद्यालय के असंख्य उदाहरणों में से केवल एक है जो विद्यालय

में परिवेशीय भाषा के महत्त्व पर बल देता है। दुनिया में मनुष्य को सभी प्राणियों में सर्वोच्च माना गया है जिसकी एक अहम वजह भाषा है। मनुष्य ने भाषाई विकास के साथ अपनी संस्कृति विकसित की है। यही एक बडा फर्क है जो उसे अन्य प्राणियों की जमात से अलग करता है। अतः मनुष्य के सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में भाषा का अहम योगदान रहता है। सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में बच्चा सबसे पहले अपने परिवेश की चीजों से रूबरू होता है। उसके बाद धीरे-धीरे अवलोकन और अनुभवों से वह सीखता है। इसलिए बच्चे के

सीखने में उसकी परिवेशीय भाषा का अहम योगदान रहता है, क्योंकि घर-परिवार में वह अपनी परिवेशीय भाषा के माध्यम से ही बातचीत करता है। दुसरे शब्दों में कहा जाए तो, कोई भी मनुष्य पहले अपने परिवेश की भाषा के आधार पर सीखता है. उसके बाद दूसरी भाषा के संपर्क में आता है।

अगर प्रारंभिक स्तर पर विद्यालय में शिक्षण एक ऐसी भाषा में होता है जिसे स्थानीय परिवेश, आदिवासी और अल्पसंख्यक बच्चे नहीं दुनिया मेरे आगे जानते हैं, तब ऐसी स्थिति में

बच्चे बिना कुछ समझे यांत्रिक रूप से शिक्षक की बातों का दोहराव करते हैं। जैसे, अक्सर हिंदी भाषी क्षेत्रों में बच्चे अंग्रेजी की कक्षाओं में शिक्षक की बातों का दोहराव करते हैं। इस कारण बच्चों में भाषा की मदद से चिंतन क्षमता का विकास नहीं हो पाता है और फिर बच्चे अन्य स्कूली विषयों में भी पिछड़ जाते हैं। इसी कारण अनेक बच्चे पढ़ना-लिखना और अन्य स्कूली विषयों को सीखे बिना ही स्कुल छोड़ देते हैं। वैश्विक स्तर पर साक्षरता के क्षेत्र में होने वाले अनेक शोध बताते हैं कि विद्यालय में प्रारंभिक वर्षों में मातुभाषा में शिक्षण न होने से बच्चों के स्कूल छोड़ने की संभावना बढ़ जाती है, जबकि प्रारंभिक वर्षों में बच्चे की मातृभाषा में शिक्षण होने

से स्कूल छोड़ने की दर में कमी आई है।

दरअसल, बच्चा जन्म के साथ ही परिवेशीय भाषा सीखना शुरू कर देता है और फिर परिवेशीय भाषा में बातचीत करने और चीजों को समझने-समझाने की क्षमताओं के साथ विद्यालय में दाखिल होता है। अगर बच्चे की क्षमताओं का इस्तेमाल पढ़ाई के माध्यम के रूप में मातृभाषा का चुनाव करके किया जाए तो इसके सकारात्मक परिणाम देखने को मिलते हैं। इसलिए शिक्षकों से उम्मीद की जाती है कि वे उन सभी विषयों पर बातचीत करें जिनके बारे में बच्चों को पूर्वानुभव और ज्ञान होता है। अगर बच्चे अपनी परिवेशीय भाषा में शिक्षा ग्रहण करते हैं तो बच्चों के अभिभावकों को भी सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में जुड़ाव का मौका मिलता है। यह बच्चे के बौद्धिक और सामाजिक विकास के लिए महत्त्वपूर्ण होता है।

प्रारंभिक वर्षों में शिक्षक की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो जाती है कि वह परिवेशीय भाषा में संवाद, चिंतन और विचार-विमर्श को दैनिक शिक्षण प्रक्रियाओं में शामिल कर बच्चों को प्रोत्साहित करे, ताकि प्रारंभिक शिक्षा पूर्ण होने से पहले बच्चे शिक्षण की अन्य भाषाओं से परिचित हो जाएं और आगे की शिक्षा के लिए अपनी पसंद की भाषा में. अपनी पसंद की शिक्षा का चयन कर सकें।

# आरक्षण में सेंध

पि छले दिनों सरकार ने सामान्य वर्ग के गरीब तबकों के लिए नौकरियों और शैक्षणिक संस्थाओं में दस प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान कर दिया। इसके लिए संविधान में संशोधन कर 'आर्थिक आधार' को भी पिछड़ेपन का कारण बनाया गया जबकि मूल संविधान में केवल सामाजिक और शैक्षणिक पिछडेपन पर आरक्षण का प्रावधान था। सत्तारूढ़ दल जोर-शोर से ढिंढोरा पीट रहा है जबकि विपक्ष, जिसमें तथाकथित पिछड़ों का प्रतिनिधित्व करने वाले दल भी हैं, भी तथाकथित सवर्णों के वोट के लिए इस नई आरक्षण व्यवस्था का समर्थन कर अपने योगदान के लिए श्रेय लेने में लगा है। तर्क है कि इस नई व्यवस्था के कारण पहले से आरक्षण प्राप्त तबके को कोई नुकसान नहीं होगा। लेकिन गहराई से विश्लेषण करने पर साफ हो जाता है कि यह नई आरक्षण की व्यवस्था सीधे आरक्षण के सिद्धांत पर चोट है। दरअसल, आरक्षण का सिद्धांत प्रतिनिधित्व से जुड़ा है। लेकिन सरकार ने आर्थिक आधार पर आरक्षण का प्रावधान कर इसे गरीबी उन्मूलन का कार्यक्रम बना दिया।

आरक्षण का प्रावधान इस लक्ष्य के साथ किया गया था कि जो ऐतिहासिक रूप से शोषित और पिछड़े रह गए उनका भी प्रतिनिधित्व सरकारी सेवाओं और शैक्षणिक संस्थानों में सुनिश्चित हो सके। लेकिन विडंबना देखिए कि सामान्य वर्ग, जो अपनी जनसंख्या से अधिक प्रतिनिधित्व रखता है, उसे ऊपर से आरक्षण भी दिया जा रहा है। हाल ही में द इंडियन एक्सप्रेस में प्रकाशित आंकड़े भी सामान्य वर्गों के 'ओवर रिप्रजेंटेशन' यानी अधिक प्रतिनिधित्व को पुष्ट करते दिखे। आरक्षण को गरीबी उन्मूलन का कार्यक्रम बनाना आरक्षण व्यवस्था पर सीधा हमला और इसके उद्देश्य को धूमिल करना है। आरक्षण का उद्देश्य धूमिल होने से सीधा नुकसान अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) और दलितों को होगा। गणितीय

दृष्टिकोण से देखें तो अब पहले की तुलना में अनारिक्षत सीटों की संख्या घटेगी। मसलन, 100 में से 40 सीटें ही अनारिक्षत रहेंगी जो पहले 50 होती थीं। परिणामतः अनारक्षित सीटों से चयनित होने के लिए पिछड़े तबकों के लिए प्रतिस्पर्धा बढ़ेगी और संभावना कम होगी।

इन सबके उलट दखद बात है कि पिछडे वर्गों के नुमाइंदे विरोध में सामने आने के बजाय सवर्णों के तर्कों में फंस कर हां में हां मिला रहे हैं। हमारे समाज की सच्चाई है कि तथाकथित उच्च जातियां हमेशा से आरक्षण विरोधी रही हैं। उनका प्रयास रहा है कि या तो आरक्षण खत्म हो या उन्हें भी मिले क्योंकि सबको आरक्षण मिलने

को बेताब रहे हैं। जैसे-जैसे चुनाव करीब आएंगे इन नेताओं के सीने के ताले खुलते जाएंगे। लेकिन अब बड़ा न आकर मुल्क की सेक्युलर और राष्ट्रवाद की बुनियाद को मजबूत करने में अपनी भूमिका अदा करेगी? मोहम्मद फारूक सुलेमानी, बालोतरा, राजस्थान

विडंबना है कि राजनीतिक दलों के नेता सेक्युलरिज्म

लबादा ओढ कर सांप्रदायिकता का घिनौना तमाशा दिखाने

शहीदों से साथ 'रोटी और फीस के लिए दो-दो हजार में बिक गए शहीदों के वीरता किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-८, सेक्टर-7, नोएडा २०१३०१, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है :

chaupal.jansatta@expressindia.com

का अर्थ हुआ कि किसी को आरक्षण नहीं मिला! राहल राज, नवादा, बिहार

# सियासी बिसात

लोकसभा चुनाव की आहट भर से राजनीतिक दलों ने बिसात बिछा कर शह और मात का खेल शुरू कर दिया है! सबसे खास पहलू इस खेल का यह है कि हमेशा की तरह मोहरा जनता ही रहेगी। इस मोहरे का इस्तेमाल कैसे किया जाए ये राजनीतिक दल अपने-अपने हिसाब से कुटनीति बनाने में जुटे हुए हैं। अब राजनीतिक दलों की जातिगत समीकरण की बजाय धार्मिक समीकरण पर ज्यादा तवज्जो है। नफरत फैलाने में कई दलों की भागीदारी सबके सामने ही है! घर मुसलमान का जले तो रोए हिंदू या फिर घर हिंदू का जले रोए मुसलमान- वाली संस्कृति अब दुर्लभ हो चली है।

पदक समाचार' पढ़ कर आंखें भर आईं। अदम्य साहस और वीरता से दुश्मनों के छक्के छुड़ाने के फलस्वरूप मिले पदक अपने परिवार के पालन-पोषण एवं शिक्षा की खातिर बेचने की मजबूरी सैनिकों के दिलों पर वज्रपात सरीखी है। यह मजबूरी देश के लिए सर्वस्व न्योछावर करने वाले जांबाजों के अरमानों की बलि है। पदक विजेता सैनिकों के परिवारवालों की माली हालत सुधारने के लिए सरकारों के साथ ही समाजसेवी संस्थाओं को भी अविलंब आगे आने की आवश्यकता है।

• पारस एफ खेमसरा, तिरुपति विहार, सांवेर, इंदौर

# स्वच्छता का सपना

पिछले दिनों देश ने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 71वीं पुण्यतिथि पर उन्हें श्रद्धांजलि दी। वैसे असल में साफ-स्थरा समाज और देश का निर्माण ही गांधीजी के प्रति

सच्ची श्रद्धांजलि होगी क्योंकि उनका पुरा जीवन स्वच्छता के प्रति आग्रह से जुड़ा रहा है। उनका मानना था कि एक राष्ट्र के तौर पर उदय के लिए हमें राजनीतिक आजादी नहीं बल्कि गंदगी और बीमारियों से स्वतंत्रता चाहिए सवाल है कि क्या जनता इन राजनीतिक दलों के झांसे में होगी। उन्होंने स्वच्छता को जीवन चरित्र का हिस्सा माना था और इसे रचनात्मक कार्यक्रमों की अनिवार्य सची में शामिल किया था। वे कहते थे कि स्वच्छता ही सेवा है और साफ-सफाई ईश्वर भिक्त के बराबर है तथा यह किसी खास तबके का काम नहीं बल्कि सामहिक जिम्मेदारी है। उन्होंने स्वच्छ, स्वस्थ और खुशहाल भारत का सपना देखा था । मगर आजादी के दशकों बाद भी हम उनके इस सपने को पूरा करने में नाकाम रहे हैं।

> जब 2014 में राजग की सरकार बनी तो उनके इसी सपने को पूरा करने के लिए सरकार ने 2 अक्तूबर 2014 को प्रधानमंत्री की अगुवाई में 'स्वच्छ भारत मिशन' की शुरुआत की जिसने जल्दी ही जनांदोलन का रूप ले लिया। इस मिशन के लिए बजट में विशेष प्रावधान किए गए और स्वच्छता से जुड़ी अनेक योजनाएं चलाई गईं जिनमें स्वच्छता पखवाड़ा, नमामि गंगे, स्वच्छता एक्शन प्लान प्रमुख हैं। इसी का परिणाम है कि ग्रामीण भारत में नौ करोड़ से अधिक शौचालयों का निर्माण संभव हो पाया जिसकी वजह से आज 27 राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों ने खुद को खुले में शौच से मुक्त घोषित किया है। 2014 में लगभग 39 प्रतिशत घरों में ही शौचालय उपलब्ध थे जबकि 2019 में यह प्रतिशत बढ़कर लगभग 99 हो गया है। अब जब हम इस वर्ष दो अक्तूबर को गांधीजी की 150वीं जयंती मनाएंगे तो हमारा उद्देश्य तब तक शत-प्रतिशत लक्ष्य प्राप्ति पर रहेगा। साथ ही हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि स्वच्छता को अपनी आदत में शुमार करें और दिनचर्या का हिस्सा बना लें। तभी सच्चे अर्थों में हम गांधी के सपनों का भारत बनाने में सफल हो पाएंगे। 🌘 सत्य प्रकाश, चकसाहो, समस्तीपुर, बिहार

ल के पहले पांच सप्ताहों में ही देश में स्वाइन फ्लू के 6,701 मामले सामने आये हैं. इस बीमारी से अब तक 226 मौतें ही चुकी हैं. इसी अवधि में पिछले साल इससे सिर्फ 798 लोग बीमार हुए थे और मृतकों की संख्या 68 रही थी, लेकिन पूरे साल में करीब 15 हजार लोग इस फ्लू की चपेट में आये थे और मरनेवालों की संख्या 1,103 रही थी. हालांकि, पीड़ित देश के कई राज्यों में हैं, पर फिलहाल राजस्थान, दिल्ली, हरियाणा और पंजाब सर्वाधिक प्रभावित हैं. चूंकि फ्लू का असर एक साल के अंतराल पर कम या ज्यादा होता रहता है, तो अनुमान यह है कि इस साल मरीजों की तादाद बहुत बढ़ सकती है. इसमें एक कारण जाड़े के मौसम का लंबा होना भी है. मौसम गर्म होने के साथ शायद स्वाइन फ्लू के विषाणुओं का कहर कम होने की उम्मीद की जा रही है. दिल्ली में डेंग का एक मामला भी सामने आया है. हालांकि, राजधानी में मलेरिया और चिकनगुनिया से अभी कोई पीड़ित नहीं है, पर आगामी दिनों में दिल्ली और अन्य राज्यों में इनके असर से इनकार नहीं किया जा सकता है. इस संबंध में कुछ बातों को

देश के उत्तरी और उत्तर-पश्चिमी इलाकों में स्वाइन फ्लू और अन्य रोगाणुजन्य बुखारों से ज्यादा लोग बीमार होते हैं. इन राज्यों में उपचार की पुख्ता व्यवस्था हो, क्योंकि बुखार के बाद दूसरी बीमारी आन खड़ी होती है.

रेखांकित करना जरूरी है. मौतों में कमी यह इंगित करती है कि बीते अनुभवों के आधार पर स्वास्थ्य केंद्रों और अस्पतालों में उपचार बेहतर हुआ है. इसका दूसरा पहलू यह है कि मृतकों में ज्यादातर वैसे लोग हैं, जिन्हें पहले से सांस-संबंधी बीमारियां, रक्तचाप और मधुमेह की शिकायत थी. यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि ऐसी बीमारियों में प्रदुषण एक बड़ा कारण है तथा हमारे शहरों में वाय एवं जल प्रदुषण लगातार बढ़ता जा रहा है. इस कारण दवाओं का असर कम होता है

और अन्य बीमारियां फ्लू को अधिक घातक बना देती हैं. केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय राज्यों के साथ निरंतर संवाद कर मौसमी बुखारों की स्थिति पर नजर रख रही है. स्वाइन फ्लू समेत अन्य मौसमी बुखार दुनिया में हर साल 30 से 50 लाख लोगों को ग्रसित करते हैं तथा तीन से साढे छह लाख लोग अकाल मृत्यु के शिकार होते हैं. अन्य जगहों की तरह हमारे यहां भी एक मुश्किल है कि रोगाणुओं का कहर साल के अलग-अलग महीनों में अलग-अलग जगहों पर बरपा होता है. इस हिसाब से ही टीकाकरण और उपचार के इंतजाम होने चाहिए. रोगाणुओं के सक्रिय होने में मौसम और लोगों की स्वास्थ्य की दशा की अहम भूमिका होती है, तो इन बीमारियों का सामना करने की चुनौती को अलग से न देखकर स्वास्थ्य सेवा की व्यापक तैयारी के हिस्से के रूप में देखा जाना चाहिए. देश के उत्तरी और उत्तर-पश्चिमी इलाकों में स्वाइन फ्लू और अन्य रोगाणुजन्य बुखारों से ज्यादा लोग बीमार होते हैं. इन राज्यों में उपचार की पुख्ता व्यवस्था करने के साथ आम लोगों तथा ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत स्वास्थ्यकर्मियों को जागरूक बनाने की कोशिशें भी लगातार होनी चाहिए, क्योंकि एक तरह के बुखार के बाद दूसरे तरह की बीमारी आन खडी होती है.



# प्रेम शब्द

म के बिना आप कुछ भी करें, आप कर्म की संपूर्णता को नहीं जान सकते. अकेला प्रेम ही आदमी को बचा सकता है. लेकिन हम लोग प्रेम में नहीं हैं. हम वास्तव में उतने सहज-सरल नहीं रह गये हैं. जितना हमें होना चाहिए. दूसरों के नाम पर आप अपने स्वार्थों के गर्त में डूबे हुए हैं, आप अपने ही घोंघेनुमा कवच में समाये हैं. आप समझते हैं कि आप ही इस सुंदर संसार का केंद्र हैं. किसी वृक्ष, किसी फूल या बहती हुई नदी को देखने के लिए आप कभी भी नहीं ठहरते और अगर कभी ठहर भी जाते हैं, तो आपके मन में कई विचार, स्मृतियां और जाने क्या-क्या उतर आता है, लेकिन आपकी आंखों में सौंदर्य और प्रेम ही नहीं उमड़ता. प्रेम क्या है? हम यह चर्चा नहीं कर रहे कि प्रेम को क्या होना चाहिए? हम यह देख रहे हैं कि वह क्या है, जिसे हम प्रेम कहते हैं. आप कहते हैं- 'मैं फलां से प्यार करता हूं.' मैं नहीं जानता कि आपका प्रेम क्या है. मुझे संदेह है कि आप किसी भी चीज से प्रेम करते हों. क्या आप प्रेम शब्द का अर्थ भी जानते हैं ? क्या प्रेम आमोद-प्रमोद या मजा है ? क्या प्रेम ईर्ष्या है ? क्या वह व्यक्ति प्रेम कर सकता है, जो महत्वाकांक्षी हो? क्या एक व्यक्ति जो कि प्रतियोगिता में शामिल हो, वह प्रेम में हो सकता है? और आप सब प्रतियोगिता में हैं. सोचिये कि क्या आप नहीं हैं? अच्छे जॉब, बेहतर पद, प्रतिष्ठा, अच्छा घर, अधिक महान विचार, अपनी अधिक सुस्पष्ट छवि बनाने में आप लगे हैं. क्या यह सब प्रेम है ? क्या आप तब प्रेम कर सकते हैं, जब आप अपनी ही पत्नी या पित या बच्चों पर प्रभुत्व जमा रहे हों ? जब आप ताकत या शक्ति की खोज में लगे हों ? तब क्या प्रेम की कोई संभावना बचती है? इन सबको नकारते, अस्वीकार करते हुए हम जहां पहुंचते हैं, वहीं प्रेम होता है. इसलिए आपको उस सबको नकारना होगा. जो प्रेम नहीं है. जो कि महत्वाकांक्षा ना हो, प्रतियोगिता ना हो, क्रोध या आक्रामकता ना हो, हिंसा ना हो. भले ही यह सब बोलचाल में हो या आपके कृत्यों में या विचारों में, पर न हो. जे कृष्णमूर्ति

# कुछ अलग

# 'कहां तुम चले गये!'

एक से बढ़कर एक गजलों और गीतों शफक महजबीन को नर्म लहजे वाले अंदाज में अपने होठों से छुकर अमर कर देनेवाले और टिप्पणीकार अपनी शहद जैसी आवाज से जग को mahjabeenshafaq@gma.l.com

जीत लेनेवाले गायक जगजीत सिंह जी अगर इस दुनिया में होते, तो आज वे अपना 78वां जन्मदिन मना रहे होते. आज भी उनकी मखमली आवाज का जादू लाखों दिलों को बहुत सुकून देता है.

जगजीत सिंह का जन्म आठ फरवरी, 1941 को श्रीगंगानगर, राजस्थान (तब बीकानेर स्टेट) में हुआ था. हालांकि, मूलतः उनका परिवार पंजाब के रूपनगर जिले (पुराना नाम रोपड़) का रहनेवाला था. उनके बचपन का नाम जगमोहन सिंह था, जिसे बाद में उन्होंने जगजीत सिंह कर लिया. उन्होंने जिंदगी में बहुत सारे उतार-चढाव देखे.

जगजीत सिंह के पिता इन्हें इंजीनियर बनाना चाहते थे, लेकिन इनकी रुचि संगीत में थी. साल 1965 में जब वे संगीत को अपना करियर बनाने के लिए मुंबई गये, तब वहां उन्हें काफी संघर्ष करना पड़ा और होटलों तक में गाना पड़ा. गजल गायक के रूप में स्थापित होने के बाद उन्हें सबसे बड़ा सदमा तब लगा, जब इनका अठारह साल का बेटा एक हादसे में चल बसा. एक कार्यक्रम में जब वे गजल- 'दर्द से मेरा दामन भर दे या अल्लाह' गा रहे थे, तो गाते-गाते रोये जा रहे थे. कहते हैं कि दिल से जुड़े अपनों के साथ कुछ बुरा होने की आहट हमें महसूस हो ही जाती है. जैसे ही कार्यक्रम खत्म हुआ, उनके बेटे की मौत की खबर मिली. फिर तो वे पूरी तरह टूट गये.

को तोड़ने की घोषणा ने अंतरराष्ट्रीय राजनीति में एक अप्रत्याशित संकट पैदा कर दिया है. रूस के राष्ट्रपति पुतिन ने कड़ा रुख अपनाते हुए यह ऐलान करते देर नहीं लगायी कि बदले हालात में रूस के लिए इस ऐतिहासिक समझौते का पालन करना असंभव है, और वह भी अपने सामरिक हितों की रक्षा के लिए इस तरह के

मेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप द्वारा आईएनएफ

(इंटरमीडिएट रेंज न्यूक्लियर फोर्सेज) संधि

परमाण्विक हथियारों के शोध, परीक्षण और उनकी तैनाती के लिए स्वतंत्र है. पुतिन के अनुसार, अनुबंध रूस ने नहीं तोड़ा. अमेरिका के इकतरफा निर्णय के बाद उसके लिए कोई दूसरा विकल्प शेष नहीं रह गया है. क्या इसे एक नये शीतयुद्ध की शुरुआत समझा जाये, जिसमें परमाण्विक हथियारों की आत्मघाती अंधी दौड़ कभी भी विश्व को सर्वनाश की कगार तक पहुंचा सकती है?

साल 1988 में रोनाल्ड रीगन एवं मिखाइल गोर्बाचेव के बीच आईएनएफ समझौते पर हस्ताक्षर हुए थे, जिसमें दोनों पक्षों ने यह सहमति बनायी थी कि मध्यम दुरी (500 से 5.500 किमी) तक मारक क्षमता वाले प्रक्षेपास्त्रों की संख्या तत्काल घटायी जायेगी. दोनों महाशक्तियां इन हथियारों के जखीरे को संतुलित रखेंगी और तय से अधिक हथियारों को नष्ट कर देंगी. परस्पर भरोसा बढ़ाने की दिशा में यह अभूतपूर्व ऐतिहासिक कदम था. ये प्रक्षेपास्त्र यूरोप में तनाव के कारण थे, इसलिए इनका निरोध-नियंत्रण तनाव शैथिल्य के लिए निर्णायक समझा जाता रहा है. विश्वव्यापी परमाण्विक अप्रसार अभियान को गतिशील बनाने के लिए यह उदाहरण उपयोगी साबित हुआ. यह भी ज्यादा उल्लेखनीय है कि सोवियत संघ के विघटन के बाद दुनिया की इन दो महाशक्तियों के बीच यही

एक सामरिक संधि अब तक अक्षत थी. यहां यह जोड़ना भी जरूरी है कि पिछले चार-पांच वर्षों से यह आशंका मुखर की जाती रही थी कि इस संधि

आरके सिन्हा

सदस्य, राज्यसभा

संस्कृत भारतीय

अतिप्राचीन, समृद्ध

और महत्वपूर्ण भाषा

है. आधुनिक भारतीय

भाषाएं संस्कृत से ही

उत्पन्न हुई हैं . इतनी

समृद्ध भाषा को कोई

कैसे कह सकता है?

जगजीत सिंह की गायकी का

अंदाज बिल्कुल अलग था- नर्म,

मुलायम, शहद जैसा मीठा, इसलिए

लोगों के दिलों में उतरने में इन्हें कोई

ज्यादा वक्त नहीं लगा. गजल पेश करने

के इनके अंदाज ने गजल को उन आम

लोगों तक पहुंचाया, जिन्हें गजलों की समझ कम थी. उन्होंने

आसान लफ्जों वाली गजलों को सादगी भरी और सीधा दिल में

उतर जानेवाली आवाज देकर अमर कर दिया. एक बार उन्होंने

कहा भी था कि 'कलाम सिंपल होना चाहिए, जिससे सुननेवाला

जगजीत सिंह ने गीतकार और शायर निदा फाजली की

ज्यादातर गजलें गायी हैं. फिल्म 'सरफरोश' की गजल 'होश

वालों को खबर क्या बेखुदी क्या चीज है' से लेकर फिल्म

'तुम बिन' की गजल 'कोई फरियाद तेरे दिल में छुपी हो जैसे'

तक एक लंबा सिलसिला है. निदा के लफ्ज और जगजीत की

आवाज, इस संगीतमय जोड़ी की पूरी दुनिया कायल है. निदा

फाजली कहते थे, 'जगजीत की आवाज से मेरी गजलों का

स्वरलहरियों के साथ घुलकर श्रोताओं के कानों में मिसरी

घोल देती है. ब्रेम हेमरेज के चलते अस्पताल में इन्होंने अपनी

आखिरी सांस 10 अक्तूबर, 2011 को ली. गजल प्रेमियों के

दिलों में इन्हें लेकर यह सवाल हमेशा रहेगा- 'चिट्ठी न कोई

संदेश, जाने वो कौन सा देश, जहां तुम चले गये!'

पद्मभूषण जगजीत सिंह की मखमली आवाज वाद्यों की

रिश्ता तब से है, जब मिर्जा गालिब जवान हुआ करते थे.'

आसानी से समझ सके और सुनकर उसे आराम मिले.'

व्यक्ति सांप्रदायिक

उपमहाद्वीप की

rk.shore.s.nha@sansad.n.c..n

का भविष्य अनिश्चित है. अमेरिकी प्रशासन यह आरोप लगाता रहा है कि रूस अपने देश के वचन का पालन नहीं कर रहा है. वह इस श्रेणी के प्रक्षेपास्त्रों के परीक्षण का काम गुप्त रूप से कर रहा है, उपग्रहों तथा निष्पक्ष पर्यवेक्षकों के माध्यम से निरीक्षण की जो पद्धति तय की गयी थी, उसमें रूस सहयोग नहीं कर रहा है आदि. दूसरी तरफ रूस ऐसे ही अभियोग अमेरिका पर लगाता रहा है. साल 2014 से 2018 तक यही रस्साकशी चलती रही है.

रूस का कहना है कि चीन के पास ऐसे-ऐसे प्रक्षेपास्त्र हैं और इनके खतरे को देखते हुए सिर्फ रूस को ही एकतरफा निशस्त्रीकरण के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता. युक्रेन संकट के विकराल रूप धारण करने तथा इस मोर्चे पर रूसी सैनिक हस्तक्षेप ने भी अमेरिका को बौखला दिया है. सीरिया के गृहयुद्ध में असद के समर्थन के कारण भी अमेरिका की चिंताएं बढ़ी हैं. समस्या की जटिलता के अन्य कारण भी हैं.

रूस का मानना है कि परमाण्विक अप्रसार के बारे में अमेरिका दोहरे मानदंड अपनाता है. पाकिस्तान हो

या उत्तरी कोरिया, वह इन देशों की परमाण्विक तस्करी की तरफ आंखें मुंदे रहा है. यह जगजाहिर होने पर भी कि किम जोंग-उन अमेरिका को दिये आश्वासनों को नकार आज भी परमाण्विक अस्त्रों से सज्जित मिसाइलों का



पुष्पेश पंत अंतरराष्ट्रीय मामलों के जानकार

pushpeshpant@gma.l.com

आईएनएफ पिछले दशक से ही मृतप्राय रही है, इस घड़ी ट्रंप और पुतिन की नूराकुश्ती उसके देहांत की औपचारिक घोषणा भर है, जिससे संसार सर्वनाश की कगार तक अचानक नहीं पहुच गया है .

> रणनीति अपना रहे हैं. आज का अमेरिका खुद मंदी की चपेट में है और पुतिन-राज वाला रूस अराजकता और टूट से आतंकित हताश राज्य नहीं है. पुतिन के तेवर आक्रामक और जुझारू हैं तथा वह पहले पलक झपकानेवाले नहीं. इससे कुछ

परीक्षण कर रहा है, ट्रंप उस उद्दंड

निरंकुश देश के साथ राजनियक

संवाद जारी रखने को उत्सुक हैं. रूस

का आरोप यह भी है कि आईएनएफ

संधि का उल्लंघन पहले अमेरिका ने

ही किया, जब उसने मोटर वाहनों पर

छोटे-छोटे प्रक्षेपास्त्र रख आईएनएफ को झुठलाने की रणनीति अपनायी.

तरह समझने के लिए इस बात को

रेखांकित करना जरूरी है कि ट्रंप

एकाधिक बार यह स्पष्ट कर चुके हैं

कि अटलांटिक बिरादरों को अपनी

सुरक्षा के खर्च में हाथ बंटाना होगा.

भविष्य में ये यूरोपीय देश निःशुल्क

अमेरिकी परमाण्विक छत्रछाया का

सुख नहीं भोग सकते. दूसरे शब्दों

में, अगर शस्त्रों की नयी दौड़ शुरू

होती भी है, तो उसका कमरतोड़

बोझ अमेरिका की तुलना में रूस

पर कहीं अधिक पड़ेगा! विद्वानों का

मानना है कि 1980 वाले दशक में

सोवियत संघ को खस्ताहाल बना

दिवालियेपन की कगार तक पहुंचाने

के लिए रोनाल्ड रीगन ने 'स्टार

वार्स' का मायाजाल रचा था, पुतिन

को कमजोर करने के लिए ट्रंप यही

मौजूदा संकट को अच्छी

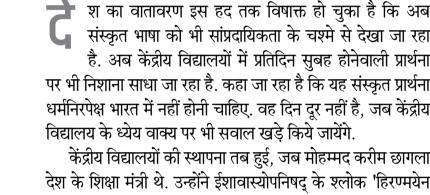
दो महाशक्तियों की नूराकुश्ती विश्लेषक यह नतीजा निकालने की उतावली कर रहे हैं कि परमाण्विक हथियारों की खतरनाक दौड़ दोबारा शुरू हो चुकी है.

दोनों महाशक्तियां यह जानती हैं कि परमाण्विक हथियारों के प्रयोग की परिणति उभयपक्षीय परमाण्विक सर्वनाश में ही हो सकती है. इसे अंग्रेजी में 'मैड' (म्युचुअली अस्योर्ड डिस्ट्रक्शन) का नाम दिया गया है. आतंक का संतुलन ही हिरोशिमा-नागासाकी से आज तक संसार को परमाण्विक विस्फोट से निरापद रखने में कामयाब रहा है. यह उपलब्धि किसी संधि की नहीं. असल में 'स्टार्ट' या 'सौल्ट' नामक संधियां या वैश्विक स्तर पर परमाण्विक अप्रसार को लागू करवानेवाली 'पार्शियल' या 'कंप्रिहेंशियल टेस्ट बैन ट्रिटी' आदि संधियों का शिकंजा भारत जैसे उदीयमान परमाण्विक देशों को पंगु बनाने के लिए कसा जाता रहा है.

आतंक के संतुलन के कारण अमेरिका तथा रूस का शक्ति-संघर्ष परोक्ष रूप से किसी निर्णायक महासंग्राम में नहीं, क्षेत्रीय मोर्चों में जारी रहा है. एक-दूसरे के मर्मस्थल पर संहारक वार करने की क्षमता वाले प्रक्षेपास्त्र मध्यम दुरी वाले ये हथियार नहीं, वरन अंतरमहाद्वीपीय (इंटरकांटिनेंटल बैलिस्टिक मिसाइल) हैं, जिन्हें लड़ाकू बमबार विमानों तथा समुद्र के गर्भ में अदृश्य और सदैव चलायमान पनडुब्बियों में तैनात किया गया है. पहला वार करने का दुस्साहसी यह जानता है कि इसे झेलने के बाद भी सर्वनाशी जवाबी हमला करने की क्षमता घायल शत्रु की बची रहेगी. अगर शांति बरकरार रही है, तो परमाणु हथियारों से संपन्न महाशक्तियों के जिम्मेदार आचरण के कारण नहीं, बल्कि इसी डर से.

दरअसल, आईएनएफ पिछले दशक से ही मृतप्राय रही है, इस घड़ी ट्रंप और पृतिन की नुराकुश्ती उसके देहांत की औपचारिक घोषणा भर है, जिससे संसार सर्वनाश की कगार तक अचानक नहीं पहुंच गया है.

# सांप्रदायिक चश्मे से न देखें संस्कृत को



देश के शिक्षा मंत्री थे. उन्होंने ईशावास्योपनिषद् के श्लोक 'हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्, तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये' से ही केंद्रीय विद्यालयों का ध्ययेवाक्य 'तत्वंपूषण अपावर्णु' को चुना, जिसका अर्थ है- सत्य जो अज्ञान के पर्दे से ढंका है, उस पर से पर्दा उठा दो. इस प्रार्थना के विरोध में सुप्रीम कोर्ट में एक याचिका भी दाखिल हुई

है. इंडोनेशिया की जलसेना का ध्येय वाक्य 'जलेष्वेव जयामहे' यानी 'जल में ही जीतना चाहिए' है. जब इस्लामिक देश को संस्कृत से परहेज नहीं है, तब भारत में संस्कृत की प्रार्थना पर ऐतराज क्यों? भारतीय सेना के तीनों अंगों के ध्येय वाक्य भी संस्कृत में हैं. तो क्या ये सब सांप्रदायिक हैं ? दरअसल, देश में जनता का सेकुलरिज्म की ओवरडोज पिलायी जा रही है. देशभर में 1,128 केंद्रीय विद्यालय हैं, जिनमें एक जैसी यूनिफॉर्म और एक जैसा ही पाठ्यक्रम है. यह दुनिया की सबसे बड़ी स्कूल चेन है. रोज लगभग 12 लाख बच्चे यही प्रार्थना करते हैं. पिछले साढ़े पांच दशकों में करोड़ों छात्र केंद्रीय विद्यालय से यही प्रार्थना से भावनात्मक रूप से जुड़े हुए हैं. क्या याचिकाकर्ता ने भारत के करोड़ों नागरिकों की भावना पर ठेस नहीं पहुंचायी है? क्या इसके लिए आपराधिक मुकदमा नहीं चलाया जाना चाहिए? इन स्कूलों ने देश को एक से बढ़कर एक प्रतिभाएं दी हैं. इसे शुरू करने के मूल में विचार भी यही था, ताकि सरकारी कर्मचारियों के बच्चों को कर्मियों के ट्रांसफर की स्थिति में नये शहर में जाने पर केंद्रीय विद्यालय में दाखिला आसानी से मिल जाये.

केंद्रीय विद्यालयों में प्रार्थनाएं वेदों और उपनिषदों से हैं. इसे पूरे विश्व में सभी ने स्वीकार किया है. हमारे मूल संविधान में भी रामायण, महाभारत और उपनिषदों के श्लोकों और चित्रों को ही समाहित किया गया है. इसको दोनों सदनों की लाइब्रेरी और दिल्ली के तीन मूर्ति लाइब्रेरी में भी देखा जा सकता है. मूल प्रति का कवर कमल के पुष्पों के कोलाज से बना है. प्रथम पृष्ठ पर मोहन-जोदड़ो का रेखाचित्र है. प्रत्येक पृष्ठ को प्रसिद्ध चित्रकार नंदलाल बसु ने रामायण और महाभारत के प्रसंगों की चित्रकारी से पृष्ठ के दोनों ओर के सुंदर बॉर्डर तैयार किये हैं.

अच्छी बात है कि बीजद के सांसद बी मेहताब ने पिछले सप्ताह

लोकसभा में पूछा कि क्या संस्कृत में कुछ बोलना सेकुलर नहीं है? उन्होंने केंद्रीय विद्यालयों में संस्कृत की प्रार्थना को अनिवार्य करने पर निचले सदन में कुछ लोगों के विरोध करने के बाद यह मुद्दा उठाया.

सुप्रीम कोर्ट में दाखिल याचिका में कहा गया है कि केंद्रीय विद्यालयों में होनेवाली प्रार्थना हिंदुत्व को बढ़ावा देती है. देश के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के काल में 15 दिसंबर, 1963 को केंद्रीय विद्यालय संगठन स्थापित हुआ था. उस वक्त महान शिक्षाविद् मोहम्मद करीम छागला देश के शिक्षा मंत्री थे. जिस प्रार्थना को सांप्रदायिक माना जा रहा है, उसे सन् 1963 से ही सभी केंद्रीय विद्यालयों में गाया जा रहा है. इससे शिक्षकों या विद्यार्थियों को तो कोई आपत्ति नहीं हुई. केंद्रीय विद्यालयों में की जानेवाली प्रार्थना है- 'असतो मा सदगमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मामृतमगमय' अर्थात् '(हमें) असत्य से सत्य की ओर ले चलो, अंधकार से प्रकाश की ओर ले चलो, मृत्यु से अमरत्व की ओर ले चलो.' इस प्रार्थना में हिंदू या हिंदुत्व कहां से आ गया है?

केंद्रीय विद्यालय के प्रतीक चिह्न पर एक ध्येयवाक्य है, 'तत्त्वं पूषन्नपावृणु.' यह ध्येय वाक्य यजुर्वेद के ईशावास्योपनिषद् के 15वें श्लोक से लिया गया है. जो ध्येयवाक्य सत्यदर्शन पर आधारित हो, उसे हिंदुत्वादी कहने का अर्थ है कि बाकी सभी असत्यवादी हैं.

राष्ट्रगान में संशोधन की मांग भी उठती रही है. तो क्या राष्ट्रगान में अधिनायक की जगह मंगल शब्द होना चाहिए? क्या राष्ट्रगान से सिंध शब्द के स्थान पर कोई और शब्द जोड़ा जाये ? ऐसी बेकार बातें क्यों की जाती हैं. साल 2005 में संजीव भटनागर ने सुप्रीम कोर्ट में एक जनहित याचिका दायर की थी, जिसमें सिंध भारतीय प्रदेश न होने के आधार पर जन-गण-मन से निकालने की मांग की थी. इस याचिका को 13 मई, 2005 को सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश आरसी लाखोटी की अध्यक्षता वाली खंडपीठ ने सिर्फ खारिज ही नहीं किया, बल्कि संजीव भटनागर की याचिका को 'छिछली और बचकानी मुकदमेबाजी' मानते हुए उन पर दस हजार रुपये का दंड भी लगाया था

केंद्रीय विद्यालयों की प्रार्थना पर आपत्ति से साफ है कि देश में कुछ शक्तियां देश को खोखला करने की दिशा में संलग्न हैं. संस्कृत भारतीय उपमहाद्वीप की अतिप्राचीन, समृद्ध और महत्वपूर्ण भाषा है. आधुनिक भारतीय भाषाएं जैसे, हिंदी, मराठी, सिंधी, पंजाबी, नेपाली आदि संस्कृत से ही उत्पन्न हुई हैं. इन सभी भाषाओं में यूरोपीय बंजारों की रोमानी भाषा भी शामिल है. बौद्ध धर्म (विशेषकर महायान) तथा जैन मत के भी कई महत्वपूर्ण ग्रंथ संस्कृत में लिखे गये हैं. इतनी समृद्ध भाषा को सांप्रदायिक कहनेवाला इंसान सामान्य तो नहीं ही होगा !

कार्टून कोना



### प बंगाल में सियासी ड्रामा ओवर

सारधा चिटफंड केस में सीबीआइ जांच पर मचा बवाल सुप्रीम कोर्ट के ताजा आदेश से थमने की उम्मीद जगी है. कोर्ट ने पुलिस कमिश्नर राजीव कुमार को सीबीआइ के सामने पेश होने और जांच में सहयोग करने का निर्देश दिया है. सुप्रीम कोर्ट के ताजा आदेश के मद्देनजर जांच के विरोध में धरने पर जमे राजीव और नेताओं को यह समझ लेना चाहिए कि लोकतंत्र में व्यवस्थागत प्रक्रियाओं के अतिक्रमण की इजाजत नहीं है. राजीव कुमार पर अदालत की अवमानना की तलवार भी लटक गयी है. सीबीआइ की इस कार्यवाही को केंद्र के निर्देश पर उठाया गया कदम बताया जा रहा है. राजीव कुमार की गिरफ्तारी पर रोक लग गयी. उनसे केवल पूछताछ होगी. बहरहाल केंद्र और राज्य दोनों को अपने हित के लिए ऐसे विवाद को न्योता नहीं देना चाहिए जिससे जांच एजेंसियों की साख और गंभीरता पर सवाल खड़े हो. जांच प्रक्रिया में दखलअंदाजी किसी भी सूरत में उचित

**अमन सिंह,** बरेली, उत्तर प्रदेश

# रोजगार में स्थानीय को प्राथमिकता

नहीं हो सकती है.

मध्यप्रदेश के कमलनाथ सरकार का यह फरमान कि राज्य में उद्योग लगाने वालों को 70 फीसदी रोजगार स्थानीय लोगों को देना होगा, एक स्वभाविक घोषणा है. आजादी के बाद से ही कई राज्य ऐसी घोषणा करते रहे हैं. ओडिशा, महाराष्ट्र, हरियाणा, केरल एवं हिमाचल प्रदेश जैसे राज्य स्थानीय आबादी को 70 से लेकर 90 फीसदी तक रोजगार देने का फैसला ले चुके हैं. इस नीति से किसी को कोई दुख होना भी नहीं चाहिए, क्योंकि जिन उद्योग घरानों ने सरकार से सब्सिडी, कर छूट तथा सस्ती जमीन ली है, उन्हें इस नीति का सहयोगी बनना भी चाहिए. उन बीमारू प्रदेशों के लिए यह अभिशाप हो सकता है जिनकी अधिकांश आबादी को बाहर जाकर काम-धंधा खोजना पड़ता है. अगर शत प्रतिशत राज्य, इस नीति को लागू कर दें और इसका दायरा बढ़ा कर थोक एवं खुदरा व्यापार तक कर देंगे. तब बीमारू प्रदेशों के लोगों को मुश्किल का सामना करना पडेगा.

जंग बहादुर सिंह, गोलपहाड़ी, जमशेदपुर

### राजनीतिक हिंसा बनायेगी नकारात्मक छवि

भारतीय राजनीति में हिंसक घटनाओं को किसी भी तरीके जायज नहीं ठहराया जाना चाहिए. पिछले दिनों बंगाल में बीजेपी की चुनावी रैली के दौरान हिंसात्मक घटनाएं देखने को मिली. त्रिपुरा में सत्ता परिवर्तन के बाद ऐसा मंजर देखने को मिला. केरल और देश के अन्य भागों में भी राजनैतिक हिंसा की खबरें देखने को मिलती है. आज हम विश्व के बड़े अर्थव्यवस्था के रूप में उभर रहे है. विज्ञान में भी अपने झंडे गाडे हैं. भारत में विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र होने के नाते बहुत से देशों के लिए एक आदर्श है. ऐसे में अगर देश के घरेलू राजनीति हिंसात्मक होगी, तो विश्व में हमारी नकारात्मक छवि बनेगी. देश के प्रबुद्धजनों एवं जिम्मेदार नागरिकों, नेताओं को इस दिशा में प्रयास करना चाहिए.

**सुमन कुमार सिंह,** रांची

# देश दुनिया से

# फ्रांस-जर्मनी के बीच ऐतिहासिक संधि

पिछली शताब्दी में, फ्रांस और जर्मनी के संबंधों में नाटकीय उतार-चढ़ाव आते रहे हैं, जिसमें शत्रुता से लेकर सुलह और सहयोग शामिल है. बीते 22 जनवरी को फ्रांस और जर्मनी ने आचेन में एक नयी मित्रता संधि पर हस्ताक्षर किया. प्राचीन शहर आचेन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि दोनों देशों द्वारा साझा की जाती है. संधि पर हस्ताक्षर के ऐतिहासिक मौके पर दोनों देशों ने एकीकरण के मार्ग पर आगे बढ़ने का दृढ़ संकल्प लिया. 'अमेरिकन फर्स्ट' अभियान की तर्ज पर अंतरराष्ट्रीय

संबंधों में राष्ट्रवादी प्रवृत्ति के

बढ़ते चलन का मुकाबला, अंतरराष्ट्रीय संघ का निर्माण करने और सामाजिक एकीकरण को बढ़ावा देना, इस संधि का उद्देश्य है. फ्रांसीसी राष्ट्रपति इमैनुअल मैक्रों और जर्मन चांसलर एंजेला मर्केल को उम्मीद है कि यह संधि यूरोपीय संघ के सामंजस्य को बढ़ायेगी और राष्ट्रवाद व लोकलुभावनवाद के कारण बढ़ती आक्रामकता का विरोध करेगी, साथ ही यह बाहरी खतरों से यूरोपीय संघ की जनता की रक्षा भी करेगी. अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, यूरोपीय संघ अमेरिका द्वारा परित्यक्त महसूस करता है. इसके अलावा, यूरोपीय संघ का मानना है कि उसके ऊपर बहुत ज्यादा बाहरी दबाव है. यह स्थिति यूरोपीय देशों को एकजुट होने का आह्वान करती है. जियांग फेंग



**पोस्ट करें** : प्रभात खबर, 15 पी, इंडस्ट्रियल एरिया, कोकर, रांची 834001, **फैक्स करें** : **0651–2544006**, मेल करें : eletter@prabhatkhabar..n पर ई-मेल संक्षिप्त व हिंदी में हो . लिपि रोमन भी हो सकती है

### Growth prop

As the RBI cuts the benchmark reporate, concerns over the fiscal deficit remain

arely four months after the Reserve Bank of India switched its monetary policy stance to one of 'calibrated tightening', signalling interest rates were set to trend higher, it has reversed direction. Not only did the RBI's monetary policy committee unanimously opt to revert to a 'neutral' posture, but the rate-setting panel unexpectedly decided, by a 4-2 majority, to cut the benchmark repo rate by 25 basis points, to 6.25%. The MPC's reasoning has been fairly straightforward. With Consumer Price Index-based inflation having continued to slow and projected to stay well below the medium-term target of 4% till at least the October-December quarter, the MPC saw an opportune moment to pivot to a growth-supportive stance. That there is a need to bolster economic momentum is evident from the RBI's downward revision of the forecast for growth in the first half of the next fiscal year. The projection has been lowered to a range of 7.2-7.4%, from 7.5% posited in the RBI's December statement, as moderating global growth and slowing overseas demand add uncertainties to the prevailing domestic imbalances. Specifically, production and import of capital goods, which is a key gauge of investment demand, contracted in November/ December and credit flows to industry remain muted. With an overall shortfall of 4% in rabi sowing across various crops, and storage in major reservoirs at just 44% of the full level, the slowdown in farm output growth may, worryingly, end up being more protracted.

The less-than-sanguine outlook for the rural economy is also reflected in the high-frequency indicators of the services sector. Data on sales of both motorcycles and tractors in December underscore weakening demand in the hinterland. This weakness in the farm sector is undergirding the unprecedented softness in food prices. The December CPI data showed continuing deflation in food items. While the RBI's inflation calculus clearly benefits from the ongoing trend in price gains, the MPC is justifiably cognisant of the tenuousness of the assumptions it has made for its forward projections. Importantly, while it has assumed a normal monsoon this year, the central bank acknowledges that any variation in geographic spread or uneven distribution in terms of time could roil the inflation outlook. Inexplicably, however, the RBI's policy statement fails to make any mention of its hitherto abiding concern about fiscal prudence. With the Interim Budget showing some slippage from the fiscal roadmap and projecting a budget deficit of 3.4% for both the current financial year and the next, the risk of government borrowing crowding out private investment demand remains tangibly real. One must assume that the central bank will resume normal service on providing salutary caution to the government after the coming general election.

# Still partisan

Trump was restrained in his State of the Union address, but did nothing to bridge the divide

**▼**n his second State of the Union address, President Donald Trump demonstrated the capacity to step Laback from his polemical debating style on social media without yielding ground to his detractors on matters of domestic policy at the top of his agenda. These include immigration, jobs for Americans, and conservative values including the pro-life movement. First, Mr. Trump used the opportunity to speak before a joint session of Congress to reiterate his desire to build a wall along the Mexican border, even as he clarified this could include the use of steel slats. The worrisome thought on the minds of at least 800,000 government workers, who were furloughed without pay for 35 days during the longest federal government shutdown in U.S. history, must have been whether Mr. Trump will again insist that Congress allocate \$5.7 billion to build the wall, and precipitate another shutdown. Second, he underscored that his core agenda on job creation for Americans was proceeding apace, noting that his administration had "created 5.3 million new jobs and importantly added 600,000 new manufacturing jobs" - a claim subsequently noted to be an exaggeration. Third, the anti-abortion movement got a boost from the two whole paragraphs in the speech calling on Congress to pass legislation to prohibit late-term abortion.

On foreign policy too, Mr. Trump appeared to hold firm to the ideas and strategies his administration has espoused through his term in office, including attacking the regime of Nicolás Maduro in Venezuela, for "socialist policies have turned that nation... into a state of abject poverty and despair"; and the government of Iran as a "radical regime" that does "bad, bad things", justifying the U.S. withdrawal from the nuclear agreement with Tehran. It may have come as a pleasant surprise, or relief, to some that Mr. Trump's address did not take on the darkly foreboding undertones of his inaugural speech. But his plea for both major parties to "embrace the boundless potential of cooperation, compromise, and the common good" sounded hollow, given the ground realities of his administration's policy effects. In her response to the address, Democrat and former Georgia gubernatorial candidate Stacey Abrams decried the harsh economic pinch of the government shutdown, countering Mr. Trump's claims of working for the interest of the middle-class American. She highlighted the omission of the gun control debate in the speech, the silence over voter suppression, rising higher education fees, and so on. Unless Mr. Trump genuinely reaches across the political divide to connect meaningfully with over 65 million voters who opposed him in the 2016 election, partisan rancour will remain in the political system and threaten its foundations.

# Governing India's many spaces

Ill fares the land where wealth accumulates, but the social and natural environment suffer



PULAPRE BALAKRISHNAN

s the general elections approach, it would be politic to take stock of the progress made by the incumbent party and look out for the areas that call for particular attention by the one that gains power. Without anticipating complete agreement on the indicators that ought to be used, I look at the changes since 2014 in three indices for India. These are the indices of the 'Ease of Doing Business' (EDB), 'Human Development' (HDI) and 'Environmental Performance' (EPI). They are self explanatory, and their importance unlikely to be contested, even though they may not exhaust all concerns. Published by separate international bodies, they are used to rank the world's countries according to their performance in the related sphere. Rankings by themselves do not reveal the level of attainment but they do convey how far a country is from the glo-

### The business ecosystem

The EDB, an indicator put out by the World Bank, is meant mainly as an index of the effect of government regulations on running a business. It is also meant to reflect the extent of property rights in a society. Responses are sought from government officials, lawyers, business consultants, accountants and other professionals involved in providing advice on legal and regulatory compliance. A country's ranking is based on the

extent to which government regulations facilitate the following: starting a business, obtaining construction permits, getting an electricity connection, registering property, accessing credit, protection of investors, paying taxes, trading across borders, enforcement of contracts and resolving insolvency. The Narendra Modi government has set much at store by India's improved ranking in terms of the EDB index. Actually, the improvement is considerable. From a rank of 134 in 2014, India's rank improved to 77 in 2018. As 190 countries were ranked in 2018, India was in the top 50%. The position is not spectacular but the improvement is, as said, noteworthy.

It is important to note that the use of the EDB has not been without controversy, with the World Bank's Chief Economist, a Nobel Laureate, suggesting in an interview that in the past political bias may have crept into the ranking of countries. Let us for a moment overlook this episode and assume that in the case of India the ranking reflects reality. Perhaps a bigger problem with the EDB is that it measures the effect of government regulations alone. While it is important to take this aspect into account, in any situation the ease of doing business is dependent upon other factors too. One of these is the availability of 'producer services', with electricity, water supply and waste management coming to mind. There is little reason to believe that this infrastructure has improved in India in the last five vears. The Planning Commission used to release data on infrastructural investment, but we have had none since its demise. Despite all these shortcomings, it is yet important to be concerned with the ease of doing business in India, an



aspect that has been given little or no importance in public policy for over 50 years, and to note that the EDB ranking for the country shows significant improvement since 2014.

### A true measure

We may turn next to the better known Human Development Index. It is the result of a rare India-Pakistan collaboration in the global discourse on public policy, having been devised by Amartya Sen and Mahbub ul Haq for the United Nations Development Programme. The HDI is a combination of indicators of income, health and education in a country. Its conceptual basis has been critiqued. First, it has been pointed out that the index combines incommensurate categories, as income, health and education are not substitutes. Second, while it does go beyond purely economic measures of progress, in that it looks at the health and education achievements in a population, it can say little about the 'quality' of development. As pointed out by Selim Jahan of the UNDP, data can '[tell] us only a part of the story about people's lives. For instance, it is increasingly clear that it is not enough simply to count how many children are in school: we need also to know whether they are learning anything." He could have had India in mind!

Nevertheless the HDI has now gained reasonable acceptance globally as indicative of the development strides a country has taken. When we turn to the HDI, we find that India's ranking has not altered since 2014. India was ranked 130 in 2014, and has remained in the same place out of 185 countries in 2018. It is of relevance here that India's HDI ranking has not improved despite it being the world's fastest growing major economy in recent years, as the government often points out in its assessments. This despite income being a component of the index. What this reveals is that an economy can grow fast without much progress in human development. Also, India's HDI position in the bottom third of countries points to how much it needs to progress to earn the label 'the world's largest democracy'.

**Environmental costs** Finally, we may look at India's recent record on the Environmental Performance Index. The EPI is produced jointly by Yale and Columbia Universities in collaboration with the World Economic Forum. The index ranks countries on 24 performance indicators across several 'issue categories', each of which fit under one of two overarching objectives, namely, environmental health and eco-system vitality. The issue categories are air quality, water and sanitation, water resources, agriculture, forests, fisheries, biodiversity and habitat, and climate and energy. These metrics are meant to serve as a gauge at a national level of how close countries are to accepted environmental policy goals. In 2018 India ranked 177 out of 180 countries, having slipped from an already very low rank of 155 in 2014. The country is today among the worst performing on the environmental front and its ranking has worsened over the past five years.

We now have indicators of the progress India has made in the past five years in the three crucial spheres of business, human development and the natural environment. A clear picture emerges. The government has aggressively pursued an improvement in the business environment. This appears to have yielded fruit in terms of an improvement in the EDB index. However, at a time when it has been the fastest growing economy in the world, India's rank on human development has remained unchanged and on environmental performance has slipped close to the last place.

These outcomes would not surprise anyone familiar with public policy since 2014. The Narendra Modi government has marginally lowered health and education expenditure as a share of national income and distinctly lowered environmental standards. An instance of the latter would be the Coastal Regulation Zone Notification of 2018 which allows construction and tourism development on land earlier considered inviolable due to its ecological value. This de-regulation is a setback for India. It is only one instance of the failure to recognise the plunder of India's natural capital taking place at an accelerated pace. Political parties now fervently making a pitch to govern India must indicate how they will reverse it. Ill fares the land where wealth accumulates and nature frays.

Pulapre Balakrishnan is Professor, Ashoka University, Sonipat and Senior

# The road to peace runs through Tehran

The Iranian card could help India enhance its role in stabilising Afghanistan



ANITA INDER SINGH

**¬** ven if an American military pullout from Afghanistan is on the cards, the U.S. will want to leave behind a stable and any peace settle ment in Afghanistan will stand a better chance of staying on the rails if it is supported by regional powers. In other words, ties between Afghanistan and its neighbours, including Iran, will impact the security of southern and western Asia. Like India, Russia, China and the U.S., Iran would want to see a steady hand at the helm in Afghanistan. While lacking military influence, India can build on its good ties with the U.S. and Iran to secure Afghanistan.

### **Iranian continuity**

Iran is not a newcomer to regional diplomacy in Afghanistan. First and foremost. India should try to dissuade the U.S. from dealing with Iran, Russia and China as enemies. In fact, U.S. President Donald Trump's perception of all three as foes is at odds with America's earlier engagement with

them to end its military campaign in Afghanistan. For instance, from 2014 to 2016, Washington and Moscow quietly arranged talks on the Afghan peace process. The meetings, known as the 6+1 group, included representatives from Afghanistan, China, India, Iran, Pakistan, Russia, and the U.S. The 6+1 process assumed that each of these countries was essential to the achievement of a political settlement in Afghanistan. Moreover, last November, the U.S. and the Taliban joined for the first time the Russia-hosted conference in the hope of promoting a negotiated solution to achieve peace and national reconciliation Afghanistan.

Regional powers could put their weight behind a negotiated settlement that will ensure Afghanistan's stability. Iran, Russia and China - and the Central Asian states with which India and Afghanistan wish to cooperate in countering terrorism - fearf that continued instability in Afghanistan could spill over into their countries. India will also be adversely affected if negotiations break down. In that event, extremist exports from Pakistan to Afghanistan or India would probably increase.

It could be worthwhile for India to explore the Iranian diplomatic options to secure Afghanistan. On good terms with Tehran, New Del-



hi would gain by developing the Chabahar port in southern Iran. ana looking beyona Chabanar, in dia, Iran and Russia were the founding countries of the International North-South Transport Corridor project - as long ago as 2002. The corridor is intended to increase connectivity between India, Iran, Russia, landlocked Afghanistan and Central Asia – and Europe. It would also advance their trading interests.

India could remind Washington about the past coincidence of American and Iranian interests on Afghanistan. Together with the U.S. and India, Iran supported the overthrow of the Taliban in 2001. In the international negotiations which followed in Bonn that year, Iran supported the installation of Hamid Karzai as President and favoured the exclusion of the Taliban from his government.

Admittedly, U.S.-Iran ties have often been fractious. As the U.S. imposed sanctions on Iran after 2005, Iran saw the Taliban countering American influence on its borders and gave them arms. Iran continues to oppose the U.S.'s presence in Afghanistan, largely because it fears that American troops in Afghanistan could be used against it. To allay Iranian fears, Afghanistan recently said that it would not allow the U.S. to use its bases in the country to conduct

any act of aggression against Iran. Last December, Iran also held talks with the Taliban with the knowledge of the Afghan government. But it should assure Kabul of its good intentions. In recent months Afghan officials have accused Iran, which the U.S. says is trying to extend its influence in western Afghanistan, of providing the Taliban with money, weapons and explosives. Iran denies the

The U.S. and Iran could be advised of the mutual, and regional, advantages of improving ties. Such advantages could range from stability in Afghanistan, and beyond, to increased trade prospects, especially in South and West Asia.

### Win-win prospects

Iran could gain by strengthening trading ties with a secure Afghanistan. In 2017 it supplanted Pakistan as Afghanistan's largest trading partner. At a time when Iran's economy is weighed down by American sanctions, it would want to build up trade ties with neighbour-

The U.S. would also gain. After +all, Iran is the geopolitical hub connecting South, Central and West Asia and the Caucasus. The Strait of Hormuz, that crucial conduit, links Iran westwards to the Persian Gulf and Europe, and eastwards to the Gulf of Oman, South and East Asia. Moreover, an improvement in U.S.-Iran relations would be welcomed by America's European allies, who are opposed to Washington's unilateral sanc-

The U.S. should not lose the chance to act in concert with Iran to improve Afghanistan's security. And, as the U.S. airs the idea of withdrawal from Afghanistan, now is the right time for India to act as the honest broker between them and to play a larger role in regional security. The status of India and Iran as regional powers as well as the stability of South, Central, and West Asia would simultaneously be enhanced. It is to be hoped that Mr. Trump's display of America's "superpower" in opposition to Iran – and Russia and China - will not block such an opportunity to stabilise Afghanistan.

Anita Inder Singh is Founding Professor, Centre for Peace and Conflict Resolution

### LETTERS TO THE EDITOR Letters emailed to letters@thehindu.co.in must carry the full postal address and the full name or the name with initials.

Crime and punishment It is such a travesty that people who recreated the assassination of Mahatma Gandhi were booked under ordinary sections of the Indian Penal Code and students who voiced their dissent in Jawaharlal Nehru University were booked under Section 124A ("Hindu Mahasabha leader, husband held", Feb. 7). It shows how the law of the land works: the National Security Act is invoked for those who are accused of cow slaughter, sedition is invoked for those who dissent, but neither is invoked for those who denigrate the Father of the Nation. DEEPISH MANI,

**EVM debate** It is a well-established fact that with VVPATs. manipulation of EVMs is

practically impossible

("Checks and balances", Feb. 7). If glitches are the argument for replacing systems, we cannot trust any system in the world. The paper ballot is most susceptible to rigging. It is a closed chapter in this country. The focus should be on ending VVPAT glitches. Political parties must stop crying foul over a well functioning system. P. MANGALACHANDRAN,

**U-turn on Sabarimala** It is sad to see the Travancore Devaswom Board, which utilises public money, changing its stand in the Supreme Court, in line with the Kerala government's stand ("TDB changes stand, supports SC judgment on Sabarimala", Feb. 7). It has let down believers. How can the TDB support something that is against custom and why has it suddenly changed its stand? B. VEERAKUMARAN,

The centuries-old belief that Lord Ayyappa is a 'naishtika brahmachari' is an amusing argument to be put forth in the Supreme Court ("Bench reserves orders on Sabarimala review petitions", Feb. 7). Has the Lord ever claimed that he is a 'naishtika brahmachari'? Temple idols are treated as legal entities so that legal issues associated with the administration of temple property can be settled. No human being has any legal right to declare what an idol in a temple, in its human manifestation, likes or dislikes. So the argument above is not valid legally. In

the matter of right to

worship in a temple, the

only arguments that are

relevant are those pertaining to customs and traditions that are followed in that temple with the general consensus of its devotees. But in the case of any conflict between customary practices and the Constitution, the Constitution prevails S.P. ASOKAN,

**Unstable government** Neither is the Chief Minister willing to step down, nor is the BJP willing to bring a no-confidence motion in the House ("Karnataka Congress warns dissident MLAs", Feb. 7). Those MLAs who cannot seem to make up their minds about whom to support but are continuing to enjoy power should come out in public and end this drama once and for all. The chaos in the State is a lesson for all those who want a coalition

government. The path for such governments is never smooth. V.S. GANESHAN,

### **Speaking out**

Bengaluru

It is undeniable that this country needs lawyers like Prashant Bhushan ("SC may curb advocates from speaking on cases", Feb. 7). Mr. Bhushan is a man of outstanding credentials and nobody can doubt his integrity of purpose in cleaning the cobwebs of power. How can one say that what Mr. Bhushan said would amount to contempt

even though he was merely conveying what the Leader of the Opposition had told him? The purpose of contempt is to preserve the dignity of the courts, which Mr. Bhushan tries to do everyday. We cannot silence such people with contempt. That would virtually amount to there being no checks and balances in the system, of which Mr. Bhushan is an integral part. N.G.R. PRASAD

& K.K. RAM SIDDHARTHA,

MORE LETTERS ONLINE:

**CORRECTIONS & CLARIFICATIONS:** >> In a Business page (Feb. 3, 2019) report, "Industrialist K. Mahesh breathes his last," Harsha Viji's designation was erroneously mentioned as deputy chairman, Sundaram Finance. He is actually the *deputy managing director*.

It is the policy of The Hindu to correct significant errors as soon as possible. Please specify the edition (place of publication), date and page. The Readers' Editor's office can be contacted by Telephone: +91-44-28418297/28576300 (11 a.m. to 5 p.m., Monday to Friday); Fax: +91-44-28552963; E-mail:readerseditor/athehindu.co.in; Mail: Readers Editor, The Hindu, Kasturi Buildings, 859 & 860 Anna Salai, Chennai 600 002, India. All communication must carry the full postal address and telephone number. No personal visits. The Terms of Reference for the Readers' Editor are on www.thehindu.cor

### YES, NO, IT'S COMPLICATED

# Will the ₹6,000 farmer payout help?



KUMAR BHUTANI is Joint Secretary in the Department of Agriculture Cooperation and Farmers Welfare

TATHAGATA

is a Biju Janata Dal

OMPLICATED

YOGINDER K. ALAGH

is an economist and a

former Union Minister

SATPATHY

### The PM-KISAN scheme will provide farmers assured supplemental income

The Pradhan Mantri Kisan Samman Nidhi (PM-KISAN) scheme, announced in the Interim Budget, is the biggest scheme launched by the Government of India till date for providing structured support to small and marginal farmers.

For farmers' welfare

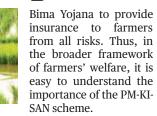
Under the scheme, ₹6,000 per year will be provided to farmers holding cultivable land of up to two hectares. This has been done because the government is aware that the smaller the land holding, the grea-

ter the need for financial support.

This is a Central Sector Scheme and will be funded fully by the Government of India. The guidelines of the scheme have been issued. The government has developed a portal for managing the scheme (http://pmkisan.nic.in), which has gone live. The States have to upload the data of the beneficiaries on the portal. The Ministry of Agriculture and Farmers' Welfare will transfer the benefit directly into the accounts of the beneficiaries. The amount will be credited into the account of the beneficiary within 48 hours of its release by the government.

In the 2018-19 Budget, the government announced that minimum support price (MSP)

would be 1.5 times the cost of production for all the notified commodities. The Pradhan Mantri Annadata Aay Sanrakshan Abhiyan was approved by the Cabinet last year to ensure remunerative prices to the farmers. There have been various interventions to boost the production of pulses and oilseeds. Earlier, in 2016, the government launched the Pradhan Mantri Fasal



### **Institutional credit**

The government was concerned that although our farmers work very hard, and we have had record foodgrain production in the last three years, they were unable to get good prices for their produce, especially for non-MSP commodities, because of the adverse terms of trade, including depressed international prices.

What has gone unnoticed is that the government is also trying to bring all farmers into the fold of institutional credit. The target is to bring more than six crore farmers into the Kisan Credit Card (KCC) regime. Directions have been issued for this to the States and banks. They have been advised to issue KCCs within 15 days of application by the farmers. All the charges which were being levied by the banks, including documentation and inspection charges, up to ₹3 lakhs have been waived. Credit should go to the Indian Banks' Association for taking such a farmerfriendly decision.

that the average annual income of small and marginal farmers is well below the average income of all farmers. The benefit being given to small and marginal farmers through PM-KISAN will provide them assured supplemental income and also meet their emergent expenses, especially immediately after harvest. The scheme will be implemented with an estimated expenditure of ₹1 lakh crore till 2019-20, benefiting 12.50 crore small and marginal farmer families.

It is important to keep in mind

Besides being unique, the scheme is also sustainable and will increase the confidence of small

and marginal farmers.

fully kept vague to enable big

### **Imagining a New India**

It is time for a New India. This New India requires modern irrigation facilities. It needs seeds and scientific and modern technological knowledge that can help and guide in reducing costs. It needs a rapid transition to cost-effective organic farming. It needs timely delivery of inputs and transport systems to enable commercialisation of agricultural products and activities. It

They completely forget or knowingly ignore the fact that real India is in sharks to grab large tracts? What is no way involved with their cocktail land settlement and why has most circuits, foreign jaunts, and monoof the country not gone through this process? These are the quesgrammed jackets. tions that we need to ask.

does not need doles.

The amount is not even enough for farmers to fill diesel in their hired tractors

Earlier, we were told there was a battle cry during India's freedom struggle. It went like this: "Mujhe khoon do, mein tumhey azaadi doonga (give me blood and I will give you freedom)." When the Interim Budget was being read out by Finance Minister Piyush Goyal, it sounded more like, "Mujhe vote do, mein tumhey paisa doonga (give me votes and I will give you mo-

Politics in India is not 'accidental' as in Uri, the movie. The farm crisis is real. Admittedly, it is not a recent phenomenon. It is not the creation of this particular party in power. It is the result of policies adopted by most of the political outfits that have governed this nation and its States for the past many

turning a blind eye to the crisis is simple. While solutions to the bottlenecks in business and industry could be dished out in comfortable offices in New Delhi or State capitals, agriculture, for long, had no spokesperson or lobby in India. All the so-called elites of India looked

wanted citizens that the country could well do without.

### No vikas for farmers All this

suddenly changed. The drastic alteration took place

when three of the five States that went to polls at the end of 2018 turned hostile to the BJP. Those victories were not so much victories for the Congress as they were a resounding defeat for the BJP. The underlying message was crystal clear: All the noise about 'vikas' (development) meant nothing to the farmer. The toiling Indian in the field decided, after 71 years of utter neglect, that enough is enough. The farmers

not willing to be pawns in the hands of those who debated whether or not the Constitution of India could be printed on a postage stamp. Such a realisation also implied

realised that numbers fa-

voured them. They were

deep understanding. The farmers decided that the neo-liberals want a laissez faire economy only to help big businesses. The past and present govern-

ments were concerned primarily with restructuring corporate laws, refunding financial institutions that were sick because of bad lending, providing subsidies to industries and attracting foreign investments.

gins mid-fiscal year, this

gives a false sense of ex-

pansion. Is there an eco-

nomic case for the

scheme in the real world?

The terms of trade have

become a constraint. The Interim Budget has rhetoric, but the NITI Aayog, which wrote this, does not have any fund allocation powers, unlike the reformed Chinese planning set-up where strategic plans are buttressed with funds. So, you live from day to day. Direct Transf-

The farm crisis is real

Farmers with two hectares of land

want not just ₹2,000 every four

months, as the Pradhan Mantri Ki-

san Samman Nidhi promises. That

is not even enough to fill diesel in

their hired tractors. Farmers are

not begging for doles. The system

of governance has to understand

who the small farmer is. What does

the word share-cropper imply?

Who is a tenant farmer? Are the

land records sorted out in rural In-

dia, or are they all being purpose-

ers are then the oxygen you need. The Budget speech also reiterates the government's stated goal of doubling farmers' income. The government is obviously sceptical of this: otherwise an additional Direct Transfer sounds rather excessive, even in the months before an election. The budgeted figure for MSP or other support will have to be based on a cost concept that includes rent and interest on farm investments, as a committee I chaired on cost concepts for MSP had argued.

### **Direct Transfers to stay**

By calling it an Interim Budget, a legal constitutional hassle has probably been avoided. But the argument that the amount that a new government can spend can be decided now is unconvincing. The new lot, even if the same party comes to power, will not be that generous in giving credit to their predecessors. The fun and games will start with the rains. Knowing our country, we can be reasonably confident that Direct Transfers have come to stay.

decades. The explanation for politicians

down on farmers as poor and un-

Build rural infrastructure in markets and provide tariff protection against subsidised imports

derstandable in an election year. The Pradhan Mantri Kisan Samman Nidhi (PM-KISAN) gives direct annual income support to farmers with a land holding of two hectares. This borrows from Arvind Subramanian's basic income support scheme for substantial sections of the rural workforce. Congress president Rahul Gandhi had stated this as his objective for the economy as

a whole, if voted to power, despite

In the Interim Budget, the govern-

ment has made a number of major

political statements, which is un-

criticism. However, the Budget has shown an implicit appreciation of the idea and proposed it for a large part of the rural labour force. Landless labourers are a category in the Census and National Sample Survey Office, but as the Finance Secretary clarified, they cultivate at least kitchen plots, and so are marginal farmers for revenue purposes and are eligible for the scheme.

When we count the economic costs we factor in the terminal costs (for the year when the scheme is fully implemented) as a percentage of, say, GDP or agricultural GDP, but such schemes take time to implement and the initial costs are lower.

### Will it work?

Of course, there is no way of testing if sufficient funds have been provided for the scheme. Small farmers till around two-fifths of the land but are two-thirds of the labour force, since agricultural labourers also till small plots of land. The Budget speech compares the revised estimates for this year with the Budget estimates for the next fiscal. Since Budgets get scaled down when the fiscal crunch be-



been moving against agriculture (Commission for Agricultural Costs and Prices reports) since 2013. So, when income in real terms goes up by, say, 6% annually, the farmer's real income in terms of what she gets for what she sells goes down. She is agitating be-

cause there is a real issue. The answer, of course, is to build rural infrastructure in markets and give tariff protection against subsidised imports. But urban interests

FROM The Mindu. ARCHIVES

FIFTY YEARS AGO FEBRUARY 8, 1969

### Admission to degree courses

A proposal to abolish the age limit for admission to colleges for degree courses is under the consideration of the University dures for admissions. The U.G.C. has already recommended the scrapping of the cumbersome requirement regarding migration certificates. In regard to the age restriction, more than 50 universities in the country have prescribed age limits for admission to various degree courses. In Delhi, for instance, unless a student completes 16 years he is not admitted into the B.A. first year. The U.G.C. has taken the view that it is unfair to refuse admission to a student just because he has not completed the prescribed age. Even if a candidate is short by a few days, he is not eligible for higher studies now. Only last year, the student who stood first in the higher secondary examination, Delhi, with record marks, was refused admission to a college because he was under-aged.

A HUNDRED YEARS AGO FEBRUARY 8, 1919

At the International Socialist Conference, Eisener, head of the Bavarian Government speaking in the debate on the responsibility for the war, pleaded guilty on behalf of German Socialists, but argued that Germany could expiate her guilt by advancing on the path of Socialism [according to a Feb. 5 report from Berne]. He claimed that Germany was now the most democratic country in the world. Kantsky German Independent Socialist declared that documents proved Germany's guilt. Bethmann Hollweg's statement that France attacked first was a lie. Doctor Adler, German Majority Socialist, placed on the table a declaration that the war was due to the Imperialist policy of the old German Government and recognising the need for inquiry. He admitted that attempts to justify the invasion of Belgium which was a breach of international law had been a pronounced failure. He stated that the German Republic did

### Germany's War Guilt.

not wish to escape any guilt which might be established.

### CONCEPTUAL

### **Ethical intuitionism**

### PHILOSOPHY

Also known as moral intuitionism, this refers to the philosophical belief that there are objective moral truths in life and that human beings can understand these truths intuitively. In other words, what is right or wrong is considered by ethical intuitionists to be self-evident in nature and cannot be known through human experience. The idea was popularised by American philosopher Michael Huemer in his 2005 book Ethical Intuitionism. Critics of ethical intuitionism argue that people may come to different moral conclusions even after consulting their inner intuition. Others question whether people can arrive at moral conclusions at all using their intuition.

MORE ON THE WEB

The Hindu Podcast | Lit for Life 2019 - What ails Indian

http://bit.ly/VenkiRamakrishnan

### SINGLE FILE Irking the Dragon

By walking out of the INF treaty, the U.S. may have dragged China and Russia into a new arms race

ATUL ANEJA



China has predictably criticised the U.S.'s decision to walk out of the landmark Intermediate-Range Nuclear Forces (INF) treaty, which was signed in 1987 by U.S. President Ronald Reagan and Soviet leader Mikhail Gorbachev to eradicate conventional and nuclear missiles ranging

from 500 to 5,500 km from their arsenals. Of all countries following the crumbling of the major arms control treaty, China seems to be the most impacted. The Chinese expect that the Americans will now reinforce

their tactical missiles, both nuclear and conventional, in Guam, a large military base in Micronesia, at the heart of the U.S. deterrent in the Pacific. It is also expected that the Americans will pack other U.S. bases in the Pacific, especially those in Okinawa – a string of islands in the East China Sea that belong to Japan – with intermediate range missiles. By doing so, the U.S. would be able to virtually box in the movement of Chinese naval ships in the West Pacific, especially by safeguarding strategic gateways to the open sea, such as

the Miyako Strait in Japan. China is aware that the post-INF missile deployments can significantly undermine its own deterrent, especially its mid-range missiles. Currently, the Americans have no answer to China's DF-21D missiles. These weapons have been tailored to destroy U.S. aircraft carriers even at a distance of 1,450 km. China recently flaunted its DF-26 ballistic missiles,

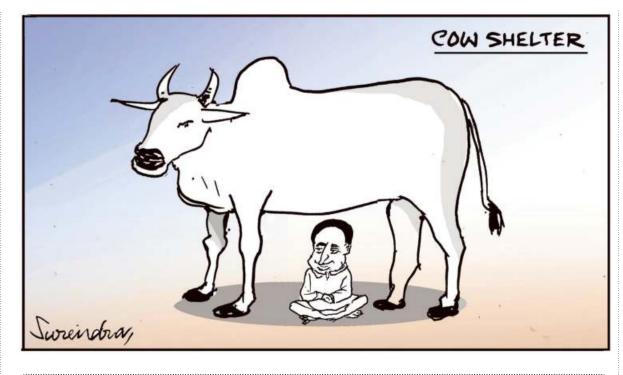
which can deliver a strike on Guam. Chinese media reports reveal Beijing's apprehension that the Americans are at some point likely to propose a fresh arms control dialogue, sharply focusing on China's midrange missiles. The new treaty targeting China's intermediate range missiles is expected to seek termination of the Chinese challenge to Washington's military dominance in the West Pacific.

But Beijing will not be second-bested by Washington in the tense ongoing tussle for equivalence, and in writing the rules, in the waters of the Pacific. A write-up published in China Military Online, a website affiliated with the People's Liberation Army, points out that in view of the anticipated moves by the U.S., China must rapidly reinforce its nuclear arsenal, through qualitative rather than quantitative

Besides, Beijing would have no choice but to beef up its conventional deterrence by developing hypersonic missiles, which can smash into targets at five times the speed of sound, unharmed by any existing ground-based missile defences. The next generation of strategic bombers as well as long-range air-launched cruise missiles could also be on

By taking the miscalculated step of walking out of the INF treaty, the U.S. may have dragged China, as well as Russia, into a new and unpredictable arms race, with the potential of destabilising the Indo-Pacific.

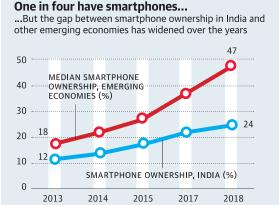
The writer is The Hindu's China correspondent



### **DATA POINT**

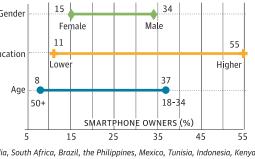
### **Upwardly** mobile

Nearly 64% of Indian respondents who were part of a global survey in 2018 owned a mobile phone and 24% owned a smartphone. While India's smartphone ownership has increased over time, the rise has been slow compared to other emerging economies\*. By Varun B. Krishnan



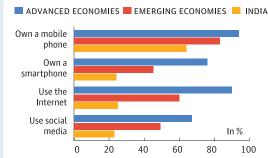
**Demographics change** In India, the sharpest contrast in smartphone ownership was

among those with different education levels#. Its gender gap was also the highest among the countries surveyed #Lower education: below secondary; higher: secondary or above



### **Global comparison** The percentage of Indians who use social media is low, but

the numbers are expected to grow due to falling costs of data, and the availability of smartphones and social media in local languages



### On the upside

However, the no. of wireless data subscribers in India, a proxy for smartphone usage, indicates that there has been consistent growth in the no. of users (Data up to Sep. 2018)



Science and what can be done about it?

# The Tribune

ESTABLISHED IN 1881

# Centre-state showdown

Both govts should not obstruct course of law

THE acrimonious face-off between the Centre and the Mamata Banerjee government in the run-up to the Lok Sabha elections has laid bare the enormity of political interference in the process of law. Politicking and histrionics have always gone hand in hand, but the sit-in by the West Bengal Chief Minister was a new low, especially when the Supreme Court is already monitoring the CBI probe into the Saradha and Rose Valley chit fund scams.

The apex court has done its job by putting the inquiry back on track, but allegations and counter-allegations continue to fly thick and fast. Mamata has accused the BJP of blackmailing people by using central agencies such as the CBI against them and then inducting them into the party fold with the promise of immunity from prosecution. Throwing down the gauntlet, she has asked the premier investigating agency to conduct its probe into the theft of Rabindranath Tagore's Nobel medal with the same urgency with which it executes the orders of Prime Minister Narendra Modi and BJP president Amit Shah. The saffron party, in turn, claims that Mamata is shielding Kolkata police chief Rajeev Kumar as he probably possesses evidence that could prove damning for the ruling Trinamool Congress.

Amid the politically electrified scenario, it is perhaps too much to expect a free and fair investigation into the high-profile cases. The new CBI Director, Rishi Kumar Shukla, has taken charge at a time when the agency's reputation is in tatters. He faces the Herculean task of restoring its credibility in the public eye and ensuring that it functions without any pressure, even as the power tussle on the national stage is set to intensify in the next couple of months. Rival camps are likely to throw caution to the winds in order to wrest the initiative. It won't be a surprise if they lower the bar even further rather than adopting the constitutional course of exercising restraint and letting the law reign supreme. The onus will be on the voters to see through the theatrics and make an informed choice.

# A toast to Haryana

Sonepat district records impressive sex ratio

HE economic indicators of Haryana, among the fastest growing states, are as appreciable as they are enviable. The representation of its men, and women — in what is a strange, but sweet irony — in sports and defence services is outstanding. The only spot of trouble, and one that brought the state ignominy, has been its tipped sex ratio, at 879. But in what is a heartening spin, 20 villages in Sonepat district have heralded a change, with a striking turnaround in the ratio, recording an equal, or more number of females per 1,000 males. Can it be that the patriarchal giant is, finally, waking up to the wind of change?

Purkhas in the district is leading the honour roll with 1,327 females to 1,000 males. Malikpur village is a close second at 1,304 — impressive numbers that call for a close and detailed study, so the practice(s) may be replicated in other districts and states combating a diminishing ratio. The sample size should be factored in, since some of the villages are small. The transformation is being attributed to a steady crackdown on sex-determination kits and test rackets, safe delivery arrangements, cent per cent registration of newborns and awareness against foeticide. The health authorities have announced a Rs 1.5-lakh award for the district: a small token that will, hopefully, go a long way. The amount can be pumped back into the initiatives.

The credit, without doubt, goes to welfare programmes like Ladli, 'Beti Bachao, Beti Padhao', 'Apni Beti, Apna Dhan' — promoted and sustained over long years by the government. The credit must also go where it is due. The ceaseless efforts would have come to naught had they not caught the imagination of the people. The real hero, therefore, is the common man, and woman of the state, who believed it was time for social change, giving the unborn girl child, first and foremost, a chance at life itself. Now that Sonepat district has shown the way, there should be no let-up in the big push. The gust must flow with gusto, blowing away the old ways, so Haryana may reset its social equilibrium.

# THOUGHT FOR THE DAY

I belong to no religion. My religion is love. Every heart is my temple. — **Rumi** 

ON THIS DAY...100 YEARS AGO

The Tribune.

LAHORE, FRIDAY, FEBRUARY 7, 1919

### The Cure for Sedition.

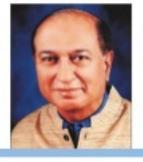
DO you say that the Bills are directed only against seditionists, and that seditionists do exist or at any rate had existed until their activities were put an end to by the operation of the Defence of India Act? Mr Manohar Lal's reply is the reply of one of the wisest of English political philosophers. "The surest way to prevent sedition," he said, "is to take away the matter of them." Again: "The first remedy or prevention is to remove by all means possible the material cause of sedition." What an irony of fate that at the very moment when for the first time during British rule this remedy is about to be applied in the shape of that broadening of the basis of the constitution, in which another and an equally illustrious political thinker exhorted his country to find means of removing popular discontent, the bureaucracy in India should be so unwise as to propose measures which would take grace out of reforms, and neutralise their value!

Coercive Legislation.

WE are glad that notice of following further amendments to the Rowlatt Bills has been given, in addition to the one already given by the Hon'ble Mr Patel. The Hon'ble Mr Surendra Nath Bannerjee will move that in the motion for referring the Bill to Select Committee for the words "on or before the 6th of March 1919," the words "within six weeks after the passing in Parliament of the Reform Bill to be introduced to give effect to the Montagu-Chelmsford Report," he substituted. The Hon'ble Mr KK Chanda will move that the motion for referring the Bill to a Select Committee do stand over till the Simla Session of the Council. He will also move that the Select Committee do report to the Council during the Simla Session.

# The State and the faith

In contravention of its constitution, China does not encourage 'freedom of belief'



**G PARTHASARATHY** 

FORMER DIPLOMAT

ONDEMNING the role of religion, Karl Marx proclaimed: 'Religion is the sign of the oppressed creature, the heart of a heartless creature, the soul of soulless conditions, it is the opium of the people.' While echoing Marx, Lenin claimed that religion is used for the 'protection of the exploitation and the stupefaction of the working class'. The State structure that Lenin created in the Soviet Union was ultimately a Russian-dominated oligarchy, which collapsed under the weight of its own contradictions. While Soviet leaders, from Lenin and Stalin to Brezhnev and Gorbachev, decried religious beliefs and practices, the Russian Orthodox Church, patronised by Putin, today plays an important role in Russia's national life. The Muslim-dominated Soviet Central Asian republics are today members of the Organisation of Islamic Conference (OIC), each with its own distinct Muslim identity.

Beijing's political evolution has been different from that of Moscow, ever since Mao's Communist Revolution. Mao's beliefs in 'Proletarian Internationalism' and a brotherhood of communist states was shaken when he was cold-shouldered by Stalin, who met Indian envoy Dr Sarvepalli Radhakrishnan in December 1949, even as Mao was waiting in Leningrad to meet the Soviet supremo. The two 'fraternal' communist giants soon developed serious differences, resulting in clashes across a disputed border. Richard Nixon, Henry Kissinger and others later exploited these differences. Even fellow communist countries like Vietnam and Cambodia were on opposite sides of the Sino-Soviet divide.

While China clamped down on those



**HOLD IT!** Reports claim that China is trying to 'de-Islamise' its Uighur population.

The 53-member OIC, which pontificates on the alleged persecution of Muslims the world over, is oddly silent on the intolerance shown in China.

it considered as separatists in Tibet, it adopted more sophisticated and nuanced policies on religious beliefs than the Soviets, especially after Mao's Cultural Revolution in the 1960s. Any credible claims that China had about being a Communist State monopolising the levers of business, trade and industry ended when Deng Xiaoping dumped all pretentions of being Marxist. Deng opened China's doors for both private and foreign investment in business and industries. He ended vears of Maoist dogma, while empowering a new Communist Party elite with its own share of millionaires. Deng's reforms led to four decades of economic growth unparalleled in history, even while remaining a one-party state, dealing harshly with dissent.

China controls religious activity and has dealt ruthlessly with separatism. There has been a massive effort to rebuild Buddhist and Taoist shrines, destroyed during the Cultural Revolution. But this approach was missing in the cruel approach China adopted, when it trampled on the rights of followers of Semitic faiths, Islam and Christianity. Its predominantly Sunni Muslim population is estimated at around 22 million. It is spread across the country, but is principally in its western regions like Xinjiang, bordering Central Asia. The intolerance shown to Muslims has evoked international outrage. More than a million Uighur Muslims have been detained and herded into camps, as part of China's policy of rooting out 'extremists'. This action followed a series of terrorist attacks commencing in 2014 by radical Uighur separatists.

There are also reports of attempts by China to 'de-Islamise' its Uighur population by a ban on women wearing veils, Muslim names for babies and on long beards for men. People are compelled to listen to state-run television stations. There are also reports of Muslims under detention being forced to eat pork and drink alcohol. Such reports are reaching the outside world from countries like Kyrgyzstan and Kazakhstan. Large numbers of Kazakhs and Kyrgyz, forced out of Xinjiang, have carried details of such persecution.

The deafening silence of the 53member OIC, which pontificates reg-

ularly on incidents of alleged persecution of Muslims across the world, has been noted internationally. This silence is not surprising. Islamic countries like Saudi Arabia, Iran, Turkey and Pakistan have looked the other way, evidently out of fear of adverse Chinese reaction. While the US Congress and some European powers have drawn attention to these developments, not a single Organisation for Economic Cooperation and Development member has called for any action. One can't help noticing the contrast between such silence on Xinjiang and the rhetoric on the plight of the Rohingya in Myanmar.

The situation that Christians face in China is somewhat different. Their population is estimated to be 65 million, while the Muslim population is 21.67 million. The Christian population has grown substantially after the Mao era and the adoption of the 1982 constitution. While church worship continues (under surveillance), the Pope has been given limited authority on issues concerning appointments, practices and services. Though the constitution guarantees 'freedom of religious belief, the freedom is severely limited. While millions in China adopt and respect historical Taoist practices and Confucian edicts, China also has a large Buddhist population, estimated at around 260 million. Curbing religious freedoms is going to become more difficult with the passage of time, as even now about 130 million Chinese undertake visits abroad as tourists annually.

The global population of Buddhists is around 540 million. The majority of Buddhists live in East, Southeast and South Asia. Tourists from East and Southeast Asia are regarded as high-spending visitors. The time has come for India to seek political, spiritual, cultural and economic dividends by virtue of being the land where the Buddha was born and attained nirvana. Sadly, our tourism facilities are regarded as unsatisfactory. Is it not time for us to work together with China, Japan and others interested to develop better tourist facilities in the land of the Buddha, where they can fulfil their spiritual aspirations?

# When a wedding meant more

COL MAHESH CHADHA (RETD)

HEN I attend weddings these days, I am wonderstruck! Gone are the days when the ceremony was considered a solemn occasion. All rituals were performed with sobriety and invocation of the Almighty. The function used to be held at the residences covered with shamianas and bedecked with flowers and lights of both the groom and the bride. Where the houses were small, a community ground would become the venue. The sound of the brass band indicated the arrival of the baraat, alerting the *ladki-wallahs* to gather at the gate. Vedic mantras or shabads were recited, followed by

*milani*, when close relatives of each party would embrace one another. Someone from the groom's side would recite *sehra* in honour of the groom and his family, and someone from the bride's side would recite shiksha, highlighting the aspects of her upbringing with love and care, her delicate nature, and above all, her sacrifice to raise the family of her would-be husband.

As the *baraatis* were ushered in, it was incumbent upon the bride's family to look after each and every one. After a round of cold drinks or a hot beverage, dinner or lunch used to be personally served to the baraatis by the ladki-wallahs, who dare not eat along with them. Generally, it used to be vegetarian fare,

and serving hard drinks was a taboo, though some would stealthily savour it at their own expense and invite the ire of the elders!

The most important part, lanvan phere, was invariably performed at the home from where the bride would depart for the groom's home.

Today, it is different. Weddings are held at a resort, a hotel or a picnic spot, as far away as another town. There is a long queue of cars, occupying most of the road space and creating a jam for commuters. It takes forever to reach the venue, and if late, parking becomes a problem. However, the rich opt for valet parking. Reception is, of course, as usual, but not the good old recitation of sehra and shiksha. In any case, one can't

hear anything in the deafening noise of the DJ and what not. Photographers take centre stage and one does not get to see the faces. There is a surfeit of drinks and snacks, from as early as the arrival of the first person, full of variety. It makes one rue at the quantity that is wasted — it can feed more than an equal number.

There is no limit as far as the time is concerned, despite orders of the administration. When all guests depart, it is time for the families of the groom and the bride to sit together and enjoy the feast. The lanvan phere, too, take place there itself, where a platform is erected. Nobody visits the bride's place. She is brought in a flower-decked car to the groom's house to start a life together.

### LETTERS TO THE EDITOR

### True leader

The tribute of the 'Most powerful Chief Minister of India' to Kairon is an apt recall of the vision and values that made him a towering leader in his time ('What Kairon meant for Punjab'; Feb 6). Present-day state satraps pale into insignificance when compared with him in any aspect of public life. But, what makes him stand apart from today's political players is his vision of imparting education to the people of the state. Besides making primary and middle school level education free and compulsory, he opened three engineering colleges and a polytechnic institution in each district. The credit for establishing two institutions of international repute, PAU-Ludhiana, and PGI-Chandigarh, also goes to him.

**DV SHARMA, MUKERIAN** 

Apropos 'CBI v/s Kolkata' (Feb 6), Didi's act was not democratic but dictatorial, putting a question mark on her integrity. Even if the CBI had not complied with statutory provisions, as a responsible politician, she should have either kept quiet, or extended support/cooperation to the investigating team. Her defensive attitude, that too for a civil servant, is unacceptable. The Centre should consider this

**Didi's dictatorial act** 

episode and ensure it is not repeated, so that the prestige of the investigating agency remains intact.

**VIJAY VERMA, BY MAIL** 

### **Nation's loss**

In reference to the report 'Gave warriors outdated machines' (Feb 6); who is really to blame for the crash? Our IAF pilots are dying in a terrible manner, day after day, in such crashes. It of HAL. The blame game goes on, and in the message of the deceased's wife. whole nation. The government should provide our soldiers and pilots with good weapons and aircraft, and should strive to be self-reliant.

raises questions about the credibility there is no end to the crashes. The pain behind such a massive loss is reflected These bravehearts endure the unthinkable. It is not an individual or a family's loss. It is a great loss for the

**PREETI,** RAJPURA

# **Big change**

Sonepat district in Haryana has witnessed a marked improvement in the sex ratio with 20 villages recording an equal or more number of females as per 1000 males. This improvement is a good sign for women empowerment in Haryana. It is a great implementation of the 'Beti Bachao, Beti Padhao' programme.

**SATYAM SHARMA, PATHANKOT** 

### A step forward

The sex ratio has bloomed to 1,327 girls to boys in a Sonepat village. From among the lowest sex ratio, Haryana is taking a step forward to improve the lot of the girl-child and focusing on the flagship programme, 'Beti Bachao, Beti Padhao'. The district certainly deserves a big pat for this achievement.

**SEJAL GOYAL, HARYANA** 

### **New thinking**

Haryana, which had a poor sex ratio, has recorded a huge leap, with Sonepat district showing a considerable improvement. It is a great achievement as it marks the onset of the changing of minds and thoughts regarding female foeticide. Slowly, but surely, the thinking is changing for the better. India is moving rapidly on the road to equality.

**AASHNA MINOCHA, GURUGRAM** 

### **Empowering women**

Apropos the huge leap in female-male ratio in Sonepat (Feb 6), empowering women is essential because an empowered mother is the strength of any nation. Many schemes have been started by the Central government to bring women into the mainstream of development, as they constitute a significant bulk of our population.

**MANSI BHARDWAJ, BY MAIL** 

### Be wary of corridor Refer to 'Draft of Kartarpur pact

for Pak soon' (Feb 6); the Kartarpur corridor may be a step to better India-Pakistan ties, but it seems to be a well-planned trick, more than just a political move. This corridor can foster terrorism by being a pathway for terrorists, making it easier for them to enter India in disguise. It may prove to be a bane in the coming times.

KHUSHNASEEB KAUR, PATIALA

### Overcoming odds

It is sad that 14-year-old Muskan has overcome odds but poverty is coming in the way of her dreams ('Disability couldn't, but poverty comes in player's way'; Feb 6). She worked hard to win laurels in Indo-Nepal Championship, International Taekwondo Championship and 5th National Para Taekwondo Championship. The government should come forward to support her pursuits.

**SRISHTI BANSAL, BY MAIL** 

Letters to the Editor, typed in double space, should not exceed the 200-word limit. These should be cogently written and can be sent by e-mail to: Letters@tribunemail.com

# Clumsy icing on an unsavoury cake



**MANPREET BADAL** FINANCE MINISTER, PUNJAB

Conscious of its own failings, the Modi government breached constitutional propriety by presenting a 'full-fledged'

Budget instead of a vote-on-account. It hoped that the tall promises for various sections of society would arrest the slide in its appeal. The citizens, however, have now seen through the sophistry.

VERY Budget, I am reminded of the famous words of John M Keynes, who said that a master economist "must possess a rare combination of gifts. He must be a mathematician, historian, statesman, philosopher — in some degree". One could argue that Keynes talked of these qualities in the context of an economist, and the Budget is ostensibly a fiscal exercise. But Keynes' view provides a beautiful prism to look at the economic legacy of any government. Try and look at the Modi government's overall performance on economics on any of these yardsticks and one gets a fair idea of its remarkable failures.

In the role of mathematicians, the economic and fiscal policy managers of a nation need to possess numerical exactitude and respect for statistics. The NDA rule has been marked by its love for inexactitudes. Statistical norms have been flouted, the numbers have been 'revised' as the government has an axe to grind. This statistical skullduggery means that the numbers the government now furnishes are viewed with skepticism. 'Lies, damned lies and Modi statistics' is the prevailing belief in the international media — a mighty fall for the land of PC Mahalanobis and the Indian Statistical Institute.

Economic management of a country requires an understanding of history, an appreciation of quality work done by the predecessors, respect for institutions and commitment to best practices and conventions. Modi's PMO has shown an undisguised zeal to undermine the institutions which form From impairing the RBI's autonomy



**ENDGAME:** it is fitting that this feigned Budget is the final announcement of a regrettable five-year tenure.

to presenting an unprecedented sixth Budget in a five-year term via an interim Finance Minister, the government has set terribly bad examples. The government's own economic adviser's account seems to reveal that his counsel was ignored, or worse, that he was not in the know of some of the crucial decisions. Similarly, speaking from my personal experience, I can say that the GST Council — formed in true spirit of our consultative democracy — was

rarely kept in the loop. The economic policy requires a statesman's vision — rising above finesse and having your ear and feet

to the ground. Most importantly, it involves keeping the honour of one's promise. The Modi government was elected largely on the promise of creating meaningful jobs in the organised sector. Not only has it miserably failed in doing so, but it is also guilty of suppressing the National Sample Survey Office (NSSO) report that is a scathing indictment of its ineptitude. When the Prime Minister suggests that frying fritters (pakoras) is gainful employment or when the interim Finance Minister offers a pittance as relief to the marginal farmer, it comes

spokespersons after the NSSO report was made public cannot hide the fact that India is seeing its biggest ever job crisis. If there is meaningful employment creation, its benefits are for everyone to see. I am often reminded of an instance that goes back around a decade when MNREGA had been implemented and was successful in creating jobs in rural India. Since meaningful jobs were being created for people in their own villages, migration reduced. As a result, there was a severe paucity of agricultural labour in Punjab. I remember then Finance the foundation of our great nation. petty politics, showing intellectual across as a cruel joke. The disingenu- Minister P Chidambaram commentous replies of the government's ing that if big agriculturists are strug-

gling to find agricultural labour without revising the wages upwards, it shows that farm labour has got better opportunities. He couldn't have been more right. The point is that when gainful employment is created, its evidence is too obvious to be missed. One doesn't need to concoct 'pakoranomics' to convey that people are happy doing what they do.

Finally, good economic policy presupposes the policy-makers to be like Plato's philosopher kings — possessing knowledge and showing sound judgement. Their decision-making is neither as non-transparent as the Rafale deal nor as quixotic as demonetisation. It calls for carefully considered decisions and meticulous planning, unlike the tinkering and poor execution which has been the hallmark of GST in India.

Conscious of its own failings, the Modi government breached constitutional propriety by presenting a 'full-fledged' Budget instead of a vote-on-account. It hoped that the tall promises for various sections of society would arrest the slide in its appeal. The citizens, however, have now seen through the sophistry. They understand the devilish details, the insufficiency and the poor timing of the whole affair. In a way, it is fitting that this feigned Budget is the final announcement of a regrettable five-year tenure — a clumsy icing on an unsavoury cake. Mr Modi may have come to power through his mantra of being high on rhetoric (and poor on delivery), but it is unlikely that he will get to do an encore. As Abraham Lincoln is reported to have said, "You can fool all the people some of the time and some of the people all the time, but you cannot fool all the people all the time."

# Integrate action plan for TB, other diseases



**DR RAKESH KUMAR** ADDITIONAL COUNTRY DIRECTOR, UNITED NATIONS DEVELOPMENT PROGRAMME

The linkages between tuberculosis and non-communicable diseases present an opportunity for wider collaboration through bi-directional screening, diagnosis and better access to care for both as part of an integrated model for management. The two national programmes in this regard are being implemented by the same set of functionaries at the primary healthcare level.

NDIA has witnessed an epidemiological transition wherein non-communicable diseases (NCDs) have overtaken communicable diseases as the most common cause of morbidity and premature mortality. Globally, India carries the highest burden of tuberculosis (TB) with 27 lakh new cases and more than 4 lakh deaths annually. While India is the diabetes capital of the world with 6.68 crore cases, NCDs contribute to more than 60 per cent of the total deaths in the country. Tuberculosis, a communicable disease, and NCDs are seemingly contrasting, but there are many interwoven layers. Several NCDs, such as diabetes mellitus, alcohol use disorders and smoking-related conditions, are acknowledged to be responsible for a significant proportion of TB cases globally. Nutrition-related issues lead to common risk factors for both: undernutri-

Currently, there are two national programmes to tackle the dual challenge. The National TB Control Programme (1962) was revamped as the Revised National TB Control Programme (RNTCP) in 1997. The National Programme for Prevention and Control of Cancer, Diabetes, Cardiovascular Diseases and Stroke (NPCDCS) took off in 2011. Rightly so, chronic obstructive pulmonary diseases and chronic kidney diseases have also been added to the programme. While RNTCP is a wellestablished programme, NPCDCS is still in a nascent stage, albeit slowly receiving the much-needed commitment at the highest level. Both programmes envision a public health framework, but their approach is broad-

tion is the determinant of TB and

obesity a precursor of NCDs.



**ALARMING:** Globally, India carries the highest burden of tuberculosis with 27 lakh new cases and more than 4 lakh deaths annually.

ly clinical. Availability of quality human resources also remains a challenge for them. Furthermore, NPCDCS warrants a sharper focus on the preventive and health promotion activities during adolescence, targeting the four high-risk factors; tobacco, alcohol, physical inactivity and an unhealthy diet.

Barring the TB-diabetes collaboration framework (which awaits optimal implementation), both programmes operate in silos. The focus is largely on the detection and management of the disease. The preventive measures are often regarded as secondary.

The linkages between TB and NCDs present an opportunity for wider collaboration through bi-directional screening, diagnosis and better access to care for both as part of an integrated model for management. Among its strongest features, RNTCP has a dedicated cadre of doctors at the district level, and skilled technicians at the block level for programme monitoring and at the sub-district/district levels to supervise 15,000 designated microscopy centres. To improve the notification and treatment compliance, public-private support agencies are being roped in for a comprehensive connect with private healthcare givers. Under the NPCDCS, NCD clinics have been established at district and community health centres; a serious attempt is being made to fast-track screening through outreach activities and management of NCDs at all levels. These two programmes are being implemented by the same set of functionaries at the primary healthcare level, providing a robust platform for integration.

Learnings from India's polio eradication programme can be used for this integrated model. The polio pro-

gramme has demonstrated the possibility of achieving ambitious health goals in areas with weak health systems. It serves as a model approach for public health programmes globally. The success of the new initiative, Mission Indradhanush, has provided additional insights to emulate. The existing large cadre of polio surveillance medical officers and TB consultants can be onboarded to co-deliver public health solutions for TB and NCDs.

Under Ayushman Bharat, 1.5 lakh health and wellness centres are being established to provide comprehensive primary healthcare, including screening and management of NCDs and TB, especially to the underprivileged and vulnerable population.

An integrated community-level screening for TB and NCDs can be the first step, with house visits, booth/screening camps for high-risk populations and screening at public health facilities by the manpower available for both programmes. The scope of cross-screening of TB-HIV and TB-diabetes can be expanded for screening of other NCDs.

Besides screening and diagnostics, the family-level treatment of TB patients provides access to other family members to an expanded basket of NCD services. Furthermore, RNTCP provides nutritional assessment, counselling and management of TB patients; this can also be strengthened into a single-window nutritional counselling for NCDs.

Similar to the polio state task force and district task force, the RNTCP-NPCDCS task force can be established to monitor the programmes with techno-managerial support from polio SMOs and TB con-

■ Vikrami Samvat

■ Shaka Samvat

sultants. Integration of the NPCDCS mobile app and RNTCP mobile application Nikshay can provide a common database and generate dashboards to measure their progress. eVIN (electronic vaccine intelligence network), a Ministry of Health initiative being implemented by the United Nations Development Programme (UNDP) for strengthening of cold chain and vaccine supply, can be harnessed to ensure efficient supply of drugs, equipment, laboratory reagents and effectively curb their shortage, spillage and pilferage.

This integrated approach is the new call to action. The Global Action Plan for prevention and control of NCDs (2013-20) has recognised strong interaction between NCDs and infectious diseases, including TB, and the consequential need to explore common platforms to maximise the detection and treatment of co-morbidities. Both are leading causes of death, loss of productive years of life, catastrophic expenses and crushing impoverishment of families.

A strategic shift in public health policy calls for convergent action with comprehensive remedial measures woven around mitigating poverty, malnutrition and other socio-economic determinants of health. Quality of healthcare, partnerships with the private sector and NGOs, and robust behavioural change communication strategies could improve the outcomes. Convergent planning and implementation are central to realising sustainable development goals (SDGs). It is time to harness the potential of both programmes for better health outcomes, failing which the realisation of SDG-3 by 2030 will remain a distant dream.

# 22

# YESTERDAY'S SOLUTION

Across: 1 Slippery, 5 Acme, 9 Facet, 10 Proceed, 11 Out in the open, 13 Ocelot, 14 Stable, 17 Going concern, 20 Expunge, 21 Twice, 22 Salt, 23 Prodigal. **Down:** 1 Soft, 2 Include, 3 Pettifogging, 4 Repute, 6 Cheap, 7 Endanger, 8 Domesticated, 12 Congress, 15 Burning, 16 Poseur, 18 Impel, 19 Cell.

- **ACROSS** 1 Arrears of work (7) 5 Great happiness (5) 8 Aquatic ball game (5,4)
- 9 Snakelike fish (3) 10 Deep red gem (4)
- 12 Generous (8) 14 To decree (6) 15 Illegal enterprise (6)
- 17 Decisive argument (8) 18 False notion (4) 21 Feign (3) 22 Blackjack (5-2-2) 24 Giver (5)

# 25 Plant-rearing place (7)

- **DOWN** 1 Arbour (5)
- 2 Reduction (3) 3 Entice (4)
- 4 Worldwide (6)
- 5 New York theatreland (8) 6 Game played on
- skates (3,6) 7 Able to meet debts (7)
- 11 Court game (9) 13 Find out (8) 14 Plantation of fruit trees (7) 16 Long narrow flag (6)
- 19 Manually versatile (5) 20 Disturb (4) 23 Start of golf hole (3)

HARD

	1	5			3			2
						9		
	8	3			2		6	
		8		7			1	
			3		5			
	7			4		5		
	4		1			8	9	
		9						
6			9			7	5	

FEBRUARY 7. 2019 THURSDAY

2075

1940

• Onc	ina o	annvc	10				134	0
■ Ma	gh Sh		18					
Ма	gh Pa		25					
ı Hija	ari		1440					
Shu	ıkla F	Paksh	Tithi	i 2, u	ip to	7:53	am	
ı Par	i Yog	a up 1	to 10	:47 a	am			
Sha	atbhis	sha N	laksh	atra	up to	12:0	)9 pn	n
Мо	on in	Aqua	arius	sign				
Jma	adi-ul	sani	mont	:h sta	art.			
8	7	<b>9 5</b>	9	1	<b>3</b>	<b>5</b>	2	8
2	4	3	8	7	5	9	1	6
5	6	1	7	9	8	4	3	2
7	3	8	5	4	2	6	9	1
4	9	2	3	6	1	8	7	5
9	2	6	4	8	7	1	5	3
1	5	4	2	3	6	7	8	9
_	-							_

| 3 | 8 | 7 | 1 | 5 | 9 | 2 | 6 | 4

### THURSDAY 18:03 HRS FRIDAY 07:10 HRS **Sunny Partly Cloudy Cloudy** Rainy Foggy CITY MAX MIN 08 18 Chandigarh 13 20 New Delhi PUNJAB 16 08 Amritsar 8 08 Bathinda 15 16 80 Jalandhar 2 08 Ludhiana 17 HARYANA 19 09 Bhiwani 20 80 Hisar 3 08 Sirsa 16 HIMACHAL PRADESH Dharamsala 14 04 -01 Manali 07 Shimla 10 01 JAMMU & KA HMIR 10 09 Jammu Leh 01 -05 0 0 02 0 Srinagar UTTARAKHAND 10 Dehradun 18

11

Mussoorie

TEMPERATURE IN <sup>O</sup>C

04

#ExpressExplained

If there are questions of current or contemporary relevance that you would like explained, please write to explained@expressindia.com

### THIS WORD MEANS

### **LAIRCM SELF-PROTECTION SUITES**

Being purchased for 2 Indian Head-of-State aircraft. How do they offer protection from infrared missiles?



To be installed in 2 Boeing 777s. For representation only. www.boeing.com

ON WEDNESDAY, the Defense Security Cooperation Agency of the United States notified Congress that the State Department has approved a possible foreign military sale to India – two 777 Large Aircraft Infrared Countermeasures (LAIRCM) Self-Protection Suites (SPS), for an estimated \$190 million. These systems will protect protect two Boeing-777 Head-of-State aircraft. According to a PTI report, this would bring the security of Air India One at par with that of Air Force One, the aircraft used by the American President.

LAIRCM is a programme meant to protect large aircraft from man-portable missiles. It increases crew-warning time, decreases false alarm rates and automatically counters advanced infrared missile systems. In a 2016 document, the Defense Technical Information Centre of the US Defense Department explained that LAIRCM consists of missile warning sensors (MWS), a laser transmitter assembly, control interface unit (CIU) and processors to detect, track, jam and counter incoming infrared missiles. The number of sensors and transmitter assemblies per aircraft is determined by the size and signature of the aircraft.

The components of the potential sale were listed in a US Defense Security Agency news release: 12 Guardian Laser Transmitter Assemblies (6 installed and 6 spares); 8 LAIRCM System Processor Replacements (2 installed and 6 spares); 23 Missile Warning Sensors (12 installed and 11 spares); 5 Counter-Measures Dispensing System (2 installed and 3 spares); and various others.

The release said the proposed sale will improve India's capability to deter regional threats, and will support the foreign policy and national security of the US by helping strengthen the US-Indian strategic relationship.

# Telling Numbers Fourth warmest: how 2018 compares with other years 1.5 +THE 10 HOTTEST YEARS ON RECORD 1.2 0.3 <sup>'</sup>2009 <sup>'</sup>2013 <sup>'</sup>2005 <sup>'</sup>2010 <sup>'</sup>2014 <sup>'</sup>2018 <sup>'</sup>2017 <sup>'</sup>2015 <sup>'</sup>2016 Global temperature anomalies adjusted to pre-industrial baseline

Source: National Oceanic and Atmospheric Administration, United States

THE UN agency World Meteorological Organization (WMO) has announced officially that 2018 was the fourth warmest year on record (*The Indian* Express, February 7). It reached that conclusion with a consolidated analysis five leading international datasets, which showed that the global average surface temperature in 2018 was approximately 1°C above the pre-industrial baseline (1850-1900). In fact, 2015, 2016, 2017 and 2018 have been confirmed as the four warmest years on record (see graph based on US National Oceanic and Atmospheric Administration data).

The year 2016, which was influenced by a strong El-Niño event, remains the warmest year on record (1.2°C above pre-industrial baseline). Global average temperatures in 2017 and 2015 were both 1.1°C above preindustrial levels. The latter two years are virtually indistinguishable.

Last year was the 42nd consecutive year (since 1977) with global land and ocean temperatures at least nominally above the 20th century average.

Only one year from the 20th century - 1998 - was among the 10

warmest years on record. Source: WMO & NOAA

# DECISION THE QUESTIONS THAT MATTER

Can Cong Assembly poll showing translate to LS? PARTI MADHYA PRADESH

# Farm issues in focus again, but parties' roles reversed

Congress now ruling, BJP in opposition, they face off on the same turf for the second time in months

### **MILIND GHATWAI**

BHOPAL, FEBRUARY 7

THE LARGEST among the five states that went to polls ahead of the general elections, Madhya Pradesh saw a keen contest that defied history and threw up a fractured mandate. Having won just five seats more than the BJP in the 230-member Assembly, the Congress is being extra cautious; it won 114 seats but its vote share was marginally less than BJP's. For the first time in 15 years, it will contest the general elections as the ruling party in the state.

### How has the BJP fitted into the role of opposition?

It took a little while for many BJP leaders to reconcile with the narrow defeat and the unfamiliar role after 15 years. Shivraj Singh Chouhan, who was Chief Minister for 13 years, is now back on the move. Though veteran leader Gopal Bhargava was made Leader of Opposition in the Assembly, it is Chouhan who is the face of the Opposition on the streets. He has been constantly on the move, meeting victims of crimes, party workers allegedly targeted in the new regime and farmers affected by frost. When the Congress government missed the monthly recital of Vande Mataram in the state secretariat, the BJP questioned its patriotism and announced protests, forcing the Congress to come out with a scaled-up version of the programme.

### What has the Congress been focusing on as the ruling party?

Within the first couple of hours of being sworn in on December 17, Chief Minister Kamal Nath cleared the file relating to a farm loan waiver and followed it with an announcement that industries enjoying incentives like cheap land and electricity will have to reserve 70% jobs for the local population. It was followed by expansion of his ministry by making 29 MLAs cabinet ministers, including an independent. Four independents, two BSP MLAs and one Samajwadi Party members have extended their support to the government. The next challenge was to prove its majority. The Congress proved its numbers amid a boycott by the BJP. There is still pressure on the CM to fill up some posts in the Cabinet to accommodate contenders who may take to arm-twisting.

### What were the major talking points in 2018, and how are they expected to play out in 2019?

In a state where 70% of the population is dependent on agriculture, directly or indirectly, farmers were the focus of attention last year, and will remain so. Having received more than 50 lakh applications, the biggest challenge for the Kamal Nath government will be smooth implementation of the farm loan waiver and raising requisite money to finance it. Even though the scheme was announced immediately, the actual transfer of money in bank accounts will start only on February 22. The BJP government had implemented a price deficiency payment scheme called Bhavantar Bhugtan Yojana to provide a cushion to farmers when prices of certain commodities fall below the minimum support price. The Agriculture Minister announced he was scrapping the scheme because it was flawed. This was in the Chief Minister's absence; the Agriculture Minister clarified later that the scheme will continue

with some changes. Caste tensions in the wake of alleged dilution of the SC/ST(Prevention of Atrocities) Act, and later the amendment to the Act, had kept parties on the edge. It is seen as one of the reasons why the BJP did not fare well in the Gwalior-Chambal belt, which had bore the



Outgoing Chief Minister Shivraj Chouhan (centre) with incumbent Kamal Nath and Jyotiraditya Scindia (left) in December. Archive

**ONCE ONE-SIDED** 

**LOK SABHA 2014 (29 SEATS)** 

LS PROJECTION 2019

**BJP 27** 

Cong 2

**ASSEMBLY 2013 (230 SEATS)** 

**■** BJP 165 ■ BSP 4 ■ Cong 58 Ind 3

**ASSEMBLY 2018** 

organisational strength?

muscle in part, due to the presence of the RSS, while there is a visible improvement in the Congress's organisation. Some district units that were almost defunct have now come to life. The state Congress headquarters in Bhopal is now abuzz with activity. Though a divided house, it fought the Assembly elections cohesively. For the first time in more than a decade, the Congress has seen BJP leaders like former legislators switching loyalty to it. Until now, it was the Congress that had had to deal with defection from its ranks on crucial occasions. However, the CM continues to be the state Congress chief.

The BJP has retained its organisational

### Has the Congress continued the soft Hindutva that marked its campaign?

It has started implementing most of what it had promised in its manifesto to deny the BJP any chance of painting it with an anti-Hindu or pro-minority brush. The government has begun by underlining that despite seeking votes in the name of the cow, the BJP had not opened even one gau shala in the state. The new government has come out with its plan to open 1,000 gau shalas in four months. Its initiatives have won praise from a couple of leading Jain saints. From setting up a spiritual department to increasing honorarium of temple priests, the new government has not slackened its pace.

### Are there camps in conflict within the two parties?

The Congress had made it clear that either Kamal Nath or Jyotiraditya Scindia would become the chief minister. Once Nath was made CM, the Scindia camp did not raise a fuss, knowing that he has age on his side. The party has given Scindia a huge responsibility in Uttar Pradesh. After many of his supporters made it to the Assembly, Digvijaya Singh now wields huge clout, but he has made it clear that he is not after any chair. Two Congress leaders, Suresh Pachauri

and Ajay Singh, lost. In the BJP, a section had projected then Chief Minister Chouhan as a counter to Modi ahead of the 2014 elections. Modi's emphatic victory had made the talk redundant. After losing the 2018 elections, Chouhan apportioned the blame to himself, saying only he was responsible. Now a party vice-president he continues to praise the Prime Minister the way he did when he was in power. Except veteran Raghunandan Sharma who blamed a remark on reservation by Chouhan for the loss, no other leader has challenged him openly.

### Has there been any indication of which sitting MPs the parties are likely to renominate, and which ones could be denied tickets?

The Congress has only three members. Chief Minister Kamal Nath will have to win an Assembly seat in a byelection to validate his stay in office; his son is a strong contender for the Chhhindwara Lok Sabha seat. There is a question mark over Jyotiraditya Scindia contesting the Lok Sabha elections because he has been given charge of Western Uttar Pradesh. Former Union Minister Kantilal Bhuria is the third Congress MP.

The BJP, on the other hand, may be called upon to drop a few; it has reportedly got feedback that these MPs are unlikely to retain their seats. In the Assembly elections, the BJP had denied tickets to 53 MLAs.

**NEXT** #11 Can Congress's Assembly poll showing translate to LS? PART 2: RAJASTHAN

### **Cong 114** This is not a prediction, only a projection based on distribution of votes in 2018. LAST 5 ELECTIONS (VS = ASSEMBLY) ELECTION **CONGRESS** Seats Vote share Vote share **Seats** 143 **VS 2008** 36.8% 36.0% 71 LS 2009 16 43.5% **12** 40.1% VS 2013 165 44.9% 58 36.4% 27 LS 2014 54.0% 2 34.9% VS 2018 109 40.9% 41.0% 114

brunt of violence during a bandh called by Dalit organisations on April 2 last year. However, the BIP did exceedingly well in the Vindhya region, another area where caste politics is dominant. There, caste tensions have eased.

The Congress promised to ban RSS shakhas on government premises and stop participation of government employees in these shakhas, but it has so far avoided a decision on it, arguing that the promise itself has worked as a deterrent.

In the recent electoral history of Madhya Pradesh, how differently have people voted in Assembly and Lok Sabha polls?

It has been a mixed bag in the last three

performance after the respective Assembly elections improved even though different dispensations ruled the Centre at the time of elections. In 2009, the BJP was reduced to 16 seats from 25 seats, even though its vote share in the Assembly elections had gone up. The influence of the BJP's projection of Narendra Modi was distinct even in the 2013 Assembly elections. It helped the BJP improve its assembly tally to 165 from 143 and the Lok Sabha tally from 16 to 27. Anticipating that a victory in 2019 is not assured, many BIP MPs had sought Assembly tickets.

pairs of elections. In 2004 and 2014, the BJP's

How do the two parties compare on

# The Dard Aryans of Ladakh: who are this tribe, what are their concerns?

# DIVYAA

NEW DELHI, FEBRUARY 7

THERE ARE just 4,000 of them left in the world, and 30 of those were visiting Delhi recently. In heavy fur costumes, flower bouquets adorning their heads, members of the Dard Aryan tribe from Jammu & Kashmir's Ladakh region were in the capital as part of a seminar that extensively discussed the need to preserve their legacy. They spoke about a struggle to do so, as they perceived a threat to their cultural "owing to modernisation and migration". With the help of experts, they drafted a memorandum and submitted it to the Centre, requesting the government for intervention.

# Who are the Dard Aryans?

Some 200 km from Leh are the villages of Dha, Hanu, Garkone and Darchik on both sides of the Indus River, inhabited by the Buddhist Dard Tribes. The villages are to-

gether called the "Arvan valley". "The word 'Dard' is derived from a Sanskrit word, 'Daradas', which means people who live on hillsides," said Virendra Bangroo, assistant professor at Indira Gandhi National Centre for the Arts (IGNCA), who has extensively researched on their lives, and also curated the exhibition/seminar in Delhi. He added people of this region are culturally and linguistically different from those in other parts of Ladakh. Among other researchers who have gone into the community's roots, there is a line of thought that the "Aryans of Ladakh" or the "Brokpas" might have descended from soldiers in Alexander's army who had come to the region over 2,000 years ago. The Dard Aryans, however, do not document their history, Bangroo said.

# Their customs

They rear goat and sheep for milk and meat, and their festivals are based on the solar calendar. Bangroo visited the regions inhabited by the Dard Aryan community back in 2017, where he helped set up two



30 members of the tribe were in Delhi for a seminar on their legacy. Express

museums to archive their cultural heritage. Bangroo is of the view that their traditions go back 5,000 years; those who still follow the original customs worship trees, rivers

and mountains. During their visit to Delhi, they were also taken to Pravagrai for a day to visit the Kumbh. These tribals are mainly dependent on agriculture; the apricots

grown here are considered among the best in the world and there are 12 varieties of grapes in the region. Bangroo said grapewine is very popular in the "Aryan valley".

# The concerns

A number of researchers, as well as the tribals, perceive a threat to the heritage of the community owing to modernisation, migration and religious conversion. The community now numbers about 4,000. Over the last few decades, many of them have embraced Islam or Buddhism. "The community prohibits marriage with outsiders to keep the gene pool intact. Of late, the Dard men have been migrating to other parts of the region (in search of livelihood) and marrying outside the tribe," Bangroo said. "The tribe is struggling to find a balance between modernity and traditional values." Also, after the Kargil War, development work in this region has been restricted. Some of the areas of the Aryan valley are out of bounds for outsiders, since it borders Pakistan-occupied Kashmir.

# Their demands

Members of the community said there are only three high schools in their villages and very limited resources for livelihood — mainly because of the harsh weather and difficult terrain. As such, they have no option but to migrate to cities for higher education and employment. They have demanded that the government set up a tribal hostel and declare the "Aryan valley" a heritage village to boost tourism.

A delegation of the Dard Aryans submitted their charter of demands to Minister of State for Tribal Affairs Sudarshan Bhagat. Besides, they have also asked that a Dardi post be filled at I K Art, Culture and Language Academy in Kargil; a regional Study Centre for Dardi Tradition; and a Cluster Model Village at Garkon to boost the cultural heritage of the Dard Aryans. Bangroo said the tribe is already part of the Scheduled Tribes list, but the only way to sustain them is by giving them special status and helping make them self-sufficient so that they don't have to migrate.

THE INDIAN EXPRESS, FRIDAY, FEBRUARY 8, 2019

# THE EDITORIAL PAGE

WORDLY WISE

A LOWER INTEREST RATE DOESN'T MAKE A DEBT GO AWAY.

— DAVE RAMSEY

# **♦** The Indian **EXPRESS**

∽ FOUNDED BY ∽ RAMNATH GOENKA

BECAUSE THE TRUTH INVOLVES US ALL

# MAKING THE CUT

RBI decision takes its cue from stance of global central banks, risks being seen as monetary stimulus in run-up to polls

HE RBI'S MONETARY policy review on Thursday was framed in the shadow of the interim budget, and fiscal slippages, with the fiscal deficit now projected to be a little higher at 3.4 per cent against the budgeted target of 3.3 per cent for FY-19. It was also the first policy review of the new RBI Governor, Shaktikanta Das. In the event, the RBI surprised the financial markets and many analysts by announcing a 25 basis points cut in its key policy rate, the reporate, from 6.5 per cent to 6.25 per cent, with two members of the Monetary Policy Committee, including the deputy governor in charge of monetary policy, Viral Acharya, voting for keeping rates unchanged. Indeed, the rate setting committee was unanimous on shifting the policy stance of the Indian central bank from calibrated tightening to neutral, saying that it would provide the flexibility to meet evolving challenges on the growth front.

The RBI has justified a rate cut, taking into account the food deflation, decline in headline inflation which is now projected to be below the mandated target of 4 per cent by the third quarter of the next fiscal, low oil prices and other external risks such as the impact of a slowing global economy, Brexit, trade wars and the prospect of fiscal slippages. The 130 basis points drop in inflation expectations for the upcoming fiscal in the December round of the household expectations survey of the central bank may have also influenced the rate setting committee. At 5.6 per cent, core inflation is still high. The question is also whether food deflation is sustainable and whether it would take a turn, which could then make it difficult for the RBI to reverse its stance. In its defence, the Indian central bank may also have been guided by the evolving stance of other global central banks including the US Federal Reserve and the European Central Bank, which appear inclined to keep monetary policy loose in the face of slowing growth.

The decision to cut rates, however, carries the risk of being perceived as a monetary stimulus after a relatively expansionist fiscal policy in the run-up to the national polls. If the reduction in policy rates is to be accompanied by an interim dividend or transfer of surplus to the government before the end of the current fiscal, it is bound to be seen as a compromise on the RBI's autonomy. It would be unfortunate if such a perception were to gain ground. For, it will negate the Indian central bank's hard fought gains on operational independence, especially since the Modi government formalised a monetary policy framework agreement which laid the foundation for it.

# COURT'S REPRIMAND

Pakistan's apex court tells off Army and ISI, asks them to stay out of politics. It may not amount to much

HE PAKISTAN SUPREME Court's remarks against the Pakistan Army and its powerful intelligence agency, ISI, are not the first by the country's top court along these lines. Twelve years ago, the Lawyers' Movement began as a protest against the removal of the then chief justice by an army ruler, quickly turning into a movement against army rule. Pakistan's apex court has revelled in its independentmindedness since then. Sadly, however, it has not made much of a difference to who rules Pakistan, not least because the court itself has been a willing instrument in destabilising democratic rule.

Taking on politicians who are perceived as corrupt and failing on governance has made it popular, but the Supreme Court's own functioning has underlined the systemic flaws that continue to plague Pakistan. Today, if judges are still pulling up the Army and ISI and ordering them to stay out of running the country, it is in no small measure due to the actions of the higher judiciary. Less than two years ago, the Supreme Court was perceived as playing the Army's game when it unseated Nawaz Sharif on the basis of a little used provision in the Constitution inserted in the Zia era, and later disqualified him for life. That paved the way for Imran Khan and his party to win the 2018 elections, with the ISI openly lining up all the ducks for him. Now, the verdict in which the two-judge bench has asked the ISI and Army to stay out of politics and to operate within the "limits defined by law" has come in a case the Court had taken up suo motu on the 2017 siege of Islamabad by the Tehreek-e-Labbaik Pakistan, an extremist Barelvi group that came up after the judicial execution of the assassin of Salman Taseer. The PML(N) was in power then under PM Shahid Khaqan Abbasi who replaced Sharif. The Army flatly refused a government request for its help in dispersing the sit-in, but negotiated a monetary pay-out with the leaders of the protest. Pakistan's judiciary cannot be oblivious to the reality that its instructions to the government to act against those propagating "hate, extremism and terrorism" are meaningless unless there is co-operation from the Pakistan Army, to which such individuals and groups owe their existence.

Still, what makes this verdict noteworthy is that one of the two judges on the bench is a Pashtun from Balochistan, Pakistan's restive province. His dislike of the present government is an open secret. He is the third most senior judge in line of succession to the post of chief justice. If and when that elevation takes place, such sentiments may be heard more frequently from the Pakistan Supreme Court. Whether they add up to anything significant is another matter.

# @SUSHRIMAYAWATI

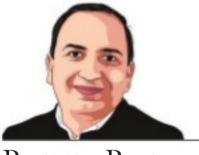
BSP chief's entry in Twitterverse signals an interesting shift in the party's outreach strategy

N THE AGE of 24/7 news, across mediums, it is rare to find politicians and political parties as reticent as Mayawati and the Bahujan Samaj Party. In fact, the stated reason for Mayawati's relatively late entry into Twitterverse — "speedy interaction with media and people" — appears, at first glance, to be less than revelatory. After all, a four-time chief minister, former MP and arguably the most prominent contemporary Dalit leader, should have ample avenues to get her point of view across. There's also the fact that Mayawati has stated in the past that the social media platform is not relevant to her brand of politics and she has even distanced the BSP from accounts running in its name.

The BSP has remained aloof from the mainstream, "savarna", media for much of its history. Even its organisational structure is unusual and opaque. In between elections, the party rarely comes out on the streets, even on issues affecting Dalit rights. The exception to this, of course, has been when either Mayawati or Kanshi Ram have been at the receiving end of caste- or gender-based slurs. Mayawati's dive into Twitterverse, then, could

signal a shift in the BSP's functioning ahead of a crucial general election. In the last four-odd years, the BSP has found itself playing catch-up on several issues — from the death of Rohith Vemula and flogging of Dalits at Una in Gujarat to mobilisations by the Bhim Army in Western UP. Electorally, while its vote amongst Jatavs has reportedly held, it has lost substantial support in other SC communities to rivals like the BJP. As a new, younger Dalit leadership emerges with the likes of Jignesh Mevani and Chandrashekhar Azad, @SushriMayawati is clearly keen to make her presence felt among her base, as well as the youth. What will be interesting to watch is how she and the BSP deal with the inevitable coarseness in the jousting on social media.

# Politics of anti-corruption



In its latest version, it seems coincidental with the whims of a despairing authoritarianism

PRATAP BHANU MEHTA

THE POLITICS OF "anti-corruption" in India presents a fascinating spectacle. Like the use of religion in politics, anti-corruption works more as a totem for the consolidation of political identity than a genuine desire to clean the system. For long, there was an unwritten understanding that the protocols of politics required nods and winks to the issue of corruption, but no real action. This is, in part, because the conditions for a genuine anti-corruption politics do not exist.

A genuine anti-corruption politics requires institutions that can credibly project the distinction between political vendetta and a genuine search for truth. No political party could create those institutions without risking some of its own people. The wider political resonance of corruption as an issue was debatable; people looked for effectiveness and often the corrupt were effective. There was also a strange deference to democracy in the reluctance to take on corruption. After all, prosecuting leaders who were popular was also, in some ways, indicting the sentiments of their supporters, who deeply identified with them. Even in their corruption, many leaders represented social movements. In fact, the perceived risk that if you prosecuted a popular leader with a big political base, you could actually consolidate their supporters, was quite high.

In 2014, this low-level equilibrium seemed to change in three respects. First, there was a nascent social movement that, briefly, offered tantalising possibilities of thinking of a politics outside corruption. This movement delegitimised UPA 2. The BJP was the biggest beneficiary of the space that opened up. But the movement dissipated: Some of it got absorbed into routine politics. But there is also a recognition that anti-corruption can unleash a yearning for authoritarianism. Faced with that prospect, a little venality here and there seems something we can live with.

Second, there seemed to be a moment when independent non-elected institutions like the CAG or even the Supreme Court could do a credible job of mediation. But the credibility of these institutions also diminished, and their interventions seemed to be more like power trips in disguise than prin-

What is striking about the new-found zeal of CBI and ED is the air of desperation that attached to it. The evidence of desperation is the self-defeating logic inherent in its actions. When you target political opponents, it is usually wise not to target all of them together. But in doing so, the government has pulled off the astonishing feat of uniting the Opposition around the CBI. More importantly, it has managed to make a bunch of leaders, from Banerjee to Akhilesh Yadav, whose own record with law enforcement institutions is quite debatable, come out as victims. Second, since this government often acts as if the world began in 2014, it

forgot one elementary fact. If

you want to go after any

with total credibility.

leaders, you should do so

cipled takes on corruption. Third, the prime minister staked his own identity around a moralistic view of corruption with three promises: An incorruptible government, a return of the illegal proceeds of corruption, and an expectation amongst his supporters that the guilty would be prosecuted. The last expectation, in core BJP circles, has often been centred on the Gandhi family, which even today can draw them into paroxysms of hate. But the BJP's anti-corruption plank was

going to run on empty. First, it was not going to relinquish control of all institutions of the state. But without credible institutions you cannot project the distinction between vendetta and genuine cleaning. The BJP needed that control, in part, to protect its own. Just witness the way in which charges are filed and dropped against riotaccused in a state like UP. So no real institutional reform was going to happen. Second, demonetisation inflicted immense suffering compared to the paltry gains that accrued from it. Third, whatever may be the truth of the matter, the handling of the Rafale affair took the sheen off the government's claim that it had nothing to hide. Fourth, and most importantly, the more authoritarian a regime gets, the more anti-corruption works as a tool for consolidating power. Some of those being targeted may indeed have something to answer for. But

that is merely an incidental effect of trying to consolidate power. It is against this background that we can perhaps better understand the new found zeal of institutions like the CBI and ED (or shall we stop calling entities like the CBI institutions at all) to go after political targets from Mamata Banerjee to Robert Vadra. What is striking about this new-found zeal is the air of desperation that attached to it. The evidence of desperation is the self-defeating logic inherent in its actions. When you target political opponents, it is usually wise not to target all of them together. But in doing so, the government has pulled off the astonishing feat of uniting the Opposition around the CBI. More importantly, it has managed to make a bunch of leaders, from Banerjee to Akhilesh Yadav, whose own record with law enforcement

institutions is quite debatable, come out as victims. Second, since this government often acts as if the world began in 2014, it forgot one elementary fact. If you want to go after any leaders, you should do so with total credibility.

For if anti-corruption can bolster the ruling party's unity, it can also consolidate the support of opponents. This is particularly true of leaders who have a genuine mass base. While Banerjee may herself overreach, the BJP managed to convert her into a national symbol of resistance against the tyranny of the Centre. The optics of calling in Vadra at this moment is even more curious. There may or may not be a genuine case against him. The BJP may be hoping that the Vadra headlines will remind voters of what the BJP thinks is the structural corruption that the Gandhi family represents. But the fact that the acceleration of investigation happens after Priyanka Gandhi's entry into politics may have the opposite effect. Perhaps the BJP can remember that whatever may have been the truth of the charges, the prosecution of Indira Gandhi was seen as vindictive and helped wash away her sins.

So if the political risks of using the CBI and ED in this way against a large number of leaders is so high, why would the BJP do it? It is hard to believe this is about the law taking its own course. The answer is twofold: A signal of authoritarian control, to scare off opponents. Desperation that the anti-corruption narrative has not worked for the BJP. It wants to shift the onus back onto the idea that it is the incorruptible party amongst the corrupt. Except, this horse has bolted a while ago.

Will this backfire? In all likelihood, since we are now back to the pre-2014 conventions in Indian politics. We rail against our politicians, but we also don't like to see them victimised. There is, doubtless, a lot of corruption that needs to be investigated. But it is a tragedy that in one social contract the issue was made marginal by the compact between politicians, and now it is entirely coincidental with the whims of a despairing authoritarianism.

> The writer is vice-chancellor, Ashoka University. Views are personal



# A TANTALISING MYSTERY

Why did Indira Gandhi call off the Emergency?

FALI S NARIMAN

COOMI KAPOOR'S COLUMN 'Inside Track' (IE, February 3) — for me, particularly — was fascinating as it referred to Kuldip Nayar's latest book and recorded: "Among the many interesting anecdotes Nayar recounts is that Sanjay Gandhi informed him after the Emergency that he had assumed his mother would not call elections for three to four decades."

This is the unsolved problem of our times: Why did Indira Gandhi call off the Emergency and decide to hold elections in **January 1977?** 

For many years after the Internal Emergency was revoked in March 1977 when elections were held, and the Congress Party, under the leadership of Indira Gandhi, was swept out of office — I harboured the recollection of someone (probably the then high commissioner for Australia, Bruce Grant, with whom I used to go for evening walks at Nehru Park) telling me that he had it first-hand from Mrs Gandhi that it was US President Jimmy Carter, who on his visit to India, persuaded her to "go legitimate", and call elections in March 1977.

I mentioned this to all and sundry. I re-

I harboured the recollection of someone (probably the then high commissioner for Australia, Bruce Grant, with whom I used to go for evening walks at Nehru Park) telling me that he had it first hand from Mrs Gandhi that it was US President Jimmy Carter who on his visit to India, persuaded her to 'go legitimate', and call elections in March 1977.

peated this story at a luncheon meeting with the judges of the Supreme Court of the United States (at one of the functions of the Indo-US Legal Forum in Washington in 1995). Justice Ruth Ginsberg, presiding at our table, was extremely interested in this tidbit of information and asked me whether I could lay my hands on any authenticated document to support this recollection of mine. I then went back to India but drew a blank. Even the then Leader of the Opposition, L K Advani (who had been detained in jail during the Emergency), told me that he had no recollection of the president of the United States prompting Indira Gandhi to hold elections in March 1977.

In times of need I used to rely on an old friend of mine (and of India's) who was a storehouse of information about those troubled times. I inquired from Granville Austin ("Red" Austin) in Washington, (alas he is no more) and he very kindly looked into the papers in the Library of Congress, but found nothing. So I penned a letter of apology to Justice Ruth Ginsberg (dated July 17, 1995) saying: "Sorry, I misled you. My only excuse was one given by your distinguished countryman Mark Twain. He had written: 'The older one gets the more vivid the recollection of things that have not happened."

The judge (unlike many judges) had the courtesy to reply by letter dated July 25. 1995, which read: "Appreciation for your good letter of July 17, and for calling my attention to the wisdom of Mark Twain — a statement that captures my own experience at least as much as it does yours. With highest regards, Ruth Bader Ginsburg."

I always thought until I read Kapoor's column that mine was a case of recalling things that had never happened, but now it would be well worth some research in India (not in the Library of US Congress) perhaps in the godowns of *The Indian* Express itself — as to who or what changed Mrs Gandhi's mind when she decided in January 1977 to call elections.

Sanjay Gandhi apparently did not know – the man closest to her at the time. Perhaps some readers of this newspaper old, but not very old like me — could perhaps help to solve this till-now intractable problem.

The writer is constitutional jurist and senior advocate to the Supreme Court



# FEBRUARY 8, 1979, FORTY YEARS AGO

# BHUTTO'S PETITION

ZULFIKAR ALI BHUTTO'S lawyer, Yahya Bakhtiar, said after an hour-long meeting with Bhutto at the Rawalpindi jail that the former Pakistan PM had authorised him to petition the Supreme Court for a final legal review of its judgment sentencing Bhutto to death. Bakhtiar said he and Bhutto did not discuss filing a petition for clemency because the latter has already declared that neither he nor his immediate family would appeal for clemency to President Zia-ul Haq. Describing his meeting with Bhutto, Bakhtiar said, "I have yet to see such a courageous man... he was more concerned with the fate of Pakistan than his own".

# JANATA UP VOTE

THE JANATA PARLIAMENTARY Board today asked the Uttar Pradesh Chief Minister, Ram Naresh Yadav, to seek a vote of confidence of the state legislature party. The board decided that a meeting of the legislature party be held on February 15 for this. The railway minister, Madhu Dandavate, has been named the central observer to conduct the meeting at Lucknow. The Board, which considered for an hour the crisis plaguing the UP party, disapproved of the action of the chief minister in demanding resignations from four ministers without even consulting the party president. The high-powered seven-member Board took these decisions in response to the

plea made by a majority of the members of the state legislature party. A formidable majority had challenged the leadership of Yadav and sent a memorandum to the party president, Chandra Shekhar.

# IP WRITES TO ZIA

JAYAPRAKASH NARAYAN APPEALED to Pakistan President Zia-ul Haq to grant clemency to former PMZA Bhutto and those convicted along with him. In his telegram to Zia, JP said that all death penalties, even if lawful, were "immoral" and "barbarous". When this weapon was used in political cases it became a "serious danger to human civilisation itself," he added.

# 13 THE IDEAS PAGE

# Faith and gender justice

Court has upheld equality. Muslim Personal Law Board and devotees of Ayyappa must initiate internal reform



FAIZAN MUSTAFA

IN A RECENT television interview, Prime Minister Narendra Modi said that while opposition to women's entry into Sabarimala is a question of tradition, triple talaq is an issue of gender justice. The prime minister has echoed what his party president and other BJP leaders have been saying over the past few months: Sabarimala is an issue of aastha (faith). Surprisingly, however, the Supreme Court's Shayara Bano judgment (2017) does not talk of gender justice. The court set triple talaq aside because the majority in the fivejudge bench found the practice to be un-Islamic — that is, against the faith.

The prime minister's sentiments on Sabarimala have been echoed by the RSS chief, VHP leaders and top ministers of the Modi government in the context of the Babri Masjid dispute. Some of them have quite brazenly asked the apex court to decide the property suit expeditiously.

At a time when it seems that religion will play a significant role in the electoral battle of 2019, it is of utmost importance that we understand the meaning of tradition? What is faith? What is gender justice? Are Sabarimala and triple talaq issues of faith/tradition or do they pertain to gender justice? Is it right for the prime minister and others to approve the dissenting opinion of Justice Indu Malhotra in the Sabarimala judgment but go against the dissent by the then Chief Justice of India J S Khehar and Justice Abdul Nazeer in *Shayara Bano* — the two had argued that the "tradition" of triple divorce is as old as Islam, that is, 1,400 years. The exclusion of women in Sabarimala is not such an ancient tradition and a queen of Travancore is said to have visited the temple as late as 1939.

In fact, the majority in the triple talaq judgment considered freedom of religion nearly absolute. CJI Khehar explicitly held that personal law is included within the freedom of religion and observed that the courts have a duty to protect personal law and are barred from finding fault in it. He went on to hold that personal law is beyond judicial scrutiny. "Triple divorce cannot be faulted either on the ground of public order or health or morality or other fundamental rights," the-then CJI said. Justice Rohinton Nariman and Justice UU Lalit too accepted that triple talaq is considered sinful and thus cannot be termed as an essential Islamic practice that is entitled to constitutional protection. Sin is essentially a concept of "faith". Moreover, they struck down the practice as arbitrary. The judges rightly observed that the fundamental nature of Islam will not change if triple divorce is not recognised. Justice Kurian Joseph too said triple divorce is un-Islamic and what is sinful in theology cannot be valid in law.

"What an individual does with his own solitariness" is how the English philosopher Alfred North Whitehead defined religion or faith. To former President S Radhakrishnan, "Religion was a code of ethical rules and the rituals, observances, ceremonies and modes of worship are its outer manifestations." Thus, whom to worship, how to worship, where to worship and when to worship are all questions of faith or religious tradition. Faith also tells us what is permissible and what is prohibited in certain contexts. Thus, what food is permissible and with whom sexual relations are prohibited too are questions of faith for a believer or a follower of religious tradition. If the intimate relationship



C R Sasikumar

between a believing Hanafi (most Indian Muslims are followers of this sect) couple has become sinful — and goes against the tenets of their religion — we cannot, legally speaking, force them to continue in such a relationship. Article 26 gives every religious denomination or any sect thereof the freedom to manage its own affairs in matters of religion.

The argument that since some Muslim countries do not permit triple divorce therefore triple divorce is not an issue of faith and can be made a criminal offence — is misconceived, as Islamic law is not uniform. It varies from one school (sect) to another. Moreover not recognising triple divorce as a valid form of divorce is one thing and making it a criminal offence is another. After the Supreme Court judgment, there is today near unanimity within experts of Indian Islam on the former point. But most of them are opposed to the criminalisation of triple talaq because divorce is fundamentally a civil matter.

Faiths are all about "beliefs" and these beliefs need not be based, either on rationality or on morality. Reason and empiricism are alien to religions. In fact, all faiths are regressive, exclusionary and discriminatory because their origins date to pre-modern

But the Constitution, as a progressive document, gives us the right to have a certain amount of irrationality and blind belief, under the Freedom of Religion (Articles 25-28). By overemphasising "constitutional morality," the Sabarimala judgment tried to curtail this freedom to irrational beliefs. That led to protests. Justice D Y Chandrachud had described the exclusion of women as untouchability, while delivering the verdict in the Sabarimala case. Many of us thought that he was going too far but the purification of the temple after the entry of two women has proved that there is indeed an element of untouchability in the exclusion of women this, when the Constitution has explicitly abolished untouchability.

Gender justice is a modern concept to which our Constitution is committed. Freedom of religion is subject to the Right to Equality and that's why judges have little choice in upholding discriminatory practices. But we should not aim just at formal equality but try to achieve substantive equality. Substantive equality rejects the "sameness doctrine" under which men and women are to be given the same treatment. It rather favours recognition of differences between men and women and advocates differential but just treatment for women.

In the Sabarimala case, the majority struck down the rule that prohibited women from entering the temple as it went against the parent act on places of worship. This Act lays down that all places of worship in Kerala shall be open to all sections of Hindus. The Supreme Court refused to recognise the Ayyappa devotees as members of a distinct Hindu sect. It also refused to extend the Freedom of Religion to gods, thus refuting the primary argument of the Sabarimala trust. The trust had argued that Ayyappa, being a celibate himself, excluded women from his temple. Justice Chandrachud held that deities are not entitled to fundamental rights. The review court may re-examine this claim.

Gender justice is a modern concept to which our Constitution is committed. Freedom of religion is subject to the Right to Equality and that's why judges have little choice in upholding discriminatory practices. But we should not aim just at formal equality but try to achieve substantive equality. Substantive equality rejects the "sameness doctrine" under which men and women are to be given the same treatment. It rather favours recognition of differences between men and women and advocates differential but just treatment for women.

The distinction between faith and tradition is artificial and gender justice requires reforms in both. The devotees of Ayyappa as well as the Muslim Personal Law Board must appreciate the constitutional vision of gender justice and religions must reform themselves internally. However, the top-down model of reforms will not work as Indians are essentially religious and prefer to go by the opinions of clergy rather than the courts. The Sabarimala protests have yet again proved that courts are ill-equipped to initiate reforms in faiths.

The writer is Vice-Chancellor NALSAR University of Law, Hyderabad. The views expressed here are personal

# WHAT THE OTHERS SAY

"The US has taken powerful steps to sanction the Maduro regime [in Venezuela], but it must not become the chief protagonist of the regime change drama." —THE WASHINGTON POST

# Mahatma's many deaths

Over seven decades after his assassination, Gandhi is still reviled for his commitment to a secular India



TAHIR MAHMOOD

Dard-o-gham-e-hayat ka darman chala gaya/Woh Khizr-e-asr-o-Isa-e-dauran chala

(Gone is the elixir for the miseries and agonies of life/Gone is that Khizr of the time, Messiah of the age)

THIS IS how the eminent Urdu poet Asrarul-Haq Majaz had lamented Mahatma Gandhi's tragic assassination less than sixth months after Independence. To his credit, the great poet had put the Father of the Nation on a high spiritual pedestal, in the company of some great religious icons of Islam and Christianity.

Informing the nation of the ghastly catastrophe via a radio broadcast, Prime Minister Jawaharlal Nehru had said: "The light has gone out of our lives; that light will be seen, world will see it and it will give solace to innumerable hearts; for that light represented something more than the immediate present; it represented the living, the eternal truths, reminding us of the right path, drawing us from error, taking this ancient country to freedom." The nation had heard him breaking the stunning news in utter disbelief. All eyes were wet, all hearts sad.

I was a primary school kid when that horrendous catastrophe had struck the nation. Many words of the saddened prime minister's sentimentally-charged broadcast on the Mahatma's tragic assassination stuck in my mind and, once I became an adult, prompted me to express my feelings for him in prose and poetry. On the 22nd anniversary of that darkest day in India's post-Independence history, I addressed my fellow Indian students in London with an Urdu couplet:

Tu iss dharti ke har vasi ko Bapu ka jigar de de/Toh jhagra dharm aur bhasha ka sab pamal ho jaye

(God! Put Bapu's ideals into the heart of every inhabitant of Earth/ that will put an end to all discords based on religion and language.)

But alas, today it is the same discords over religion and language that are wreaking havoc across the globe, including in Bapu's own sacred land, plunging the society into a terrible state of inhumanity which is repugnant to the great Mahatma's

concept of global human camaraderie.

Year after year on January 30, right from 1949, sirens have been blaring out in government offices and educational institutions, reminding people of independent India's most heinous tragedy and alerting them to remember for a while the man who had played the key role in the struggle for Independence. This year, too, the sirens did their duty. At precisely the same time, however, in a city near the nation capital, some people were gleefully staging a mock assassination of the great Mahatma amid chanting of the slogans of "amar rahe" (long-live) for his killer, using for him (the killer) the epithet "Mahatma". The ghastly scene made public by some news websites wounded my soul and heart. And, surely, the same must have been the case with millions of my fellow citizens across the nation.

Majaz, who had showered encomiums on the Father of the Nation using religious jargon, was a Muslim. And so am I, with my deep devotion to the Mahatma. But our religion is today seen as an alien faith, thanks to the forces that are hell-bent on destroying the centuries-old communal harmony in our great country. No amount of feelings expressed by the followers of this faith for the great Mahatma or for the motherland, in prose and poetry, succeeds in changing this perception. People do not hesitate, even in branding us as anti-nationals, while others hurling filthy abuses on the Father of the Nation and celebrating his assassination are seen as devout patriots. Their abominable actions do not make them less patriotic, nor are these seen as deshdroh.

Years ago, the Supreme Court of India also had so linked the Mahatma to certain provisions of the country's Constitution: "The object of articles 25 to 30 was to preserve the rights of religious and linguistic minorities, to place them on a secure pedestal and withdraw them from the vicissitudes of political controversy. These provisions enshrined a befitting pledge to the minorities in the Constitution of the country whose greatest son had laid down his life for the protection of the minorities. (St. Xavier's, 1974).

But, alas, that extreme step taken by the Mahatma did not succeed in sparing minorities the "vicissitudes of political controversy." Nor is his light, to use Nehru's words, "reminding us of the right path, drawing us from error" any more. Seventy years after Independence, the nation's chief freedom-winner is being abused and punished for his crime - preaching "Ishwar Allah tero nam."

> The writer is former chair, National **Minorities Commission**

# LETTERS TO THE EDITOR

# NEW POLITICS

step back' (IE, February 7). The Sangh Parivar and it's affiliates have realised that reviving the Ram Janambhoomi issue is like flogging a dead horse. The young generation wants jobs and better living conditions. The Congress, of late, has started adopting a "soft Hindutva" approach. This might rule out polarisation of votes to the advantage of BJP. But there are also signs that Indian democracy is moving away from such outdated issues.

THIS REFERS TO the editorial, 'Welcome

Vijai Pant, Hempur

# SIGNS OF AMITY

THIS REFERS TO the article, 'A new temple, a new mosque'(IE, February 6).The new temple as well as mosque in Avodhva should be built using money received as donations from both communities, that is donations for a temple from Muslims and donations from Hindus for a mosque. These places of worship will be remembered as symbols of communal harmony and tolerance.

**Akshay Meel,** Bhiwani

# KABUL PREDICAMENT

THIS REFERS TO the article, 'A crossroads at Kabul' (IE, February 7). India has economic and strategic interests in Afghanistan. The recent exclusion of India from US- Afghan Taliban talks is worrisome for New Delhi. The return of the Taliban will have grave implications. The Afghan Taliban has recently said that it want to change the country's constitution and make it Islamic. The implications of all this on India is is not very difficult to imagine. India's closeness to the US has increased in recent times but given India's exclusion in the talks in Afghanistan, New Delhi needs to rethink its relationship with Washington. Even US allies like Germany are rethinking their relation-

# LETTER OF THE WEEK AWARD

To encourage quality reader intervention, The Indian **Express offers the Letter of** the Week award. The letter adjudged the best for the week is published every Saturday. Letters may be e-mailed to editpage@expressindia.com

or sent to The Indian Express, B-1/B, Sector 10, Noida-UP 201301. Letter writers should mention their postal address and phone number.

THE WINNER RECEIVES **SELECT EXPRESS PUBLICATIONS** 

ship with the country. Nishant Parashar, Chandigarh

THIS REFERS TO the article, 'A crossroads at Kabul' (IE, February 7). While it is true that the US withdrawal from Afghanistan presents diplomatic challenges, blindly courting the Taliban seems both immoral and strategically unsound. In the "realpolitik" of encouraging fundamentalism India cannot

outplay Pakistan Bishwadeep Chatterjee, Delhi

# BRAVO WINDIES

THIS REFERS TO the editorial, 'Falling in love again' (IE, February 7). From the 1960s till the late 1980s teams used to fear the West Indian pace battery. The huge slide of West Indian team over the past two decades is disappointing. In such a background, the test series win against England is a huge achievement. **Bal Govind,** Noida

# THE Uvdu Press

# **BUDGET AND INCOMES**

THE BI-WEEKLY of the Jamaat-e-Islami, Daawat, on February 4, speaks of the importance of this year's Budget Session — the last for the current government. The paper's editorial contends that the government should have presented a vote-on-account as per precedent but says that it has "tried to present a full budget". The paper criticises the President of India, who, in its opinion, "acted as a party member and sang peans to the government of the day." The editorial does recognise that the President should also be speaking for the government of the day, but argues that he spoke of old issues – demonetisation and the surgical strike, for example. These should have gone into last year's report card, it argues.

Most Urdu papers have been effusive in welcoming the Minimum Income Guarantee for the Poor proposed by Congress President Rahul Gandhi. Siasat has an editorial on it on January 30. So does *Inquilab* on February 1. Titled, 'Kam se Kam Aamdani," it notes that the announcement left everyone gobsmacked. It says: "Only time will tell whether Prime Minister Narendra Modi's 10 per cent reservation for the economically weaker sections that grabs peoples' attention or he is upstaged by Rahul Gandhi's much-talked about minimum guarantee scheme." But, it

hazards a guess: "The scheme may prove to be the trump card for the Congress and generate a groundswell in its favour as it appeals to the lowest strata, which was the worst-hit by notebandi."

The paper equates the proposed scheme to the MGNREGA and says it has come at a time when, "globally, steep income inequality has become a matter of concern. People now know that the number of Indian billionaires is on the rise. The gulf between the rich and the poor has widened."

# MAMATA AND CBI

NEWSPAPERS HAVE taken mixed view of the stand-off between West Bengal Chief Minister Mamata Banerjee and the Centre over the CBI attempts to question Kolkata's Commissioner of Police Rajeev Kumar and the ensuing brouhaha. Siasat's editorial on February 6 titled,

'Aamirana Mahaul,' refers to a political environment in the country that is akin to dictatorship. It writes that: "Only time will tell which way the elections in West Bengal will swing but things are not at a pleasant state currently." The paper believes that "over the next few days, anything can happen anywhere now. What has happened with Mamata should be giving sleepless nights to the CMs of some other states as well."

Roznama Rashtriya Sahara's editorial on the same date conveys a different mood, 'Na haar na jeet'. The paper emphasises that "courts do justice, especially the Supreme Court. Interpreting its verdict as a victory or defeat would be wrong as courts are not in the business of handing out such certificates."

The paper writes, "It is a victory of the courts, especially the Supreme Court" as it has underlined the tasks for both the sides. "It doesn't appear as if the matter has ended, as the CBI and the Kolkata Police have to do their respective jobs. The Ministry of Home Affairs has called for an enquiry against Rajeev Kumar."

*Inquilab* on February 6 admires Mamata and says: "Whoever decided to send the CBI to the state did not realise that Mamata is no hostage to geedar bhabhki (meaningless threats)." The paper is convinced that, "Mamata had decided what was to be done in any eventuality and was well-prepared."

# HINDUTVA MATTERS

ON THE PROPOSED transfer of the "non-disputed" land around the Ram Mandir-Babri Masjid complex, about which the Centre has petitioned the Supreme Court, requesting it to be handed over to the Ram Janambhoomi Nyas, the Urdu press has generally taken a dim view. The move has dented the state's credentials a "non-partisan entity," notes Roznama Rashtriya Sahara on January 30. The paper details the background of how the land around the demolished Masjid was acquired and kept by the government for safe-keeping in 1993. Tinkering with that, while the matter is sub-judice, would be a breach of trust, the paper notes. *Inquilab*, on the same day, has an editorial

Ayodhya dispute. It laments that the Modi government's move has made it a "party to the dispute." The editorial of the Hyderabad-based AIMIM's daily, *Etemaad*, on January 28 argues that the BJP has used the Ram Mandir card at a time the SP-BSP have come together in

UP and the Gandhi scion, Priyanka Gandhi,

on the matter. The paper contends that this

is the latest bid at a political solution to the

has entered politics. The attempts by a Hindu Mahasabha activist to re-enact Mahatma Gandhi's assassination has elicited strong responses. Etemaad's editorial on February 4 asks, "Are those who support Godse's views, not Ghaddar-e-Watan (traitors to the nation)?" Inquilab on February 3 asks why such incidents do not elicit a admonition from the Centre.

Compiled by Seema Chishti

WWW.FINANCIALEXPRESS.COM

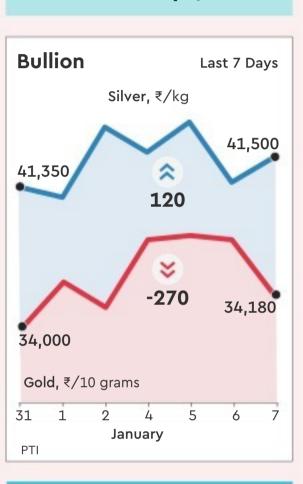
# Street Signs **Nifty Metal** Index ends flat as Coal 0.10% India gains nearly 2% 2,855.05 2,835.8 2,829.85 2,806.6 Close Open **Nifty Energy** Index declines as 1.10% heavyweight RIL falls **15,472.65** 15,395.3 15,225.1

February 5 **INDIAN BASKET CRUDE** \$62.86 BBL ₹4,509.64 BBL **EXCHANGE RATE** ₹71.75/\$

Open

15,185.5

Close



### 39 40 38 Sugar 124 102 Mustard oil 121 Price in ₹/kg for Delhi, Mumbai, Kolkata and Quick

**PRICE POINTS** 

36

25

89

15

33

35

76

26

28

NR

78

10

76

32

February 7

Rice

Wheat

Tur dal

**Potato** 

# RBI imposes ₹1-cr

# penalty on SBI for violation of norms State Bank of India on Thursday said

the Reserve Bank of India has slapped ₹1 crore penalty on the country's largest lender for violating norms. RBI "in exercise of powers conferred under Section 47 A of the Banking Regulation Act, 1949 has levied a penalty of Rupees one crore on the bank for not monitoring the end use of funds in respect of one of its borrowers," SBI said in a regulatory filing. SBI, however, did not share details of the borrower and the loan amount given to the borrower.

### 21 firms under NSE's short-term surveillance

AS MANY AS 21 firms including Religare Enterprises, Reliance Naval and Engineering, and Binani Industries have come under short-term additional surveillance measure (ASM) framework of the NSE, according to the latest data available with the exchange. Among other companies in the list are Ballarpur Industries, GTL Infrastructure, Mandhana Industries and Sri Adhikari Brothers Television Network.

### BSE to suspend seven suspected shell firms

THE BSE HAS decided to suspend as many as seven suspected shell companies from Friday after they failed to provide the information sought by forensic auditors in a time-bound manner. The firms facing suspension are Aadhaar Ventures India, Blue Circle Services, IKF Technologies, Prabhav Industries, ST Services, Silverpoint Infratech and Winy Commercial & Fiscal Services, the BSE said in a circular. The securities of these companies 'shall be suspended with effect from Friday, February 8, 2019, until further notice'.

# ADVERSE WEATHER IMPACT

# CAI lowers cotton crop estimate for 2018-19 to 330 lakh bales

The main reason for the decline in the estimates of the crop is mainly due to farmers in the southern zones uprooting their cotton plants following moisture deficiency which has left no scope for third or fourth pickings

PRESS TRUST OF INDIA Mumbai, February 7

THE COTTON ASSOCIATION of India (CAI) on Thursday lowered its January estimate of the cotton crop by 5 lakh bales than its previous estimate to 330 lakh bales (of 170 kgs each) for the 2018-19 season, beginning from October 1, 2018.

The main reason for the decline in the estimates of the crop is mainly due to farmers in the southern zones, including Andhra Pradesh, Karnataka and Telengana, uprooting their cotton plants following moisture deficiency which has left no scope for third or fourth pickings, CAI said in a release here.

Earlier, in the December estimate, CAI had projected 335 lakh bales.

The CAI has reduced the crop estimates for Telangana by 2.50 lakh bales to 45 lakh bales, Andhra Pradesh by 50,000 bales to 16 lakh bales and Karnataka by 2 lakh bales to 15 lakh bales.

The total cotton supply for October 2018 to January 2019 is projected at 198.80 lakh bales, which consists of the arrival of 170.32 lakh bales, imports of 5.48 lakh bales up to January 31, 2019 and the opening stock at the beginning of the season (estimated at 23 lakh bales).

Further, the CAI has estimated cotton



consumption during October 2018 to January 2019 at 105.34 lakh bales while the export shipment of cotton up to January 31, 2019 has been estimated at 24 lakh bales.

Stock at the end of January is estimated at 69.46 lakh bales, including 39 lakh bales with textile mills and the remaining 30.46 lakh bales with Cotton Corporation of India (CCI) and others (MNCs, traders, ginners among others).

The total cotton supply till end of the cotton season, up to September 30, 2019 has been estimated at 380 lakh bales, which consists of the opening stock of 23 lakh bales at the beginning of the season, cotton crop for the season at 330 lakh bales and imports estimated at 27 lakh bales. Imports are estimated to be higher by 12 lakh bales.

The CAI has estimated domestic consumption of 316 lakh bales, which is lower by 4 lakh bales compared to the consumption figure estimated during the last month, while the exports estimated for the season 2018-19 is at 50 lakh bales, lower by 19 lakh bales compared to the export of 69 lakh bales estimated during the last year.

The carry-over stock at the end of the 2018-19 season is estimated at 14 lakh bales.

# Inter-state trading via eNAM in eight states so far: Agriculture secretary

PRESS TRUST OF INDIA New Delhi, February 7

EIGHT STATES, INCLUDING Uttar Pradesh are offering inter-state trading via 21 electronic national agricultural market (eNAM) so far in the country, agriculture secretary Sanjay Agarwal said on Thursday.

Under eNAM, launched in 2016, agritrading was initially allowed within a mandi and later inter-mandi trade within a state was permitted. So far, 10 states are offering inter-mandi trade within their states. Now, inter-state trading via eNAM mandis has started.

"Inter-state trade of agricultural produce in wholesale mandis through eNAM platform is gathering pace," Agarwal said in a statement.

As many as 136 transactions have taken place so far via inter-state eNAM trading. Over 14 commodities like vegetables, pulses, cereals, oilseeds, spices, among others, have been traded in a short span of time, he said.

"Volume of inter-state trade is also picking up as farmers and traders are gaining confidence in the system," Agarwal



Agarwal said the latest transaction took place at Madhya Pradesh's Mandsaur e-NAM mandi, which sold coriander to the Ramganj mandi of Rajasthan.

Similarly, inter-state transaction took place at Maharashtra's Akola e-NAM mandi, which sold green gram to the Nokha mandi of Rajasthan.

"So far, 21 e-NAM mandis of eight states namely Uttar Pradesh, Uttarakhand, Andhra Pradesh, Telangana, Rajasthan Gujarat, Maharashtra and Madhya Pradesh have joined hands to start interstate trade on e-NAM," Agarwal said.

Apart from Uttarakhand and Uttar Pradesh, inter-state trade also happened between Andhra Pradesh and Telangana, Rajasthan and Gujarat, Maharashtra and Rajasthan, Madhya Pradesh and Rajasthan.

Rajasthan is the first to start inter-state trade with more than one state, establishing trade links with Gujarat, Maharashtra and Madhya Pradesh through e-NAM.

# Chalet Hotels ends 3% higher in debut trade

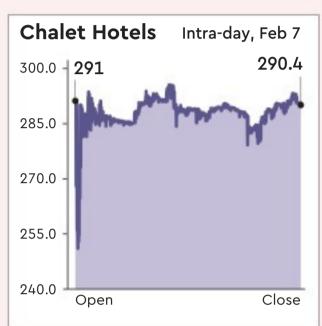
**FE BUREAU** Mumbai, February 7

THE STOCK OF Chalet Hotels, which owns, develops and manages high-end hotels in key metro cities in the country, ended with more than 3% gains in debut

trade on Thursday. The stock made its debut at ₹294 on the National Stock Exchange, 5% above its issue price of ₹280. It finally ended the session at ₹291.95 after hitting an intra-day

high of ₹300 and an intra-day low of ₹250. On BSE, the company's stock settled at ₹290.40, up 3.71% from its issue price.

The initial public offering (IPO) of Chalet Hotels received 1.57 times subscription on the final day (January 31) of the share sale. Of the 4.13 crore shares offered, investors bid for around 6.48 crore



shares. Qualified Institutional Buyers (QIBs) bid the most with the category seeing 4.65 times subscription. Of the 1.17

crore shares on offer, QIBs bid for 5.45 crore shares. High net worth individuals (HNIs) bid for 97.80 lakh shares of the 88.84 lakh shares on offer to them, and retail investors bid for 5.24 lakh shares of the 2.07 crore shares reserved for them After listing, the company market capitalisation touched ₹5,986.70 crore.

On January 28, Chalet Hotels allotted ₹492 crore to 27 anchor investors. SBI Small Cap Fund, Fidelity Funds, HDFC Standard Life Insurance company, DB International, HDFC Small Cap and Tokio Marine Life Insurance Singapore were some of the anchorinvestors.The ₹1,641-crore IPO was managed by JM Financial, Axis Capital and Morgan Stanley India. Chalet Hotels has a brand partnership with Marriott with 90% of total hotel rooms managed by Marriott, and the rest self-managed by Chalet.

# Rupee gains 11 paise to 71.45 against USD after RBI rate cut

\$/₹

PRESS TRUST OF INDIA Mumbai, February 7

**THE RUPEE ON** Thursday appreciated by 11 paise to close at 71.45 against the US dollar after the Reserve Bank of India cut the repo rate and changed its policy stance to 'neutral'.

Forex traders said the domestic currency gained strength after the Reserve Bank of India Thursday cut benchmark lending rate by 0.25 percentage point to 6.25%. Moreover, easing crude prices and fresh foreign fund inflows also propped up the local unit.

This is the third consecutive session of appreciation for the rupee, during which it has gained 35 paise.

"Rupee appreciated after RBI's rate cut decision," said V K Sharma, head of PCG & Capital Markets Strategy, HDFC Securities. He further said that the rupee and 10-year gilt prices gained on Thursday after the Reserve Bank of India cut the repo rate and changed its policy stance to 'neutral' from 'calibrated tightening'.

The RBI also announced removal of a restriction on foreign portfolio investor from having an exposure of more than 20 % of its corporate bond portfolio to a single corporate.

At the Interbank Foreign Exchange, the rupee opened on a weak note at 71.73 a dollar. The local unit moved in a

(inverted scale) 71.2 71.3 71.4 71.5 71.6 71.8 Close

Intra-day, Feb 7, 2019

range of 71.76 to 71.30 during the session before finally ending at 71.45, a gain of 11 paise over its last close.

On Wednesday, the rupee had settled 1 paise higher at 71.56 against the US dollar. Rushabh Maru, research analyst, Anand Rathi Shares, and stock brokers, however, noted that the appreciation in the rupee is a temporary phenomenon. Globally crude oil prices are rising

gradually and is a matter of concern for the markets. Besides, trade tension and geopolitical matters also remain cause of worry.

"Hence we expect the rupee to trade in 71-72 range in the near term with the currency continuing it's depreciation bias," he said.

# Oil slips as investors weigh up supply factors

**OIL FELL ON** Thursday after data showing a rise in US inventories weighed on sentiment already rattled by the global economy, though prices were buoyed by the prospect that supply could fall short of global demand. Brent crude oil futures were last down

50 cents, or 0.8, at \$62.19 a barrel by 1310 GMT. US crude futures were down 75 cents, or 1.39%, at \$53.26. "WTI and Brent crude oil both remain

rangebound following a failed attempt to move higher," said Ole Hansen, head of commodity strategy at Saxo Bank. "Supply fundamentals have increas-

ingly been turning supportive in recent weeks, but against this the market still worries about the yet-to-be-realised — if at all — impact on demand from weaker macroeconomic fundamentals." Though the United States published

robust jobs data last week, global markets remain nervous after China reported the lowest annual economic growth in nearly 30 years in January. That focuses yet more attention on the

outcome of US-China talks to end a trade spat between the world's top two economies.

— REUTERS

# ANALYST CORNER

GRINDWELL NORTON'S (GWN) Q3

# 'Hold' on Grindwell Norton with revised TP of ₹500

**EDELWEISS** 

FY19 revenue grew 8% y-o-y (5% below estimate) led by moderating growth in abrasives to 5% y-o-y (11% in H1FY19; CUMI's 11% in Q3FY19). However, ceramics & plastics (CP) segment sustained momentum at 24% y-o-y. Due to pricing pressure, Ebitda margin dipped 140bps y-o-y, leading to flat Ebitda growth (10% below estimate). With higher exposure to auto segment, we believe the current slowdown in auto primary market will impact GWN's earnings. Hence, we revise down FY19/FY20E EPS 3%/6%. Consequently, we revise down multiple to 27x from 30x, at a threeyears' average and estimate FY19-21E PAT CAGR of 18%. Hence, we downgrade to hold with revised TP of ₹500 (27x as we roll over to Q1FY21E; ₹567 earlier).

Abrasives' growth was moderate at 5% y-o-y despite a weak base (up 2% y-o-y). Further, with higher exposure to auto (our estimate ~30%), we believe the current slowdown in auto primary market will impact GWN's earnings. Growth in the segment is driven by volumes as pricing is under pressure despite rising input cost. As per competition, price hikes are expected subsequently. Consequently, Ebit margin dipped 160bps y-o-y, leading to 6% Ebit

decline. For 9mFY19, revenue grew 9% y-o-y and Ebit was up 13% with

margin expanding 48bps. The segment continued to grow strongly at 24% y-o-y following similar growth in Q2FY19. Ebit margin dipped slightly 50bps y-o-y to 14.5% leading to Ebit growth of 20%. Management expects performance plastics (PP) within CP (30% of segment sales) to post 20% CAGR over the next five years led by automobile, life science and other sectors. Further, PP is a strong focus area for the parent as well. Pent up demand in the industrial segment and new application launches across sectors are growth catalysts. However, in light of the slowdown in auto, we revise down FY19/FY20E EPS 3%/6%, leading to 18% PAT CAGR over FY19-21. Grindwell Norton (part of the Saint-Gobain Group) was established in 1967 as a technical collaboration between Grindwell and Norton Company, USA. The company manufactures wide range of abrasives (bonded, coated and super abrasives) and ceramics (silicon carbide grain and refractories). It has seven manufacturing facilities with six located in India and one in Bhutan. GNW manufactures abrasives bonded (including thin wheels), coated (including nonwoven), super abrasives — and ceramics meeting predominantly industrial requirements, which includes Silicon

# LONG, STRANGE TRIP

# How US ethanol reaches China tariff-free

**A ANANTHALAKSHMI** 

**CHRIS PRENTICE &** 

New York/Kuala Lumpur, February 7

**INJUNE, THE** High Seas tanker ship loaded up on ethanol in Texas and set off for Asia. Two months later — after a circuitous

journey that included a ship-to-ship transfer and a stop in Malaysia — its cargo arrived in China, according to shipping data analyzed by *Reuters* and interviews with Malaysian and Chinese port officials.

At the time, the roundabout route puzzled global ethanol traders and ship brokers, who called it a convoluted and costly way to get US fuel to China. But the journey reflects a broader shift in global ethanol flows since US President Donald Trump ignited a trade war with China last spring.

Although China slapped retaliatory tariffs up to 70% on US ethanol shipments, the fuel can still legally enter China tariff-free if it arrives blended with at least 40% Asian-produced fuel, according to trade rules established between China and the Association of Southeast Asian Nations (Asean), the regional economic and political body.

In a striking example of how global commodity markets respond to government policies blocking free trade, some 88,000 tonne of US ethanol landed on Malaysian shores through November of last year — all since June, shortly after



China hiked its tax on US shipments. The surge follows years of negligible imports of US ethanol to Malaysia.

In turn, Malaysia has exported 69,000 tonne of ethanol to China, the first time the nation has been an exporter of the fuel in at least three years, according to Chinese

import data. Blending US and Asian ethanol for the Chinese market undermines the intent of Beijing's tariffs and helps struggling American ethanol producers by keeping a path open to a major export market that would otherwise be closed.

"Global commodity markets are incredibly creative in finding ways to ensure willing sellers are able to meet the demands of willing buyers," Geoff Cooper,

head of the Renewable Fuels Association, said in a statement to *Reuters*. The group represents US ethanol producers. In at least two cases examined by

*Reuters*, including that of the High Seas, blending of US ethanol cargoes with other products appeared to have occurred in Malaysia before the cargoes were shipped on to China, according to a Reuters analysis of shipping records and interviews with port officials. Chinese merchants including the

state-backed oil company Unipec notified Chinese authorities about the unusual activity last summer — which represented competition they had not anticipated under the tariff scheme, according to two **— REUTERS** industry sources.

# Maintain 'buy' on Apollo Tyres with revised TP of ₹279

**ANANDRATHI** 

CONTINUING GROWTH PROSPECTS in its India and Europe business, coupled with benign raw-material costs are favourable for Apollo Tyres. Its greenfield capacity in Andhra would enable PCR market-share gains. Growth prospects for the next two years continue to be healthy in TBRs and PCRs. With the full capacity of 12,000 tyres a day in TBR and incremental capacity of 3,000 PCRs a day available in FY20, we expect TBRs and PCRs to grow at 13% and 11% respectively. PCR growth is expected to be driven by higher replacement growth and expect the company to be the leader in the replacement market.

The new plant in Andhra for TBRs at 3,000 tyres a day and PCRs at 16,000 tyres a day is expected to commence production from Q4 FY20 and scale up in FY21. As the first phase of 3,000 TBR per day would take at least 12 months to ramp-up, we do not foresee impact of

capacity utilisation, in the event of OEM slowdown in FY21, as we believe that this new capacity can easily get absorbed in the replacement market. The Hungary plant is expected to be ramped up to 12,000 tyres a day by end-FY20 (currently 7,000 tyres) and would be the catalyst for volume growth in FY19 and FY20. We expect an 8% EBIT margin in FY19 (2.2% in Q1 FY19). From Q4 FY19, the raw material

Carbide, high performance

refractories and performance

consumed is expected to be at a lower price; thus, margins would expand sequentially in Q4 FY19 and Q1 FY20. Accordingly, we expect the margin to expand to 12% in FY20 and be stable in FY21. We maintain our buy rating, at a price of

₹279 (13x FY21e EPS), earlier ₹299. Risks: 1) Lowering of price in the event of stable RM and lower volume growth relatively; 2) Higher RM costs. We expect revenue to clock an 11% CAGR over FY19-21 and expect earnings to grow at 13% CAGR for FY19-21E ₹12.3bn in earnings, leading to an EPS of ₹21.5.

### NUMEROLOGY

Most searched smartphone features in 2018

- RAM Size: **21.8%** ■ Display attributes: 18.7%
- Battery capability: 18.2%
- 91mobiles' Smartphone Research Behaviour

■ INTERVIEW: ASHISH GOEL, Founder and CEO, Urban Ladder

# 'Our offline stores act as conversion channels'

Although the share of the organised furniture retail market is small, Ashish Goel of Urban Ladder is hopeful that the company's offline presence and the entry of furniture giant IKEA will give a fillip to the industry in times to come. He talks to Sonam Saini about growth plans, offline expansion and competition. Edited excerpts:

How big is the furniture and home decor market in India? What is the share of organised furniture retail, both offline and online?

In 2018-19, the industry was approximately worth \$26-28 billion. As the per capita GDP keeps going up, in the next decade, we would expect the category itself to grow by about 4-5% more than the GDP growth — say 10-12% overall growth. The core middle of the market is where most organised players are operating. My estimate is that the organised market is 10-12% of the overall furniture market. The share of furniture in e-commerce is still very low. Urban Ladder's share in the overall furniture market would be 0.5%; our goal is to reach 15%.

Urban Ladder reported a healthy increase in revenue in FY 17-18. What triggered this growth?

Two things: while we are continuously dri-quite amazing. Every year, we have been ing towards profitability. In the next occupation we are in.

TAKE 5

POOJA JAUHARI, CEO, THE GLITCH



1 On my bookshelf Currently, I am reading *Tribe of Mentors* by Timothy Ferriss

2 My inspiration is Michelle Obama. For holding an equal and immensely strong position beside the most powerful and influential man in the world

3 If not in this profession, I would have been...

Either a fashion designer or a dog walker

4 A famous quote I swear by 'Every opportunity is an opportunity to make an impression, so make it count'

5 Indulgence is... Sindhi curry and fried papad, with aloo tuk

- As told to Sapna Nair

# Around the



# **Super Bowl content** scores a goal online

ONLINE VIEWING OF related Super Bowl advertising content and commercials soared to reach a five-year high — mostly from unpaid earned media exposure just five days before the big Super Bowl game. Approximately 36 brands released 108 pieces of Super Bowl ad creatives that garnered 110 million online views, according to iSpot.tv.

### Amazon's ad business picks up

AMAZON'S AD BUSINESS is gaining momentum after the company reported 'other' revenues of \$3.4 billion, predominantly from advertising, during Q4 2018. This is an impressive figure with the revenue surging 97% from the \$1.7 billion generated in Q4 2017.

ving growth in the business, we are also pushing for a healthier bottom line and cash flow situation.

PHOTO: MEGHANA SASTRY recording 50% growth. Along with that, losses have come down by 40-50% yearon-year. This year, our losses are approxi-The last 24 months have actually been mately 50% lesser than last year and drift-

quarter, we are expecting low single-digit EBITDA loss, which is a good position to be in, and sets the stage for the next financial year to be profitable for us. The one thing that definitely drove our growth is our offline retail expansion.

How much do your offline stores contribute to overall sales? Any further expansion plans?

Approximately 25% of our business comes from offline stores now. The response has been great. We have tried to build a lot of science and algorithms at the back-end that helps us determine exactly what kind of products to keep in stores. Primarily, we see a store as a conversion channel.

This year, we are planning to open stores in 12 cities including Mumbai, Pune, Kolkata, Chennai and Hyderabad. We are present in more than 40 cities in the country. The larger cities form the bulk of the business, though we deliver to smaller cities as well.

Are furniture rental start-ups like RentoMojo and Furlenco, that target the millennials, impacting your business? There is space for different kinds of solutions for different kinds of customer segments. Everybody is working towards organising the market. The primary consumer for RentoMojo or Furlenco is a starter household. The hassle of purchase is not worth it and instead renting is preferred. Rental is a very different business, and maybe a good one, but it's not an How has IKEA's entry into India affected the industry?

IKEA is an iconic company which has done things the right way and we respect that. In the first quarter after it launched, our business in Hyderabad continued to do well. Of course, there will be some impact when such a large player enters the market. But IKEA's entry will make the market more organised over time. Typically, what we have seen in most markets is that the organised players have benefitted from IKEA's entry.

Is it still difficult to get consumers to buy furniture online?

> It's an evolving journey. Most of what we have achieved is by being an online player; that is a sign that migration is happening. The reason we opened (offline) stores is is to lower the barrier and help people get closer to the brand. Changing consumer behaviour is the most important tough as well as exciting

— journey of building a business.

IKEA's entry will make the

market more organised

over time. Typically, what

we have seen in most

markets is that the

organised players have

benefitted from

**IKEA's entry** 

What's new in FY20 for Urban Ladder? Great brands are built by doing boring stuff repeatedly for many, many years, because people remember the repetitive stuff. Our thought process for the brand is to stay consistent in what we do. Often, brand building is confused with flashiness which, in reality, is barely 0.1% the tip of the iceberg. The real depth of brand building is in the hard-knuckled, day-to-day consistency. This year, we are expecting 40-45% growth.

suitable idea. You could put money into the

medium-term fund, where you can expect

These goals are yet to be realised and

are way away in the future, but you need to

start investing for them early on. This is

because they require a huge corpus of

money to be fulfilled. Begin investing in

Index Funds, which replicate the market

performance as reflected on major indices

like Nifty(NSE) or Sensex(BSE). They are

safe bets with guaranteed returns. Directly

invest in an equity-based mutual fund, for

they are known to generate an annual

one's requirements, college fees, etc., you

can opt for hybrid funds. Systematic

Investment Plan (SIP) route is the most

goals, we also dream of their happy mar-

riages and families. And for the dads who wish to make the day special for their

daughters, you can start small today with

Sukanya Samriddhi Yojana (SSY). It comes

with a maximum tax benefit of ₹1.5 lakh

under Section 80C of I-T Act. Further, the

interest accrued and maturity amount is

till the completion of 15 years from the

date of opening of the account. Between

the 15th year and 21st year, you don't need

to make any deposits. However, you will be earning interest on the earlier deposits

the US and China, and can result in equity

markets turning supportive of a rate hike.

This removal of lingering trade uncer-

tainty and further tightening could result

in some pull back in gold prices. As the Fed

continues to tighten in 2019, there is a risk

that this could be much more than the

economy can handle as the underlying

cyclical recovery is largely fueled by stimu-

lus, tax cuts and cheap liquidity. The

inverted yield curve will potentially put

further brakes on economic expansion and

undermine confidence and investments.

tral banks tried to remove some liquidity

from the market after a decade of stimu-

lus. Central banks have tried to get out of this low-interest-rate trap but they aren't

able to. The market is addicted to cheap liq-

uidity and this isn't going to change any-

time soon. The world continues to remain

in state of great disequilibrium, both with

respect to the global economy and geopol-

itics as well. Given the macroeconomic pic-

ture, gold will be a useful portfolio diversi-

fication tool and thereby help you to

reduce overall portfolio risk.

The year 2018 was the first time cen-

Apart from educational and career

Again, depending upon your young

return of 13-15% per annum.

preferred option for the same.

Long-term goals (10 years-plus)

8.5% to 9% returns annually.

BLOGGER'S PARK

# Under the influence

The huge denominator in influencer marketing in India is too good to be true



THE SHIFT IN how brands reached out to us - from TV and other traditional media to the digital age of advertising on the web, social and mobile — has been massive. In India alone, digital advertising in 2018 was at ₹9,752 crore, and will climb to ₹21,000 crore approximately by 2021. As more and more data and avenues become available, brands are expected to start optimising the medium with more innovative approaches to serve specific purposes.

Influencer marketing is one of the hottest trends of these times. Marketers have realised the power of influential voices reaching diverse audiences at a fraction of the cost of traditional advertising. Whether it's a comedian with a smartphone or an athlete with a pair of headphones — brands now have a voice to reach their intended audience.

But as the scope of influencer marketing increases, so do the challenges. One of the biggest challenges is of 'fake followers'among influencers. It is believed that upto 40% of Indian Instagrammers use third-party apps to increase their follower count. Bot factories and click farms have allowed just about anyone to accrue large follower counts almost overnight, and then cash in on it by posing as influencers. Where some of the good influencers in Europe and Britain have not more than one lakh followers, in India the same league of influencers possesses five lakh followers. Today, you can get 10,000 followers on Instagram for ₹2,500!

The second biggest concern is credibility. Today, consumers recognise when influencers are benefitting from promoting a product. The cost of hiring these influencers seems to be a fraction to us as compared to that of hiring celebrities (influencers of traditional advertising), but due to non-exclusive rights, these social micro influencers are making as high as ₹17-18 lakh per month, even though a single deal could be for as low as ₹75,000. During Diwali, one of the influencers with 5.5 lakh Instagram followers posted 23 pieces of branded content from different brands. Their reasoning was simple: 'brands are ready to pay, and it does not matter to us'.

A lot of marketers select influencers



on the basis of their follower base and have forgotten that reach and engage ment of a post are the right metrics to do so. They think of influencer marketing as a campaign extension rather than a yearlong strategy. Moreover, brands are not gaining anything out of them specifically — even with a follower base of 5.5 lakh, the post reach is only around

70,000 and the engagement rate is

merely 0.2-0.3%.

Brands need to take responsibility for creating content with influencers that is original and relevant to their audiences. Building trust amongst consumers by investing in long-term relationships with a handful of carefully selected influencers goes a long way in weaving meaningful stories around your brand But the success of those stories depends on the right measurement.

A marketer must keep three things in mind: look at the organic reach of the post and engagement rate of the selected influencer; engage with the influencer on long-term content creation exclusively to drive more credibility; and create a payment model that is based on the return to the brand which can be done in three ways — a fixed amount, cost per visit and then, cost per transaction derived from the sales. The last two payments could be over and above the fixed deal to make influencers more comfortable charting this out.

The author is COO, Grapes Digital

The writer is senior fund manager, Alternative Investments,

# Personal Finance

# FINANCIAL PLANNING

# How to design an investment blueprint for your child's future

Break up the goals into short, medium and longterm, and make your investment accordingly

**DHANANJAY SINGH** 

AS PARENTS, YOU always strive to provide the best to your kids. But some expenses in life demand much more than that. The first step in planning your finances is to prioritise and know where you stand currently, in terms of finances. As an earning member, you know you are accustomed to a certain standard of living. The onus of working out the numbers to make space for your daughter's dream is on you. You can increase the investible surplus in two ways: either increase your income, or reduce your existing expenses.

If your daughter wants to become a cricketer, she should have the resources to excel. But for that, you will need to put her through the best college or school, with the best academy, to give her the required launching pad. She would also need a cricketing gear, to begin with, won't she?

Short-term goals (1-5 years)

Annual fees for her training, cost of



ILLUSTRATION: SHYAM KUMAR PRASAD

cricket gear, etc., are short-term goals, ones that occur every year on a regular basis. For such expenses, short-term funds like liquid funds and short-term debt funds are ideal. Such funds will allow you to save for recurring expenses while allowing you to earn additional returns as well. Returns

earned on such funds are generally high. These funds have high liquidity, i.e., they can easily be converted to money and provide fair returns. They usually yield 7-7.5%, which is better than most traditional financial instruments. And additionally, come with the benefit of being tax-free! You can choose to opt for these in order to manage your short term goals.

These are trips, excursions, training camps, etc. For your daughter to achieve herlong-term goals, it is important to have sound financial backing. These are also the times when you need to accelerate the process of creating the corpus. Investing in any medium-term equity fund or Equity Linked Savings Scheme Funds (ELSS) is a

exempt from tax. For SSY, the age of your girl child should not be over 10 years. The minimum annual investment is ₹250. You are required to make deposits every year

Mid-term goals (5-10 years)

made at a rate of 8.1% per annum.

Source: Tax Guru

# Gold can help you to reduce overall portfolio risk some type of agreement on trade between

The world continues to remain in a state of great disequilibrium, both with respect to the global economy and geopolitics

# GOLD OUTLOOK

**CHIRAG MEHTA** 

**KEEPING UP WITH** seasonal trends, this January too was positive for gold. It's usually the physical buying from China and India that drives gold prices. However, this time it was the investment demand that took the lead. Slowdown in global growth, volatility in equity markets, dovish central banks and geopolitical worries have led to increased uncertainty; thereby driving investors to look for diversification that really works.

The Fed pivoting away from its bias toward tighter policy is a complete U-turn from their robust economy rhetoric in October and has really been the trigger for gold to move higher. Gold prices closed the month at \$1321.21 per troy Oz, up by 3.21% this year and set for a fourth straight monthly gain, while the dollar is down for a third month.

Dollar weakness

Recent dollar weakness is a reflection of a shift in market sentiment based upon the Federal Reserve altering to a much more dovish tone over the last month. Market participants believe that the Fed will be much less aggressive in terms of the number of rate hikes initiated this year. Also, there has been talk for the first time about addressing their massive balance sheet liquidation which has been on autopilot since the Federal Reserve shifted their monetary policy to favour normalisation. The lingering US China trade war and the government shutdown were other factors that kept the dollar under check. World leaders at Davos, the IMF and central bank chiefs across the globe are all of a sudden echoing slower growth.

Rate hike by Fed

The Fed raised rates four times in 2018 and is now holding the benchmark interest rate in a range of 2.25 to 2.5%. It was obvious that at some point Powell would have to flinch given some evidence of slowdown as tighter policy starts impacting the economy. In this current rate hiking cycle, the Fed has raised rates nine times but also has already sold off about a half trillion dollars from its balance sheet.

A reduction of this size in the balance sheet, which is a huge liquidity squeeze from the financial system, is something never before done or even attempted. Add to this the fact that total non-financial debt in the US has surged from \$33.3T (231% of GDP) at the start of the Great Recession in December of 2007, to \$51.3T is creating a huge interest burden in a rising interest rate environment.

There's increased optimism about



Quantum Mutual Fund

# A much-needed code

The biggest beneficiary of the self-regulatory code of conduct for online curated content companies will be the user



ecently, most large and popular online curated content (OCC) companies have agreed to a self-regulatory code of conduct. The code aims to; empower consumers to make informed choices on age-appropriate content; safeguard creative freedom of content creators and artists; provide a mechanism for complaints redressal in relation to content made available by respective

The signatories to this code pledge

to prohibit:

Content which deliberately and maliciously disrespects the national emblem or national flag;

■ Content which represents a child engaged in real or simulated sexual activities or any representation of the sexual parts of a child for primarily sex-

■ Content which deliberately and maliciously intends to outrage religious sentiments of any class, section or community;

■ Content which deliberately and mali-

ciously promotes or encourages terrorism and other forms of violence against the State (of India) or its institutions; and ■ Content that has been banned for exhibition or distribution by online

video service under applicable laws

or by any court with competent

iurisdiction. In my opinion the restricted contents are just a reiteration of various limitations that the Information Technology Act, 2000, Indian Penal Code, 1860, Emblems and Names

(Prevention of Improper Use) Act, 1950, Indecent Representation of Women (Prohibition) Act, 1986, Scheduled Castes and Scheduled Tribes (Prevention of Atrocities) Act, 1989, Protection of Children from Sexual Offences Act, 2012, Copyright Act, 1957, put on free speech and expression and do not in any way exceed them. To that extent, the selfregulation code as adopted by OCCs is not self-censorship as has been

claimed by some groups. The concept of self-regulation or code of conduct is not new to the world of media and advertising. The Press Council of India (PCI), for instance, under The Press Council Act of 1978, set up a code of conduct for newspapers, news agencies and journalists to meet its overall objective of preserving the freedom of the press. As a quasi-judicial body, PCI has the same powers throughout India as are vested in a civil court while trying a suit to enforce the code.

Broadcasting Indian

Foundation set up the Broadcasting Content Complaints Council in 2011, which adopted with suitable modifications the Ministry of Information & Broadcasting's Self-Regulation Guidelines for Broadcasting Sector (Draft 2008).

centralised Consumer Council Complaints under Advertising Standards Council of India (ASCI) enforces the Code for Self-Regulation and investigates all complaints. In 2017, the Supreme Court of India affirmed and recognised the self-regulatory mechanism of ASCI.

These bodies and the codes have evolved in different ways, depending on the context in which these industries operate. However, they have one crucial advantage over hard coded laws - they can evolve and change with times. Such flexibility and openness is necessary, especially for mass media "regulations" since sentiments and notions of morality change every five years in a fast-paced society such as India.

Like many other self-regulatory codes, the present one too has its genesis in avoiding hide-bound inflexible government regulations that cannot be changed with the changing times. It also builds consumer confidence. OCC players are not broadcasters

since they rely on "pull" to attract customers and are not governed by the broadcast laws. It is, therefore, a positive step since it reassures customers that these services do not operate in a lawless environment but abide by some guidelines. Finally, it is also assuring to the courts who are often asked to deal with public interest litigation against many of these companies on specious grounds such as a destruction of morale of the youth of the country.

The biggest beneficiary of the code is going to be the public who will find a recourse to answer queries on the nature of content and do not have to run to LEAs or the courts to write to the PMO to have their grievances redressed.

While the OCC service providers with innovative and creative content are testing the norms of the society, as responsible businesses they are aware that content creativity and innovation needs to be guided by a loosely defined code. It is for this reason that the code has been widely accepted by large and small as well as Indian and multinational companies. We are hopeful that many more companies will embrace the code soon.

The author is president, Internet and Mobile Association of India. Views are personal



Hail Gadkari

**CHINESE WHISPERS** 

**Union Minister** for Road Transport. Highways and **Shipping Nitin** Gadkari (pictured) was the flavour of the day in New Delhi

on Thursday. In the Lok Sabha, it was the day for members to ask questions on Gadkari's ministry. Nearly every member, including those of his own party, the Bharatiya Janata Party (BJP); the ally Shiv Sena; and Opposition party members praised Gadkari for listening to their demands, and taking action on them, "I must say here that all MPs. cutting across political affiliations, have been appreciating me for the work being done by my ministry in their respective constituencies," said Gadkari, with a big smile. Madhya Pradesh BJP MP Ganesh Singh stood up and told Speaker Sumitra Mahajan that the House should appreciate the "wonderful" work being carried out by the minister. At this, UPA Chairperson Sonia Gandhi smiled and started thumping the desk as a sign of appreciation, which made other Congress members laud the minister. Later in the day, Apna Dal Member Kunwar Harivansh Singh said Gadkari had done such tremendous work that he was now called "Roadkari".

Congress President Rahul Gandhi met Jharkhand Mukti Morcha (JMM) leader and former Jharkhand chief minister Hemant Soren. Party sources said the Congress had sealed its alliance with the JMM in the state, and other regional parties. The parties, however, are yet to announce the number of seats each would contest among the 14 Lok Sabha seats in Jharkhand. Sources said the Congress could contest seven seats, while the JMM might contest four, Jharkhand Vikas Morcha two and Rashtriya Janata Dal one seat. The JMM had refused to support the Congress in a recent Assembly by-poll held in that state, and it was former Union minister RPN Singh, in charge of Congress affairs for the state, who worked to convince Soren to agree to the formula to make the alliance work, and ensure other allies also kept faith. In 2014, the BJP had won 12 of the 14 seats in the state.

### **Fund collection**

The Madhya Pradesh unit of the Bharatiya Janta Party (BJP) has run out of luck, especially after losing the Assembly elections last year. Sources say the unit is facing a severe shortage of funds and hence has been forced to stop the publication of its mouthpiece Charaiveti since January. To arrange for some funds, the party has decided to issue coupons of ₹1,000, 2,000, 5,000 and 10,000. This fund will be called Aajivan Sahyoa Nidhi (lifetime contribution fund). The campaign to arrange for this fund will run from February 11 to 28 and is expected to generate approximately ₹14 crore.

# New RBI governor a cheer leader for growth

Das is distinctly dovish as RBI's inflation projection is benign and he wants to seize the opportunity to support growth. And, this may not be the last rate cut



BANKER'S TRUST

TAMAL BANDYOPADHYAY

lmost every analyst was expecting a change in the Reserve Bank of India's (RBI) monetary policy stance from "calibrating tightening" to "neutral", and all six members of the central bank's Monetary Policy Committee (MPC), in its last meeting of the financial year on Thursday, obliged them.

As a bonus, the MPC also cut the policy rate by a quarter percentage point to 6.25 per cent — the first such cut since August 2017.

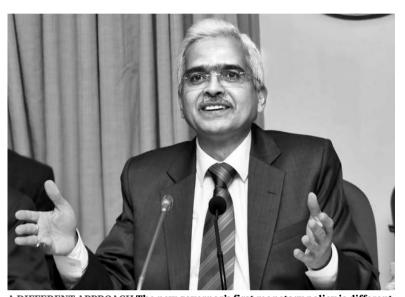
The reading of the current macroeconomic trends by the new RBI Governor Shaktikanta Das clearly suggests there could be at least one more rate cut, bringing the repo rate or the rate at which commercial banks borrow money from the central bank, to 6 per cent. And, that can happen as

After the RBI's policy announcement, the bond market staged a muted rally but the curve in the one-year overnight indexed swap, a derivative gauge where investors exchange fixed rates for floating payments, started indicating another rate cut. So, a new cycle has begun even though it could turn out to be a shallow rate cut cycle.

The retail inflation projection has been revised downwards to 2.8 per cent in the March quarter of the current year -3.2-3.4 per cent in the first half of fiscal year 2020 and 3.9 per cent in the third quarter of 2020 with risks broadly balanced. The downward revision takes into account the continuing deflation in food items, larger than anticipated moderation in fuel prices and an assumption of normal monsoon

Since, it is all the way below 4 per cent, which MPC has been trying to achieve on a durable basis (with a plus/minus 2 per cent band), the focus has shifted to growth. Das is distinctly dovish as RBI's inflation projection is benign and he wants to seize the opportunity to support growth. Hence the rate cut — and

this may not be the last one. At the post-policy interaction with the media in December, former RBI governor Urjit Patel had said that if the unside risks to inflation would



A DIFFERENT APPROACH The new governor's first monetary policy is different from his predecessors. In his scheme of things, the monetary policy does not necessarily need to be tight when fiscal policy is rather loose

not materialise, there could be a possibility of space opening up for appropriate RBI action. Das has seen this "opened up" and the MPC acted on it. "..the path of inflation has moved downwards significantly, and over the period of next one year, headline inflation is expected to remain contained below or at the target of 4 per cent. This has opened up space for policy action..".

In that sense, there is no surprise but most analysts (including this commentator) expected that sticky core inflation, a strong dollar and extreme volatility in the oil price would influence the MPC to be cautious. Besides, the fiscal slippage and a semi-inflationary interim Budget

would queer the pitch. The MPC admits that the Budget proposals might boost aggregate demand by raising disposable incomes but does not see any imminent risk to the inflation outlook.

Das feels "the favourable macroeconomic configuration that is evolving" underscores the need to act now "when it is most opportune". "..it is vital to act decisively and in a timely manner to address the objective of growth once the objective of price stability as defined in the (RBI) Act is achieved," he said, adding, "the decisions of the MPC will be datadriven and in consonance with the primary objective of monetary policy to maintain price stability

keeping in mind the objective of 'The shift in stance of monetary

policy from 'calibrated tightening' to neutral' also provides flexibility and the room to address challenges to sustained growth of the Indian economy over the coming months. As long as the inflation outlook remains benign," he said. Incidentally, the RBI has revised its forecast for GDP growth in 2020 to 7.4 per cent from 7.6 per cent earlier.

While the decision to change the stance was unanimous, two MPC members voted against the rate cut –Chetan Ghate and deputy governor in charge of the monetary policy Viral Acharya. Interestingly, Michael Patra (the third RBI representative on the MPC beside Das and Acharya), a known hawk, has also voted for a rate cut. This is as much a surprise as the rate cut itself. Had Patra stuck to his known stance, there would have been a tie and Das, at his first MPC meeting, would have been required to exercise his casting vote.

The new governor's first monetary policy is different from his predecessors. He is in favour of pushing for growth and not overawed by the risks of rising inflation. He also does not seem to be overly perturbed on fiscal slippages. In his scheme of things, the monetary policy does not necessarily need to be tight when fiscal policy is rather loose. In that sense, he seems to be a cheerleader

The writer, a consulting editor of Business Standard, is an author and senior adviser to Jana Small Finance Bank.

### **INFRA DIG**

# Kalka to Shimla by road



**BIBEK DEBROY** 

n the new national highway numbering, Kalka-Shimla road is part of NH-5. "The highway connecting Firozepur, Moga, Jagraon, Ludhiana, Kharar in the State of Punjab, Chandigarh, Kalka in Haryana, Solan, Shimla, Theog, Narkanda, Rampur, Chini and proceeding to the Border between India and Tibet near Shipkila in the State of Himachal Pradesh." This is the definition of NH-5. If you have travelled to Shimla and are not attached to the tov train (and now airlines), you will have done this 90 km stretch by road. After the Anglo-Nepalese War of 1814-16 and the Sugauli Treaty, Shimla passed to the East India Company. Shimla became the summer capital in 1864 (decision was taken in 1863). Therefore, twice a year, the government machinery shuttled back and forth. between Calcutta and Shimla. The Kalka-Shimla Railway was triggered by the need to have better connectivity between Shimla and the rest of the country, via Kalka. The oldest major train that still runs in India is Kalka Mail. At one point, this had pride of place. The old numbering system of trains reflected this. Kalka Mail used to be 1 UP and 2 Down. In 1866, it started as "East Indian Railway Mail" between Calcutta and Delhi and was

then extended to Kalka in 1891. But Kalka-Shimla road predated the

summer capital decision. In 1888-89, there was a District Gazetteer for Simla (as it was then spelt). This said, "The Grand Trunk Road from Kalka to Simla is practicable for carts and traffic of every description. The gradients are easy, and the dak bungalows are completely furnished and provided with servants. The old road is practicable only for jhampans, ponies and coolies, and the road is very steep in many places. The Hindustan and Thibet road commences from Simla and extends as far as Karin Khad, six miles beyond Chini in Bashahr territory distance 166 miles altogether." To make it explicit, there was the old road and there was Grand Trunk Road. "The roads from Kalka to Simla are two in number: (1) The old road, via Kasauli and Sabathu: passable by foot passengers, horses, mules, ponies, or cattle, but not intended for wheeled conveyances... (2) The new cart road which takes a more circuitous route, via Dagslaai and Solan." The distance via (1) is given as 41 miles, that via (2) as 57 and a half miles. Along (2), "In the season of 1874, two-wheeled carriages, called tongas, similar to those in use in the Central Provinces, were started upon this line for the conveyance of passengers. By these carts the journey is performed in about eight hours." Today, on the Kalka-Shimla drive along NH-5 (aka Grant Trunk Road or new cart road), you are likely to take just over 3 hours. With the ongoing widening of the highway, it is hard to imagine tongas.

There is an interesting 1857 House of Commons document, titled, "Minutes and correspondence in reference to the project of the Hindostan and Thibet road, with reports of Major Kennedy and Lieutenant Briggs relating thereto". There were multiple reasons for building this road - possible trade ties with Tibet, strategic cum defence reasons, connectivity to hill stations. (It now seems odd that a lot of the interest in trade was because of pashmina.) A letter written to the Governor General (Dalhousie) in 1853 said, "The plan for the construction of this road was regarded by us with great interest when it first came under our notice. Not only did we warmly approve of the Governor-general's object of putting an end to the "Begaree system", by the formation of that portion of the line lying between Kalka and Simla, and look with interest to the political and commercial advantages likely to result from the opening of a line with communication with Thibet by way of Chini, but we regard as highly important the question raised by Major Kennedy, when he laid out the line, namely, the  $possibility \, of \, constructing, through \, such \,$ a region as the Himalayas, a road which, while formed on correct and scientific principles, might yet be executed at moderate cost." This quote is odd. Begar was a system

of indentured labour. Irrespective of what this quote says, in and around hill stations, the British used a fair amount of such labour, including in building initial stretches of Hindustan-Tibet road, such as the Kalka-Shimla stretch. If costs were moderate, it was also because of this. That same letter states, "By the aid of the tribute labour due by the hill chiefs, the road of 12 feet in width has cost only 1,237 rupees a mile, and the road of six feet 690 rupees." There is a book (1870) by Edward Buck, titled Simla, Past and Present. For a tunnel (on the road) construction, this mentions use of 10,000 prisoners and 8,000 "free" labourers.

The author is chairman, Economic Advisory Council to the Prime Minister. Views are personal.

### **LETTERS**

### Tough to agree

The editorial "Welfarism and bias" (February 5) says "giving tax-free status to all those with an income of up to ₹5 lakh means that even those with an income just under five times higher than the mean income will no longer need to pay income tax". Surely, this statement does not make a comparison of the likes. The mean income is per person, while the taxable income is that of an individual who could have a family, not all of whom necessarily earn an income. Take for example, a typical urban middle class family with only one spouse working, earning the threshold income of ₹5 lakh, and two children who are yet to be employed. The average income of members of this family would be ₹1.25 lakh, or just under 15 per cent higher than the per capita income of ₹1.1 lakh as mentioned in the editorial. My contention is that while one could readily agree with the overall sentiment of the editorial, the reference to "five times" sticks in the throat.

### Shreekant Sambrani Baroda Interim relief for RBI

This refers to Somesh Jha's report "RBI to conduct its first half-yearly audit" (February 6), Last year, the Reserve Bank of India (RBI) had succumbed to the Centre's pressure to pay a 'token interim dividend' of ₹10, 000 crore before the close of FY 18, overlooking **HAMBONE** the provisions of RBI Act, 1934. Section 47 of the Act says that "after making provision for bad and doubtful debts, depreciation in assets, contributions to staff and superannuation funds and for all other matters for which provision is to be made by, or under this Act, or which are usually provided for by bankers, the balance of the profits shall be paid to the central government". Earlier, respecting the statute

book, the government of India (GOI) was receiving surplus income of the RBI only after approval of the respective year's accounts by the central bank. In the fitness of things, pending amendment to the relevant section, the GOI could have resisted the temptation to register a win over the RBI, as the amount it was receiving as advance payment was not substantial in the context of the fiscal deficit.

The present move to arrive at the amount of interim dividend based on the audited accounts of the RBI for the half year ending December 31, 2018, should give the RBI some relief while making the advance payment for which there is no provision in the Act. Perhaps, the RBI or the GOI may consider regularising the position by incorporating an enabling provision in Section 47 of the RBI Act. 1934.

M G Warrier Mumbai

### Invest in our children

Our children today are burdened with heavy study material, and at the same time we thrust negative things on them, about their future, career, etc. The media, specially the social media, augments such not so positive thoughts and emotions. Our children have also become physically weak. The situation is quite alarming. Unless society at large and parents take notice, and act proactively, children may have a bleak future as far as

their physical and mental health is concerned. True, there would be a few brilliant ones who would make their impression, but others would fall apart.

Parents and guardians must take special care about their wards so that right upbringing is taught and children are encouraged to think positively and be active physically. The main focus of education has to be about inculcating good habits among children so that they can become good citizens. We must teach our children about values of life, environment, respect for other human lives and the poor, etc. Our country has to bring the best practices of education followed in Finland, Norway, Singapore and Japan. Parents are immensely dependent on schools and teachers about their children's education and thought process. The reality is that the primary training for being good humans and citizens has to be complemented by schools and at homes.

it has to invest in its children to make them great.

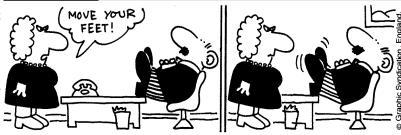
If India is to become a great nation,

A Bhuyan Nagaon

New Delhi 110 002 Fax: (011) 23720201 · E-mail: letters@bsmail.in All letters must have a postal address and telephone

Letters can be mailed, faxed or e-mailed to:

The Editor, Business Standard



# **Business Standard**

MUMBAI | FRIDAY, 8 FEBRUARY 2019

# A realignment

RBI gives primacy to growth concerns

n his maiden monetary policy review briefing, Reserve Bank of India Governor Shaktikanta Das outlined the Monetary Policy Committee's (MPC) decisions that would please almost everyone — from the average home loan borrower to the government. The MPC decided, by a majority decision of 4-2, to cut the repo rate by 25 basis points. What is equally important is that this cut was preceded by a change in the RBI's policy stance from "calibrated tightening" to "neutral". In other words, there is an opening for another rate cut by April 4, which could be crucial, given the timing of the Lok Sabha election. The significant shift in stance, as well as the cut, comes after a revision of the inflation outlook for the year ahead.

The retail inflation rate, measured by year-on-year change in the consumer price index, has declined from 3.4 per cent in October 2018 to 2.2 per cent in December, the lowest print in the last 18 months. Even the CPI inflation rate, excluding food and fuel, has decelerated to 5.6 per cent in December from 6.2 per cent in October. What's even more important is that the inflation outlook, too, has become more benign. Inflation expectations of households, measured by the December 2018 round of the RBI's survey, softened by 80 basis points for the three-month ahead horizon and by 130 basis points for the 12month ahead horizon over the last round. Similarly, producers' assessment of inflation in input prices eased in Q3 as reported by manufacturing firms polled by the RBI's industrial outlook survey. As a result, assuming a normal monsoon in 2019, retail inflation, which is the key metric that the RBI is supposed to target and maintain at 4 per cent (plus/minus 2 percentage points), is expected to range from 2.8 per cent to 3.9 per cent in the coming 12 months.

Well-contained inflation has provided the RBI the space for policy action to focus on growth concerns. The governor listed some of these concerns — for one, within India, aggregate bank credit and overall financial flows to the commercial sector are not yet broad-based. Moreover, muted global growth and trade tensions can provide headwinds. As such, even though the RBI did not change its growth outlook for the year ahead, it did underscore that the need is to strengthen private investment activity and buttress private consumption.

Along with the monetary policy review, the RBI governor also unveiled a whole host of regulatory measures aimed at broadening and deepening the financial markets. In particular, there were sops for beleaguered non-banking financial companies (NBFCs), wherein the RBI took steps to facilitate the flow of credit to them by deciding that the rated exposures of banks to all NBFCs, excluding core investment companies (CICs), would be risk-weighted in accordance with the rating agencies' prescriptions. Overall then, the latest monetary policy statement appears to signal a closer alignment between the RBI's mandate for price stability and the government's concern for higher economic growth. This is a heartening development, especially since it comes after a fairly acrimonious phase between the two institutions. The only fly in the ointment could be the possibility of fiscal slippage, but by the look of it, the RBI wants evidence of it before acting.

### Long way to go

e-NAM's success depends on APMC reforms

he government's agricultural marketing initiative to create a seamless pan-Indian electronically linked national agriculture market (e-NAM) has taken close to three years to carry out its first inter-state trade deal in agri-products. Though 585 mandis operated by Agricultural Produce Marketing Committees (APMCs) in 16 states and two Union Territories have been linked with e-NAM, its platform has been used so far only to transact business within the same mandis or, in some cases, between the mandis of the same states. This had denied the farmers the opportunity to earn a higher income by selling their produce at the best prices available anywhere in the country — the prime objective of launching the unified farm market in April 2016. The agriculture ministry, while announcing the initiation of inter-state sale between parties in Uttarakhand and Uttar Pradesh and subsequently between Telangana and Andhra Pradesh through the e-NAM portal, described it as an inflexion point in cross-country agricultural marketing. However, the optimism seems largely misplaced. A good deal of spade work and agri-marketing reforms need to be carried out by the states before farm commodities can be traded freely across the country.

The pre-requisites for the success of e-NAM were clearly spelt out in the proposal for establishing a common agricultural market for the country. Unfortunately, most of these are yet to be fulfilled by the states by suitably amending their agri-marketing laws. The foremost among these pre-conditions is a single trading licence valid throughout the country and a single-point payment of mandi charges by harmonising the marketing levies of all the states. Only a handful of states have agreed to recognise the trading licences issued by other states. In many cases, the trading licences are merely *mandi*-specific. As a result, even within the states, online inter-mandi transactions are permitted only in 10 states. Besides, most states are unwilling to alter market levies because that would entail loss of revenue. There is also no uniformity in the quality standards of farm goods in different states. Moreover, not many mandis have put in place appropriate sorting, grading and assaying (quality testing) facilities that would enable informed bidding by buyers. Nor do they have proper warehouses for the safe upkeep of the sold items.

A fundamental flaw in the conceptualisation of e-NAM is that it mandates the business to be conducted only through the APMC markets' electronic platforms. These markets are known for their inefficiencies and malpractices, which may tend to creep into e-marketing as well. Besides, the APMC *mandis* are dominated by middlemen, who are quite capable of manipulating even online trading in the absence of an effective market regulator. The APMC monopoly over the marketing of all the agricultural produce needs to end to ensure fair price discovery. Online trading through the e-NAM platform should be permitted from any public or private sector market that meets the necessary conditions. Only then can the farmers benefit from e-NAM's online trading.



# And now the inevitable pickup in investments

A7 per cent GDP growth rate may be lower than what India aspires for, but over a five-year horizon this means 40 per cent higher demand

fter a long period of weakness, investment activity in the Indian economy has been pickactivity in the intuitive contain, find the ing up. Gross Fixed Capital Formation (GFCF) as reported by the Central Statistics Office (CSO) remains the most broad-based estimate of this activity in India: The GFCF-to-GDP ratio fell steadily from 2012 to 2017 from 40 per cent to 30 per cent, but

has since risen to 32 per cent. Many expect this recovery to be shortlived, but a deep dive suggests it could sustain, and reveals some surprises. As we will see, contrary to consensus views, the slowdown in investments till 2017 was not driven by weak private sector activity, and the recent pickup has not been driven solely by acceleration in government spending.

The CSO splits GDP statistics into three parts: Private corporate, public sector and household. The first is data from the MCA21 database, and is more or less the sum-

total of half a million companies. Public sector data is the combination of state and central government budgetary expenditure as well as spending by public sector enterprises. The household sector is the 'residual', that is, whatever is left after the first two have been accounted for; it is so called because in most such informal enterprises, there is no separation between business and household accounts. Data availability for the formal economy, which is the private corporate and public sectors, is much better than for the household sector, where the CSO is forced to rely on proxies like cement consumption to track annual trends.

In 2017, 43 per cent of GFCF came from private companies, 25 per cent from the public sector, and the remaining one-third from the household sector. Interestingly, and much against popular belief,

nearly two-thirds of the incremental investment between 2012 and 2017 was contributed by private companies, and a third came from the public sector. Households did not see any growth in five years even in nominal terms, mainly due to weak housing (most of this is self-built housing in villages and small towns). Corporate capital expenditure (capex) grew at 14 per

cent a year in this period, faster than nominal GDP growth. Public sector investment growth was in line with nominal GDP growth of 11 per cent, and the pace has been maintained between 2017 and 2019, belying the view that the recent investment pickup is all due to government spending. This pace of capital investment can last: Three-fourths of public sector capex now comes from state governments and central public sector

The evidence of strength in private corporate capex in a period where corporate commentary was

overwhelmingly negative is so counter-intuitive that one needs to validate it against other data sources. We took two approaches. In the first, we aggregated capital expenditure data for companies. We could only find capex data for about 12,000 companies, adding up to nearly ₹8.1 trillion(about half the total private corporate GFCF reported in 2016). Even this data was patchy, obviating any year-on-year growth analysis. However, the sectoral mix provides insights on major sectors that drive the overall investment number: Utilities (power generation, transmission and distribution), energy (such as production, refineries, distribution through pipelines), telecommunications and metals.

In nearly all these segments, except thermal power generation and metals production, capex had not slowed, and is expected to continue. In metals and

thermal power, construction and completion of projects had continued during this period even though new ordering activity fell sharply.

The second approach, of charting revenues of listed industrial goods companies, showed that the only company which saw a steep decline in revenues was an equipment provider for thermal power generation. The rest saw some slowdown in growth for a while, though no drop, and in the last several quarters, the reported sales growth rates have picked up. It is also worth pointing out that nearly a third of the incremental private GFCF between 2012 and 2017 was an investment in Intellectual Property (IP), which grew at a pace of 22 per cent a year. The IP investment, to our understanding, is mainly in software, for example, billing, supply chain or customer management. While it may not mean addition to machinery, its productive utility is significant: In many developed economies, intangible capex now exceeds tangible capex. Sales of construction equipment (like for earth moving during road-building) have picked up, and have stayed strong even though the demand slowed in recent months.

Rising utilisation levels are now triggering new investment plans: this is visible in sectors like steel, power, refineries, airlines and autos. After all, a 7 per cent growth in annual GDP may be lower than what the country aspires for, but over five years it means aggregate demand rises by 40 per cent. While the expansion of airports and new ordering of airplanes is now well known, even steel companies that have a viable balance sheet have already embarked on capacity expansion. India has again become a net importer of steel, as demand now exceeds domestic supply. In coal-based thermal power, where utilisation bottomed two years ago, if annual demand growth sustains at five to six per cent (it should), new capacity would be needed by 2024. Medium-term power tariffs are already at ₹6 per unit, having risen steadily over the last two years from 3.5.

There is no capex surge yet as was seen in the 2010 to 2012 period, possibly because stricter insolvency norms have obviated debt-fuelled adventures, making groups much more cautious in their planning, and also because we are still early in the investment cycle. Even if demand growth was to weaken a bit, the investment revival can continue in our view, but recent problems for Non-Banking Finance Companies (NBFCs) are a worrying prospect. Debt Mutual Funds are now also becoming less of a supplier of credit to the economy. Despite a pickup in bank loan growth, aggregate credit supply is slowing, and the number of business groups struggling for liquidity is rising even though the RBI continues to make record amounts of bond purchases in the open market. This can hurt not just informal (that is, household) capital expenditure, but also the formal sector. For now, though, the capital expenditure driven by competitive intensity as well as due to high utilisations should continue.

The writer is India Strategist and Co-head of Asia Pacific

# The mirage of a global euro

**NEELKANTH MISHRA** 

ne of the great claims made for the euro was that it would rival the US dollar as a second global reserve currency. These hopes have failed to materialise. The euro's importance in global reserves and financial markets today is about the same as it was two decades ago, when the euro replaced the Deutsche Mark and 10 other national currencies.

But hope dies last, and in this spirit the European Commission recently published a Communication

entitled "Towards a stronger international role of the euro" The European (sic). like most Commission, European policymakers, takes it as given that the eurozone would benefit if the euro played a more global role. But that is not necessarily true.

One such benefit supposedly derives from the widespread use of euro banknotes outside the single-currency

area. On this measure at least, the euro has been a big success. Currency in circulation has more than doubled over the last 20 years, both in absolute terms and as a percentage of eurozone GDP, and the total value of euro banknotes in circulation amounts now to Euro 1.2 trillion (\$1.3 billion). Furthermore, it is commonly estimated that a large fraction of euro cash is used outside the eurozone.

DANIEL GROS

But the economics of banknote issuance have changed. Issuance was previously a profitable business for central banks, because they could invest the proceeds in government bonds with a decent yield. With interest rates at 5 per cent, and Euro 1.2 trillion of notes in circulation, the European Central Bank could have generated revenue of about Euro 60 billion a year. Though small compared to the eurozone's

overall GDP of Euro 10 trillion, this sum is equivalent to almost one-half of the EU's budget.

At today's negative interest rates, however, currency issuance is no longer profitable. This might be another reason why the ECB decided to stop issuing the Euro 500 note, which is also much more convenient than the \$100 bill for handling large amounts of black money. Providing a handy vehicle for underground transactions abroad should not be regarded as an advantage of the euro. Another argument for having a glob-

al reserve currency is that foreign borrowing becomes cheaper. This is the "exorbitant privilege" that Valéry Giscard d'Estaing, when he was France's finance minister, famously said the United States enjoyed owing to the dollar's status as the world's main reserve currency. But while issuing dollar-denominated debt is an important advantage for the US (the world's largest debtor), the eurozone is a net creditor. And with real interest rates tending to be higher in dollar terms, it

would be better for the eurozone's external assets to be denominated in dollars than in euro.

Furthermore, the consequences of being a major anchor currency would be particularly problematic for the euro. Fortunately, the countries that peg their currency to the euro have little economic weight. Imagine, for example, that China pegged its currency to the euro instead of to the dollar. The Chinese authorities would then determine the euro's exchange rate against the dollar — the currency of the EU's biggest trading partner and competitor. Being an anchor currency can actually entail a loss of control.

True, there are other reasons why it might be in Europe's interest for the euro to play a larger global role. For example, the extra-territorial application of sanctions by the US makes it extremely difficult for

European companies to maintain trade ties with Iran. because most of Iran's international trade is invoiced and settled in dollars. But the ability of the US to apply sanctions so widely is essentially due to its diplomatic and military power. Even if the euro played a much larger role in global finance, the US would remain dominant in terms of hard power

Having a global reserve currency makes sense for a large economy that is not too exposed to the rest of the world. The US fits the bill. It makes less sense for the somewhat smaller eurozone economy, where trade in goods and services accounts for more than one-quarter of overall GDP. Moreover, the eurozone's share of the global economy has declined from about 25 per cent when the euro was born to 15 per cent

today, and will soon fall below 10 per cent. The relative weight of the US economy will of course also decrease as China and India continue to grow faster. But the dollar will retain its conventional role as the key currency for international trade transactions as long as China limits capital movements to keep control over its domestic economy. The euro, on the other hand, could increase its global role only by slowing the relative decline of the eurozone economy through rapid growth.

But, even assuming that the eurozone's relative decline continues, this would not necessarily mean a fall in living standards. The share of Japan's economy in global GDP has halved over the last 20 years, while living standards there have continued to improve, albeit slowly.

Either way, it is a good thing that early hopes for the euro to become a true global currency have not been realised. The eurozone currently is facing enough economic challenges without the additional burden of issuing a global reserve currency.

The writer is director of the Center for European Policy Studies. ©2019 Project Syndicate.

# The art of 'literary journalism'



SOURADEEP ROY

The latest book on the late Dom Moraes' writings, Dom Moraes: Where Some Things Are Remembered: Profiles and Conversations, carries a blurb by Amitav Ghosh, who declares Moraes the "greatest prose stylist". Superlatives aside, there is a curious phrase in the promotional material supplied by the publisher; it describes the book as a collection of the "finest literary journalism". Whether or not Moraes is the finest, there cannot be a more apt phrase than "literary journalism" to describe the essays collected in this book.

Moraes wrote striking profiles of the people he met but he staked his own identity in those pieces. This is what makes his writing, his journalism, so exquisite. At the end of the book, we realise we've read a profile of Mr Moraes as much as we have read profiles of Indira Gandhi or Lalu Prasad Yadav. This is also the difference between the journalism now — both objective and sensationalist — and the journalism Mr Moraes practised. There is no space for the vulnerability of the reporter in the former, and Mr Moraes' own vulnerability is at the centre of his writing. Saravu Srivatsa, the editor of this book, writes that Mr Moraes had told a journalist that "[H]e was a stranger to the country, was an outsider" while she was "a complete insider" as they were promoting their co-written book Out of God's Oven. Mr Moraes' selffashioning of himself as the outsider is the hallmark of his writing but there is something more than this projection of his personality. He did not simply ask how much he is an outsider to India, but how much of an outsider is India to itself? The portraits of his father, Frank Moraes, and his profile of Jag Prayesh Chandra, explain this.

Frank Moraes was one among the first two Indians to become the assistant editor in the British-owned Times of India. Neither of them were allowed to access the same privileges of "ingestion and excretion": they were not invited to lunches or given keys to the lavatory that the English editors used. But the staff wanted an end to this and the management apologised. "My father never forgot this as long as he lived," writes Moraes fils. When Frank became the Indian editor of the same paper after the British company was sold to the new Indian proprietor, Dalmia, they met for lunch but ate on separate utensils, one earthenware and the other

silver. The former was then broken lest Frank polluted Dalmia's caste. "The incident with Dalmia was another incident he never forgot. It was the first indication he had of what independent India might turn out to be like.'

Mr Moraes turned personal anecdotes about his father into the larger story of transformation from colonial power to independent nation, but one that transformed racial prejudice into caste prejudice. The portraits of those who gain power in the independent nation, from important journalist-proprietors like R P Goenka, or politicians like Indira Gandhi, offer a bleak vision. But in his profile of Jag Pravesh Chandra he saw some hope of a working democracy. Chandra believed that India can only be understood by those who have lived here. This is naive provincialism. "What he meant by Indian did not exclude Muslims or other minorities, but it excluded me. He felt affectionate towards me, but amused: exactly the way I did, the other way around.'

Another quality of Moraes' own writ-

ing is his ability to bring out the tragedy of power and life. The last house that his father lived in as "the only monument left to my father's loneliness"; they met like "furtive lovers, at restaurants or hotels"; Indira Gandhi, having lost the election, is "the small, famous figure in a pastel saree, once ruler of the very dust churned up by these buses". The tragic is never too far away from the comic, and Moraes shines here as well. When Mrs Ali from the Congress explains how great the party has been for her constituency, Badayun Zilla, the details don't hold up. She says, "It is a Muslim village...my parents and grandparents were all born there and they had always done a lot of good work for the village... It is constantly flooded in the monsoon, it has no railway connection, no schools, no industries." The quote ends and Moraes quipped, "I wanted to inquire about the good work her ancestors had done, but forebore." Another striking quality of his writing are his similes, almost always drawn from poetry. Jag Pravesh Chandra is "Whitman's sea captain", he grabs Moraes'

arm "like a cousin of the Ancient Mariner". There is something quintessentially Moraesian about the similes, possible because of his own vocation as a poet.

Describing the room he would meet Indira Gandhi to interview her for her book, he wrote, "I had the strange sense that I was not in the room at all, but an observer peering down a telescope from some chilly star." It is not just a telescope that determines the quality of the observation but the eye that looks through it, and Moraes had the finest journalistic eye, matched in equal measure by his hold

The reviewer is a research scholar at the School of Arts and Aesthetics, JNU, He tweets at ©souradeeprov19.

### DOM MORAES: Where Some Things Are Remembered: **Profiles and Conversations**

Saravu Srivatsa Speaking Tiger; Pages 188; Price: Rs 599